वार्षिक रु. १६०

विशेषांक मूल्य रु. ५०

रामकृष्ण मिशन की १२५वीं वर्षगांठ
के उपलक्ष्य में युवा-विशेषांक

ISSN 2582-0656

विवेक ज्योति

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६१ अंक १ जनवरी २०२३

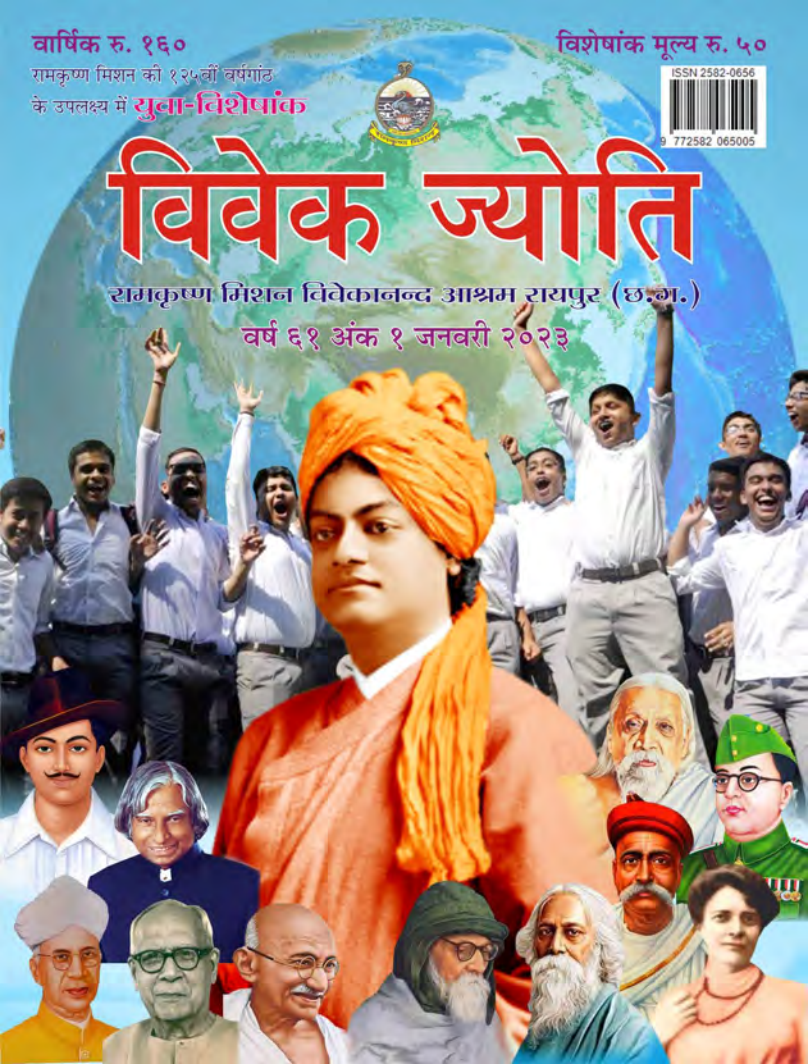

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६१

अंक १

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

युवा विशेषांक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

पौष, सम्वत् २०७९

जनवरी, २०२३

अनुक्रमणिका

* मंगलाचरण (स्तोत्र) ५
* उपनिषद के ऋषि की दृष्टि में युवा ५
* युवा ऐसा हो : विवेकानन्द ६
* सम्पादकीय ७
* युवक विद्रोह क्यों करते हैं? (स्वामी स्मरणानन्द) ९
* स्वामी विवेकानन्द : युवाओं के लिए शाश्वत प्रेरणा (स्वामी गौतमानन्द) १२
* युवा कर्त्तव्यनिष्ठ बनें (स्वामी वागीशानन्द) १६
* हमें चाहिए : एक प्रगतिशील मानव परिवार (स्वामी सुहितानन्द) १७
* स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा और युवाओं का चरित्र-निर्माण (स्वामी सुवीरानन्द) २३
* वेद, उपनिषद् और पुराणों का युवाओं के चरित्र-निर्माण में योगदान (डॉ. सत्येन्दु शर्मा) २९
* युवा शक्ति के प्रेरणा-स्रोत (शरद विवेक सागर) ३३
* हमारे युवा ऋषि-मुनि (डॉ. राघवेन्द्र शर्मा) ३९
* स्वामी विवेकानन्द का युवाओं को शक्ति और निर्भयता का सन्देश (स्वामी दिव्यानन्द) ४३
* विद्यार्थी जीवन ही चरित्र-निर्माण का सर्वाधिक उपयुक्त समय (नवीनीहरण मुखोपाध्याय) ४५
* क्रान्तिकारी नौजवानों के आदर्श : शहीदे-आजम भगतसिंह (अवधेश प्रधान) ४७
* युवाओं के सनातन प्रेरक विवेकानन्द (स्वामी बलभद्रानन्द) ५२
* बालमन के स्वप्न और जेनरेशन गैप (स्नेह सिंघानिया) ५७
* चारित्र्य का बल (स्वामी आत्मानन्द) ५८
* रामराज्य का स्वरूप (प. रामकिंकर उपाध्याय) ५९
* युवा शक्ति के आदर्श : वे दो युवक (स्वामी विमलात्मानन्द) ६२

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : ***०९८२७१ ९७५३५*** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक)
रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

* युवा जीवन में सरस्वती पूजा का महत्त्व (श्रीमती मिताली सिंह) ६७
* (कविता) हिन्द के जवानों का एक सुनहरा ख्वाब है (अशोक भार्गव) ६८
* (कविता) जग में अनुपम स्वर्णिम भारत (आनन्द तिवारी पौराणिक) ६८
* युवाओं के विकास हेतु आवश्यक सद्गुण : आज्ञापालन (स्वामी ज्ञानव्रतानन्द) ६९
* युवा होने का अर्थ (स्वामी संवित् सोमगिरि) ७२
* (कविता) वीर विवेकानन्द विश्वगुरु (ओमप्रकाश वर्मा) ७५
* (कविता) इस महान देश को नया बनाओ रे (बालकवि बैरागी) ७५
* बदलते परिदृश्य में युवाओं का चरित्र-निर्माण (डॉ. कल्पना मिश्रा) ७६
* (कविता) युवा संन्यासी विवेकानन्द (सुमित ओरछा) ७८
* युवावस्था : साधना की सर्वश्रेष्ठ अवस्था (स्वामी ब्रह्मेशानन्द) ७९
* युवकों की प्रेरिका : भगिनी निवेदिता (स्वामी तन्निष्ठानन्द) ८०
* युवाओं को प्रेरित करनेवाली सुभाषचन्द्र बोस की वाणी ८५
* राष्ट्र-निर्माता युवाओं की शिक्षा कैसी हो (प्रो. (डॉ.) शैलेन्द्र कुमार सिंह) ८६
* बनो और बनाओ : यही हमारा मूलमन्त्र रहें (स्वामी नित्यज्ञानानन्द) ९०
* युवाओं में विलक्षण सम्भावनाएँ और उनकी चुनौतियाँ (स्वामी आत्मश्रद्धानन्द) ९२
* युवा-चेतना के विकास में सहायक पत्रकारिता के गुण (नम्रता वर्मा) ९८
* पूर्वोत्तर आदिवासियों की झोपड़ियों से निकल रहा नया भारत (स्वामी नित्यपूर्णानन्द) १००
* शक्तिशाली, संतुलित और सफल युवक कैसे बनें (स्वामी गुणदानन्द) १०२
* अबूझमाड़ के अरण्य से आ रहे विवेकानन्द के युवा (स्वामी कृष्णामृतानन्द) १०५
* माँ मुझे मनुष्य बना दो (स्वामी अलोकानन्द) १०७
* युवावर्ग और सोशल मीडिया की आदत (उत्कर्ष चौबे) १०९
* युवकों के प्रश्न और स्वामी सत्यरूपानन्द जी महाराज के उत्तर १११
* अथ युवा-जिज्ञासा (स्वामी निखिलेश्वरानन्द) ११३
* समाचार और सूचनाएँ ११५

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति १७/–	१६०/-	८००/-	१६००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	५० यू.एस. डॉलर	२५० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिये	२००/–	१०००/–	

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : रायपुर (छत्तीसगढ़)
अकाउण्ट नम्बर : 1 3 8 5 1 1 6 1 2 4
IFSC : CBIN0280804

जनवरी माह के जयन्ती और त्यौहार

०५	स्वामी तुरीयानन्द
१२	राष्ट्रीय युवा दिवस
१४	स्वामी विवेकानन्द
२३	स्वामी ब्रह्मानन्द
२५	स्वामी त्रिगुणातीतानन्द
२६	श्री सरस्वती पूजा, गणतन्त्र दिवस
२८	श्री नर्मदा जयन्ती
२,१८	एकादशी

'vivek jyoti hindi monthly magazine' के नाम से

अब विवेक-ज्योति पत्रिका यू-ट्यूब चैनल पर सुनें

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

रामकृष्ण मिशन की १२५वीं वर्षगाँठ पर युवाओं के सदैव प्रेरणास्रोत रहे स्वामी विवेकानन्द को दर्शाया गया है।

विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना

मनुष्य का उत्थान केवल सकारात्मक विचारों के प्रसार से करना होगा। – स्वामी विवेकानन्द

❖ क्या आप स्वामी विवेकानन्द के स्वप्नों के भारत के नव-निर्माण में योगदान करना चाहते हैं?

❖ क्या आप अनुभव करते हैं कि भारत की कालजयी आध्यात्मिक विरासत, नैतिक आदर्श और महान संस्कृति की युवकों को आवश्यकता है?

✓ यदि हाँ, तो आइए! हमारे भारत के नवनिहाल, भारत के गौरव छात्र-छात्राओं के चारित्रिक-निर्माण और प्रबुद्ध नागरिक बनने में सहायक 'विवेक-ज्योति' को प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने में सहयोग कीजिए। आप प्रत्येक पुस्तकालय में पहुँचाने वाली हमारी इस योजना में सहयोग कर अपने राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। आपका प्रयास हमारे इस महान योजना में सहायक होगा, हम आपके सहयोग की प्रतीक्षा कर रहे हैं –

✍ १. 'विवेक-ज्योति' को विशेषकर भारत के स्कूल, कॉलेज, महाविद्यालय और विश्वविद्यालयों द्वारा युवकों में प्रचारित करने का लक्ष्य है।

✍ २. एक पुस्तकालय हेतु मात्र १८००/- रुपये सहयोग करें, इस योजना में सहयोग-कर्ता के द्वारा सूचित किए गए सामुदायिक ग्रन्थालय, या अन्य पुस्तकालय में १० वर्षों तक 'विवेक-ज्योति' प्रेषित की जायेगी।

✍ ३. यदि सहयोग-कर्ता पुस्तकालय का नाम चयन नहीं कर सकते हैं, तो हम उनकी ओर से पुस्तकालय का चयन कर देंगे। दाता का नाम पुस्तकालय के साथ 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित किया जाएगा। यह योजना केवल भारतीय पुस्तकालयों के लिये है।

❖ आप अपनी सहयोग-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर या एट पार चेक 'रामकृष्ण मिशन' (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम से बनवाकर पत्र के साथ निम्नलिखित पते पर भेज दें, जिसमें 'विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना' हेतु लिखा हो। आप अपनी सहयोग-राशि निम्नलिखित खाते में सीधे जमा कर सकते हैं। आप इसकी सूचना ई-मेल, फोन और एस. एम.एस. द्वारा अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड एवं फोन नम्बर के साथ भेजें।

सेन्ट्रल बैंक ऑफ इन्डिया, अकाउन्ट नम्बर : 1385116124, **IFSC CODE :** CBIN0280804

पता **– व्यवस्थापक, विवेक-ज्योति कार्यालय, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम,**

रायपुर - 492001 (छत्तीसगढ़), दूरभाष – 09827197535, 0771-2225269, 4036959

ई-मेल : vivekjyotirkmraipur@gmail.com, वेबसाइट : www.rkmraipur.org

विवेक-ज्योति स्थायी कोष

'विवेक-ज्योति' पत्रिका स्वामी विवेकानन्द जी की जन्म-शताब्दी वर्ष के शुभ अवसर पर १९६३ ई. में आरम्भ की गई थी। तबसे यह पत्रिका निरन्तर आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और नैतिक विचारों के प्रचार-प्रसार द्वारा समाज को सदाचार, नैतिक और आध्यात्मिक जीवन यापन में सहायता करती चली आ रही है। यह पत्रिका सदा नियमित और सस्ती प्रकाशित होती रहे, इसके लिये विवेक-ज्योति के स्थायी कोष में उदारतापूर्वक दान देकर सहयोग करें। आप अपनी दान-राशि इलेक्ट्रॉनिक मनीआर्डर, ऐट पार चेक या सीधे बैंक के खाते में उपरोक्त निर्देशानुसार भेज सकते हैं। प्राप्त दान-राशि (न्यूनतम रु. १०००/-) सधन्यवाद सूचित की जाएगी और दानदाता का नाम भी पत्रिका में प्रकाशित होगा। रामकृष्ण मिशन को प्रदत्त सभी दान आयकर अधिनियम-१९६१, धारा-८०जी के अन्तर्गत आयकर मुक्त है।

सुदर्शन सोलार...
ऊर्जा अपरंपार !

आधुनिक भारत की बिजली की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमारे पास पर्याप्त मात्रा में सौर ऊर्जा उपलब्ध है। प्राकृतिक रुप से उपलब्ध इस स्त्रोत का प्रतिदिन की अपनी आवश्यकताओं के लिये उपयोग करके, अपने बिजली के बिल में भारी पैमाने पर कटौती कर, हम अपने देश को बिजली के निर्माण में आत्मनिर्भर बनाने में सहायता कर सकते हैं।

इस सुन्दर भूमि को सदा हरी-भरी रखने के लिये अपना साथी

भारत का विश्वसनीय सौर ऊर्जा ब्रांड - 'सुदर्शन सौर' !

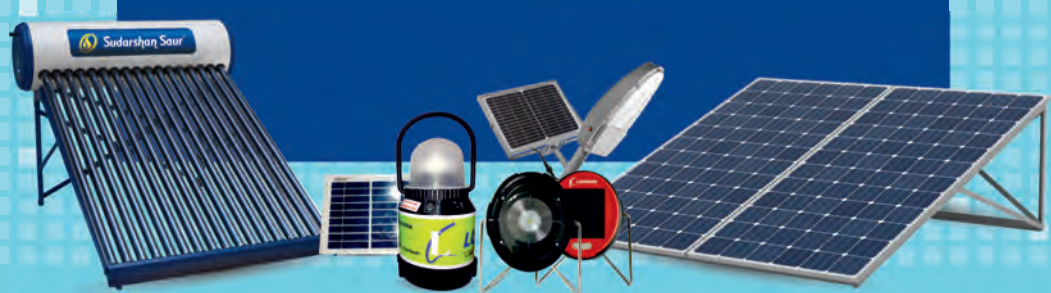

सोलर वॉटर हीटर
24 घंटे गरम पानी के लिए

सोलर लाइटिंग्स
ग्रामीण क्षेत्र में घरेलू उपयोग के लिए

सोलार इलेक्ट्रिसिटी सिस्टम
रुफटॉप सोलार
बिजली उत्पन्न करने के लिए

घर, बंगलोज, हॉस्पिटल्स, हॉटेल्स, इंडस्ट्रीज, कमर्शिअल कॉम्प्लेक्स, इन्स्टिट्यूट्स के लिए उपयुक्त

समझदारी की सोच!

३० साल का प्रदीर्घ अनुभव!

आजीवन सेवा — लाखों संतुष्ट ग्राहक — विस्तृत डीलर नेटवर्क

Sudarshan Saur®

www.sudarshansaur.com

Toll Free
1800 233 4545

E-mail: office@sudarshansaur.com

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६१ **जनवरी २०२३** **अंक १**

स्वामी विवेकानन्द-स्तोत्रम्

यतिसंघ-प्रतिष्ठाता तच्छिरोमणिसत्तमः।
रामकृष्णमहाशिष्यो नेता भुवि नरोत्तमः।।
त्वमेव हि नमस्तुभ्यं विवेकानन्दाय ते नमः।।१।।
दिगन्त-व्याप्त-सत्कीर्तिः राष्ट्रोद्धारकमण्डनः।
'महाराजःगुरु'र्दण्डी भारतोत्कर्षसाधनः।।
त्वमेव हि नमस्तुभ्यं विवेकानन्दाय ते नमः।।२।।

– संन्यासी संघ के संस्थापक, उस संघ के शिरोमणि सदृश श्रेष्ठ संन्यासी, श्रीरामकृष्ण के महान शिष्य, इस संसार के नेता और सर्वश्रेष्ठ मानव तुम्हीं हो। सबके प्रणम्य हे विवेकानन्द ! तुमको नमस्कार है।

जिनकी शुभ कीर्ति दिगन्त में प्रसारित है, जो राष्ट्र के श्रेष्ठ उद्धारक हैं एवं राजन्य वर्ग के भी गुरु हैं, दण्डधारी रूप में जिन्होंने भारत के कल्याण के लिये समग्र पृथ्वी पर परिभ्रमण किया है, वह तुम्हीं हो। सबके प्रणम्य हे विवेकानन्द ! तुमको नमस्कार है।

उपनिषद के ऋषि की दृष्टि में युवा

युवा स्यात्साधुयुवाध्यायक
आशिष्ठो, द्रढिष्ठो बलिष्ठस्तस्येयं
पृथिवी सर्वा वित्तस्य पूर्णा स्यात्।
(तैत्तिरीयोपनिषद् ८/१)

– युवा साधु-स्वभाव का सज्जन हो। शास्त्रों का अध्येता हो, सुशिक्षित हो। आशावादी हो। अत्यन्त आशावान हो, जीवन में आशावादी हो। कभी भी, किसी भी परिस्थिति में निराश न हो। अत्यन्त दृढ़, सुदृढ़ हो और बलवान हो।

युवा ऐसा हो : विवेकानन्द

मेरा विश्वास युवा पीढ़ा-नयी पीढ़ी में है। मेरे कार्यकर्ता उन्हीं में से आएँगे और वे सिंहों की भाँति सभी समस्याओं के लिए हल निकालेंगे।

मेरे वीर–हृदय युवको !... अन्य किसी बात की आवश्यकता नहीं, आवश्यकता है, तो केवल प्रेम, निश्छलता और धैर्य की। जीवन का अर्थ ही वृद्धि-विस्तार यानी प्रेम है। अतः प्रेम ही जीवन है, यही जीवन का एकमात्र नियम है और स्वार्थपरता ही मृत्यु है। इस लोक तथा परलोक में भी यही बात सत्य है। परोपकार ही जीवन है, परोपकार न करना ही मृत्यु। ... मेरे बच्चो, जिसमें प्रेम नहीं है, वह जी भी नहीं सकता। सबके लिए तुम्हारे हृदय में दर्द हो – गरीब, अपढ़ तथा पददलितों के दुख का अनुभव करो, तब तक अनुभव करो, जब तक कि तुम्हारे हृदय की धड़कन न रुक जाए, मस्तिष्क न चकराने लगे और तुम्हें ऐसा प्रतीत न होने लगे कि तुम पागल हो जाओगे।इसके बाद अपना हृदय खोलकर ईश्वर के चरणों में रख दो, तब तुम्हें शक्ति, सहायता और अदम्य उत्साह की प्राप्ति होगी।

पिछले दस वर्षों से मैं अपना मूलमंत्र घोषित करता आया हूँ – संघर्ष करते रहो और अब भी कहता हूँ – सतत संघर्ष करते चलो। डरो मत, मेरे बच्चो ! अनन्त नक्षत्रखचित आकाश की ओर भयभीत दृष्टि से ऐसे मत देखो, मानो वह हमें कुचल ही डालेगा। धीरज रखो। देखोगे कि कुछ ही घण्टों में वह पूरा-का-पूरा तुम्हारे पैरों तले आ गया है। धैर्य रखो। न धन से काम होता है, न नाम से न यश काम आता है, न विद्या, प्रेम से ही सब कुछ होता है। चरित्र ही कठिनाईयों की संगीन दीवारें तोड़कर अपना रास्ता बना सकता है।

देशभक्त बनो – जिस देश ने अतीत में हमारे लिए इतने बड़े-बड़े काम किये हैं, उसे प्राणों से अधिक प्यारा समझो। हे स्वदेशवासियो ! मैं संसार के अन्यान्य राष्ट्रों के साथ अपने राष्ट्र की जितनी ही अधिक तुलना करता हूँ, उतना ही अधिक तुम लोगों के प्रति मेरा प्रेम बढ़ता जाता है। तुम लोग शुद्ध, शान्त और सत्स्वभाव हो।

यह एक बड़ा सत्य है कि बल ही जीवन है और दुर्बलता ही मरण। बल ही अनन्त सुख है, अमर और शाश्वत जीवन है, और दुर्बलता ही मृत्यु।

एक विचार लो, उसी विचार को अपना जीवन बनाओ – उसी का चिन्तन करो, उसी का स्वप्न देखो और उसी में जीवन बिताओ। तुम्हारा मस्तिष्क, स्नायु, शरीर के सर्वांग उसी के विचार से पूर्ण रहें। दूसरे सारे विचार छोड़ दो। यही सिद्ध होने का उपाय है और इसी उपाय से बड़े-बड़े धर्मवीरों की उत्पत्ति हुई है।

'कुछ भी नष्ट मत करो' – सर्वप्रथम मैं मनुष्य जाति से यह उक्ति स्वीकार कर लेने का अनुरोध करता हूँ। मूर्ति–भंजक सुधारक लोग संसार का कोई उपकार नहीं कर सकते। किसी वस्तु को तोड़कर धूल में मत मिलाओ, वरन् उसका गठन करो। यदि हो सके, तो सहायता करो। यदि सहायता नहीं कर सकते, तो हानि मत पहुँचाओ।... जो जहाँ पर है, उसे वहीं से उठाने की चेष्टा करो।

आज हमें आवश्यकता है – वेदान्तयुक्त पाश्चात्य विज्ञान की, ब्रह्मचर्य के आदर्श और श्रद्धा तथा आत्मविश्वास की। ... विदेशी नियन्त्रण को हटाकर हमारे विविध शास्त्रों, विद्याओं का अध्ययन हो और साथ-ही-साथ अंग्रेजी भाषा और पाश्चात्य विज्ञान भी सीखा जाए। हमें उद्योग-धन्धों की उन्नति के लिये यांत्रिक-शिक्षा भी प्राप्त करनी होगी, जिससे देश के युवक नौकरी ढूँढने के बजाय अपनी आजीविका के लिए समुचित धनोपार्जन भी कर सकें।

तेजस्वी युवकों का एक दल गठित करो और उसे अपनी उत्साह की अग्नि से प्रज्वलित कर दो। क्रमशः इसकी परिधि का विस्तार करते हुए इस संघ को बढ़ाते रहो।

सम्पादकीय

स्वामी विवेकानन्द की सर्वाधिक प्रिय और विश्वासी युवा शक्ति का आह्वान

युवा विशेषांक के सम्बन्ध में कुछ बातें

गत वर्ष मई, २०२२ में वैश्विक आध्यात्मिक संस्थान रामकृष्ण मिशन की १२५वीं वर्षगाँठ रामकृष्ण मिशन के केन्द्रों द्वारा सोल्लास मनायी गयी। इस उपलक्ष्य में बहुत से कार्यक्रम आयोजित किये गये। गत वर्ष १५ अगस्त, २०२२ तक भारतीय स्वतन्त्रता की ७५वीं वर्षगाँठ को 'अमृत महोत्सव' के रूप में सम्पूर्ण भारत में मनाया गया। रामकृष्ण मिशन के सभी केन्द्रों ने इस अमृत महोत्सव के उपलक्ष्य में विभिन्न कार्यक्रम, व्याख्यान, प्रतियोगिताएँ आदि आयोजित किये। भारतीय स्वतन्त्रता के प्रबल पक्षधर, वैचारिक क्रान्ति के पुरोधा, स्वतन्त्रता के नायक स्वामी विवेकानन्द के योगदान पर सर्वत्र चर्चा हुई। भारतवासियों को स्वतन्त्र करने, सुख-शान्ति-समृद्धिसम्पन्न करने के लिये भारतवासियों में शिक्षा, स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना हेतु स्वामीजी के द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशन, जो १२५ वर्षों से अपने युगनायक युगाचार्य स्वामीजी के आदर्शों पर संचालित हो रहा है, वह उनके स्वप्नों के नवीन-राष्ट्र-निर्माण को साकार करने में प्रयासरत है। लेकिन स्वामीजी का सबसे प्रिय विश्वसनीय युवा-वर्ग अपने उद्देश्यों, लक्ष्यों के प्रति स्पष्ट और जागरूक प्रतीत नहीं होता। यदि ऐसा नहीं होता, तो आज सौ वर्ष बाद भी देश में बहुत सी विसंगतियाँ दृष्टिगोचर नहीं होतीं। सभी युवक नहीं, किन्तु कुछ युवा-वर्ग दिगभ्रमित हो रहा है। भारतीय युवाओं ने विश्व में विभिन्न विधाओं में अपनी योग्यता और कर्मठता के बल पर भारत के गौरव-ध्वज को ऊँचा लहराया है।

लेकिन अभी भी अधिकांश युवक अपने लक्ष्य, कर्तव्य, अधिकार और जीवन में प्राथमिकता को लेकर भ्रमित हैं। वे आज के डिजिटल इंटरनेट, वाट्सअप, इस्टाग्राम और फेसबुक के युग में जीवन के मुख्य लक्ष्य से पृथक् वस्तुओं को देखने-सुनने और शेयर, प्रसार करने में लगे रहते हैं। किसी तरह डिग्री प्राप्त कर लेने से उस विषय में दक्षता नहीं आती। वे जीविका प्राप्ति की प्रतियोगिता में पीछे हो जाते हैं और उसके बाद परिवार और सरकार को कोसने में लगे रहते हैं। इसके अतिरिक्त मानवीय सद्गुण, परोपकार, सेवा, करुणा, सद्भावना, नैतिकता, आध्यात्मिक शक्ति और आनन्द से मीलों दूर रहकर हताश हो जाते हैं।

आज का डिजिटल युग युवा-वर्ग के सर्वांगीण चरित्र निर्माण में चुनौती बनकर खड़ा है। एक ओर यह जीविका और शिक्षा में सहयोगी बनकर जीवन का अपरिहार्य अंग बन गया है, तो दूसरी ओर उसने युवकों को मानवीय प्रेम, सौहार्द्र, भ्रातृत्व, पारिवारिक स्नेह-प्रेम और राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों के प्रति प्रमादी, आलसी और कर्त्तव्यहीन बना दिया है। प्रमाद और कर्तव्यहीनता इतनी कि एक संस्था का कर्मचारी अपने वृद्ध स्वामी को दवा देते समय एक हाथ से दवा देता है, तो दूसरे हाथ से मोबाइल पर वीडिओ देख रहा होता है। मुँह में एक हाथ से चम्मच से खाना खिला रहा है, तो दूसरे हाथ में वाट्सअप देखता रहता है, एक हाथ से झाड़ू लगा रहा है, तो दूसरे हाथ से मोबाइल पर वीडियो देखता रहता है। इस प्रकार की चंचल अर्द्धविक्षिप्त मानसिकता में किसी भी कार्य की गुणवत्ता और सुसम्पन्नता की कभी आशा नहीं की जा सकती। यह प्रमाद और कर्तव्यहीनता की पराकाष्ठा है, जिसका वह बोध नहीं कर रहा है और यह प्रमाद उसके जीवन को एक दिन घोर निराशा के गर्त में डूबा देगा। यहाँ तक कि कुछ युवा हताश और विषादग्रस्त हो अपराधी बनकर दूसरों के लिये दुख का कारण बन रहे हैं और अन्त में जेल की शृंखलाओं में कष्ट भोग रहे हैं तथा कुछ आत्महत्या भी कर लेते हैं। राष्ट्र की सर्वाधिक मूल्यवान शक्ति युवावर्ग की ऐसी दुर्दशा सभी राष्ट्रहितैषी चिन्तक और मानवीय संवेदनायुक्त व्यक्ति को व्यथित करती रहती है। अत: **स्वामी विवेकानन्द के सर्वाधिक प्रिय युवकों को उनके लक्ष्य, कर्तव्य उनकी शक्ति का बोध कराने, उनके चरित्र-निर्माण में सहायक उपकरणों से उन्हें अवगत कराकर मार्ग-दर्शन करने हेतु इस युवा विशेषांक का प्रकाशन है।**

दिल्ली में दक्षिण एशिया युवा शिविर में राष्ट्रीय युवा योजना के संस्थापक डॉ. एस.एन. सुब्बाराव (भाईजी) ने कहा था, भारत की स्वतन्त्रता के बाद भारत से प्रेरणा प्राप्त कर बहुत से देश स्वतन्त्र हुये। अब विश्व की दृष्टि भारत की ओर है कि भारत सुख-समृद्धि और शान्ति-सद्भाव

का भी मार्ग-दर्शन करेगा। सचमुच आज विश्व भारत की ओर टकटकी लगाकर देख रहा है – भारत के युवा पीढ़ी की ओर आशा की दृष्टि से देख रहा है। इसीलिए भारतीय युवकों का जीवन-चरित्र केवल स्वदेशहित के लिए ही नहीं, अपितु विश्वहित के लिये भी है, उन पर यह महान दायित्व है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में कहा गया है – **...स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्याः सर्वमानवाः** – इस देशवासियों का परम कर्तव्य है वे अपने-अपने चरित्र से पृथ्वी के समस्त मानव को शिक्षा प्रदान करें। इसलिए युवकों का चरित्र-निर्माण परम आवश्यक है।

इस अंक में चरित्र-निर्माण के विभिन्न पक्षों पर अनुभवी संन्यासियों और विद्वानों के लेख दिये गये हैं, जिससे युवा चरित्र-निर्माण के विविध पक्षों को जानकर अपने जीवन में उसका यथासमय यथाशक्ति उपयोग कर सकें और स्वामीजी द्वारा अपेक्षित चरित्र का निर्माण कर सकें।

भारतीय युवकों को मिली है गौरवशाली विरासत

भारत प्राचीन काल से सम्पूर्ण विश्व को आध्यात्मिक शान्ति और आनन्द का उन्मुक्तहस्त हो वितरण करता रहा है। इसकी मिट्टी में सभी क्षेत्रों में उच्चतम शिखर पर पहुँचे हुये महान पुरुषों ने जन्म लिया है। यह अवतारों, ऋषियों, आचार्यों की भूमि है। प्राचीन काल में श्वेतकेतु, नचिकेता, आरुणि याज्ञवल्क्य, कपिल, कणाद, धनवन्तरि, गार्गी, मैत्रेयी आदि ऋषि-ऋषिकाएँ, शंकराचार्य, महाराणा प्रताप, शिवाजी, विवेकानन्द, अरविन्द, सुभाष, गाँधी, आजाद, भगत सिंह, रानी लक्ष्मीबाई, सावरकर, सरदार पटेल, लालबहादुर शास्त्री, राजेन्द्र प्रसाद, जयप्रकाश नारायण, अब्दुल कलाम आदि जैसी महान विभूतियों, प्रजा-सेवकों, क्रान्तिकारियों, समाजसेवकों और राजनेताओं की उर्वरा पावन जन्मभूमि रही है। अतः युवक इस गौरवशाली विरासत से गौरवान्वित होकर अपने उच्चतम लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

आधुनिक भारत की ओजस्वी युवाशक्ति

आज कर्मठता, विश्वसनीयता, दक्षता और कार्यकुशलता के कारण विश्व में सर्वत्र भारतीय युवाओं की माँग है। विश्व के विभिन्न भागों में ये अपने कार्यों और व्यवहार के द्वारा भारत के गौरव को संवर्धित कर रहे हैं।

आज भारतवासी भौगोलिक, वैचारिक, शारीरिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से सच्ची स्वतन्त्रता का बोध कर रहे हैं। इन सबके संरक्षण में हमारी युवा-शक्ति की महती भूमिका है। नये-नये आविष्कारों और अनुसन्धानों में युवा अग्रणी हो रहे हैं, नये ढंग से सोच रहे हैं, वैज्ञानिक पद्धति से चिन्तन कर रहे हैं, जिसकी सूचनाएँ भी अखबारों, दूरदर्शन और सोशन मिडिया से मिलती रहती हैं। किन्तु प्रतिदिन अखबारों और मीडिया द्वारा ज्ञात होता है कि हिंसा, कदाचार, भ्रष्टाचार, लूट, हत्या, धोखाधड़ी, नशा, निराशा-हताशा और आत्महत्या में युवकों की संलग्नता मिल रही है। युवकों की प्रतिभा और शक्ति का ऐसा दुरुपयोग सभी सच्चे राष्ट्रभक्त और प्रबुद्ध नागरिक के हृदय को व्यथित करता है। अतः युवा वर्ग को अपने जीवन के लक्ष्य को स्पष्ट रूप से समझना चाहिये और सोशल मिडिया आदि पर उपलब्ध लक्ष्य प्राप्ति में सहायक सामग्रियों का ही चयन करना चाहिये, जिससे उनका समय, ऊर्जा और शक्ति का संरक्षण होकर पूरी शक्ति लक्ष्य पर ही केन्द्रित हो सके।

रामकृष्ण मिशन युवा प्रकल्प

भारत में कई छोटी-बड़ी संस्थायें हैं, जो युवाओं के व्यक्तित्व-विकास और चरित्र-निर्माण हेतु प्रयासरत हैं। रामकृष्ण मिशन प्रारम्भ से ही इस प्रकल्प में संलग्न है। कुछ वर्ष पहले रामकृष्ण मिशन के मुख्य कार्यालय में स्वतन्त्र 'यूथ सेल' का निर्माण किया गया, जिसमें मिशन के सभी केन्द्रों में युवाओं हेतु विशेष कार्यक्रमों का प्रावधान किया गया है। इस प्रकार रामकृष्ण मिशन युवा-शिविर में प्रार्थना, भजन, ध्यान, स्वाध्याय, सच्चिन्तन, बौद्धिक चर्चा, केरियर कौंसीलिंग आदि सत्परामर्श के द्वारा युवकों के चरित्र-निर्माण के लिये प्रयासरत है।

भारत सरकार की योजनाएँ

भारत सरकार ने स्वामीजी के नाम पर कई युवा योजनाएँ प्रारम्भ की हैं, जैसे – स्वामी विवेकानन्द युवा सशक्तिकरण योजना–उत्तर प्रदेश, स्वामी विवेकानन्द असम युवा अधिकारिता योजना–असम, स्वामी विवेकानन्द युवा शक्ति योजना–कर्नाटक, आदि। इसके अतिरिक्त भी युवा योजनाएँ हैं, जिनके माध्यम से युवा लाभान्वित हो रहे हैं।

अतः युवक अपनी शक्ति को पहचानें, भव्य चरित्र-निर्माण करें और अपनी शक्ति का आत्मविकास और राष्ट्र के विकास में सदुपयोग कर इतिहास के पन्नों पर स्वर्णाक्षरों में अपना नाम अंकित करें। ○○○

युवक विद्रोह क्यों करते हैं?

स्वामी स्मरणानन्द

परमाध्यक्ष

रामकृष्ण मठ और मिशन, बेलूड़ मठ, हावड़ा

वर्तमान समय में विद्यार्थी क्रान्ति की स्थिति में हैं। युवाओं में आजकल अज्ञात की खोज, अज्ञात को खोजने की प्रवृत्ति, वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक स्थिति के प्रति विक्षोभ विद्रोह का कारण है। विद्यार्थियों के इस विद्रोह की जो भर्त्सना करते हैं, उनमें प्राय: ऐसे रूढ़िवादी हैं, जिनमें समय के साथ परिवर्तन नहीं आया, जो विश्व के बदलते परिदृश्य के साथ तारतम्य स्थापित करने में असफल रहे हैं। वहीं इस सर्वविदित सत्य की पुनरावृत्ति उपयुक्त होगी कि मानव-मन व्यष्टि और समष्टि दोनों बिना परिवर्तन के स्थिर नहीं हो सकता, ठीक ऐसे ही जैसे हमारे चारों ओर व्याप्त ब्रह्माण्ड निरन्तर गतिशील है। पुरानी व्यवस्था परिवर्तित होकर नयी चेतना का सर्जन करती है, यह एक सत्य कथन है। परिवर्तन वांछनीय है अथवा नहीं, वह उत्थान की ओर ले जानेवाला है अथवा पतन की ओर, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है। समस्या का व्यावहारिक समाधान तभी सम्भव है, जब इस तथ्य को समझ-बूझकर परिवर्तन किया जाये। अगर पुरानी व्यवस्था परिवर्तन को अवरुद्ध करने का प्रयास करेगी, तो परिवर्तन कष्टकारी होगा, अन्यथा परिवर्तन सहजता से ही हो जायेगा।

विद्यार्थी वर्तमान वस्तुस्थिति से असन्तुष्ट है। वह उससे उन्मुक्त हो नये क्षितिज खोलना चाहता है। वह नये क्षितिज की ओर अग्रसर होना चाहता है। नयी पीढ़ी की परिवर्तन की इस खोज की विशेषता उसकी सर्वभौमिकता, सर्वव्यापकता है। विद्यार्थियों का विक्षोभ किसी एक राष्ट्र तक सीमित एकाकी घटना नहीं है। यह विभिन्न शब्दों में भिन्न-भिन्न रूपों में अभिव्यक्त हुआ है, जब तक उसे तानाशाही शासन द्वारा बलपूर्वक दमन न किया गया हो। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि यह एक राजनैतिक अभिव्यक्ति है। राजनीति मनुष्य-जीवन का एक आयाम है, परन्तु वर्तमान परमाणु युग में शासन सर्वशक्तिशाली दैत्य का रूप धारण करते हुए मनुष्य-जीवन के सभी आयामों को नियन्त्रित करना चाहता है। अगर विद्यार्थी राजनीति में रुचि रखता है, तो वह इसलिए कि वह राजनीति को एक ऐसे उपकरण के रूप में देखता है, जिसमें इसके भविष्य को नियन्त्रित करने की क्षमता है। यह ठीक इसी प्रकार है, जैसे मनुष्य सम्पत्ति का अर्जन इसलिए करना चाहता है, क्योंकि इसे वह अपनी अन्य कामनाओं की पूर्ति के साधन के रूप में देखता है।

छात्र-विद्रोह का एक पक्ष यह कि समाज में समानता लाने में उसकी बढ़ती जागरूकता भी है। मनुष्य समानता एवं सार्वभौमिकता की खोज करता हुआ विकास के क्रम में बहुत अग्रसर हो चुका है, जो न केवल एक खोज वरन् एकत्व के प्रति उसकी तीव्र इच्छा को परिलक्षित करता है। यह तीव्र इच्छा मध्यकालीन सामन्तवादी जमींदारों के ठीक विपरीत है, जहाँ दूसरों के प्रति उपेक्षा की पराकाष्ठा थी।

हम सामूहिक चिन्तन के युग में हैं। हम लोग उन विचार-तरंगों से अछूते नहीं रह सकते, जो विश्व को एक नवीन आकार प्रदान कर रही हैं। संकुचित होते इस विश्व में यह अपरिहार्य है। मनुष्य अवश्य ही एक विचारशील प्राणी है, परन्तु इस विचारशीलता का रचनात्मक क्रियान्वयन कुछ विरले लोगों में ही परिलक्षित होता है। परन्तु जब कुछ लोग सकारात्मक शुभारम्भ करते हैं, तब अन्य लोग भी उसमें सम्मिलित होकर उनके विचारों को नवीन आयाम प्रदान करते हैं।

किसी विद्रोही छात्र से यदि व्यक्तिगत रूप से उसके विद्रोह का कारण पूछा जाये, तो सम्भव है कि वह उसका स्पष्ट व सटीक उत्तर देने में समक्ष न हो। वह केवल सामूहिक माँगों में अपनी आवाज जोड़ देता है। परन्तु इसके बाद भी सामूहिक चिन्तन में इतनी शक्ति होती है कि उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। यह बुद्धिजीवियों एवं चिन्तकों को गहराई में जाकर विद्रोह के कारण पर विश्लेषण करने को प्रेरित करती है।

इस विद्रोह को बुरा मानकर उनकी आलोचना करना व्यर्थ है, क्योंकि केवल आलोचनायें इस विद्रोह को रोकने में सक्षम नहीं हैं। पुराने शिक्षाशास्त्री प्राय: इस बात से दुविधाग्रस्त एवं भ्रमित हैं कि उनके सभी उपदेश छात्रों के विद्रोही मन को शान्त करने में अक्षम हैं, क्योंकि वे इस बात को समझने में असमर्थ हैं कि छात्रों में अन्तर्निहित प्रबल इच्छाएँ इस विद्रोह की कारण हैं। युवा जो अपने जीवन की सीमा-रेखा पर खड़ा है, वह उन प्रश्नों के उत्तर चाहता है, जो उसे अपने पूर्वजों से उपहार में प्राप्त हुए हैं। वह जानता है कि पुरानी पीढ़ी इन समस्याओं का समाधान देने में असमर्थ है, क्योंकि यह विद्रोह तब किया गया था, जब वे युवा थे। यह अवश्यम्भावी है कि वर्तमान रूप में एक समस्या का समाधान किसी अन्य समस्या का सर्जन करेगा। परन्तु युवाओं को, छात्रों को इस तथ्य को भी याद रखने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वे कोई दार्शनिक नहीं हैं, वे तो परिणाम चाहते हैं। अत: युवा-वर्ग को एक नवीन संसार को खोजने की आवश्यकता है। जहाँ पुराने मूल्य नवीन अर्थ में प्राप्त हों अथवा उनके स्थान पर नये मूल्य स्थापित हों।

नवीन मूल्यों की खोज में किशोर सदैव मौलिक विचारों का आश्रय नहीं लेते, वे अनुकरण करते हैं। अवश्य ही कुछ विचार उन्हें आकर्षित करते हैं और कुछ से वे घृणा करते हैं। वे स्वतन्त्रता चाहते हैं कि वे उन मूल्यों को आचरण में ला सकें, जो उन्हें आकर्षित करते हैं और जिससे उन्हें घृणा है, उसका त्याग कर सकें। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है, स्वयं को आकर्षित करनेवाले मूल्यों को युक्तिसंगत सिद्ध करने का प्रयास करता है। वह अमुक कार्य इसलिए करता है कि वह कार्य सबके हित में योगदान देता है। वह लगभग इसी तरह सोचता है और उसकी इस सोच को अनुचित कहना व्यर्थ है। वह उसके पक्ष में दृढ़ता से खड़ा रहेगा, क्योंकि वह उन मूल्यों का अनुसरण केवल इसलिए नहीं कर रहा कि ऐसा किसी अमुक व्यक्ति ने कहा है, वरन् स्वत: स्वाधीन होकर उस निष्कर्ष पर पहुँचा है। उसे इस बात का विश्वास दिलाना कठिन है कि वह जीवन के विभिन्न पहलुओं से अवगत होने पर वह स्वत: अपनी विचारधारा परिवर्तित कर लेगा। यह सम्भव नहीं है, कदापि नहीं। क्योंकि उसकी धारणाएँ, उसके विचार चिरकाल के लिए गठित हो चुके हैं। अपने निष्कर्षों के पक्ष में दृढ़तापूर्वक खड़े रहने का यह भाव, उसकी नव अर्जित स्वतन्त्रता से प्रस्फुटित होता है। वह अब एक बालक नहीं है, जिसे करणीय और अकरणीय हेतु निर्देशित किया जाए, वह स्वयं अपना मार्ग चुन सकता है।

ऐसी उद्वेलित मन:स्थिति में छात्रों को उपदेशित करना और उन्हें अनुशासन की बेड़ियों में बाँधने के प्रयास कभी सफल नहीं होंगे। आवश्यकता है उन्हें युक्तिसंगत तर्कों द्वारा सन्तुष्ट करने की। ऐसा नहीं है कि प्रत्येक छात्र को व्यक्तिगत रूप से समझाया जाये। हाँ, यदि ऐसा सम्भव हो पाता, तो नि:सन्देह यह बेहतर होता। परन्तु प्रत्येक दल के प्रतिनिधि का एक प्रकार होता है, जो एक प्रकार की विचारधारा को परिलक्षित करता है। ऐसे दलों के प्रतिनिधियों का विश्वास प्राप्त करने की आवश्यकता है।

नि:संदेह उपरोक्त प्रक्रिया का पालन वर्तमान विश्व परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त दुष्कर है। जहाँ अकारण टकराव की स्थिति बनी है। जहाँ विश्व की विभिन्न संस्कृतियाँ, विचारधारायें एवं अर्थव्यवस्था की विशेषतायें मिलकर एकरूपता की ओर अग्रसर हैं।

परन्तु बाह्य सक्रियता यदि गहन चिन्तन, आन्तरिक सक्रियता पर आधारित नहीं है, तो वह तर्कहीन एवं विध्वंसकारी रूप धारण कर लेती है। यह आवश्यक है, प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से उसके उत्तरदायित्व पालने की अपेक्षा रखने से पूर्व अपने उत्तरदायित्व का निर्वहण करे। अधिकारों की माँग करने से पहले स्वयं उत्तरदायित्व का पालन करे। समतावादी आदर्श एवं पूर्ण स्वतन्त्रता का सहवर्ती होना केवल तभी सम्भव है, जब प्रत्येक व्यक्ति समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व का पूर्णत: पालन करेगा।

मनुष्य का सम्यक् शारीरिक विकास हो चुका है। अब आवश्यकता है बौद्धिक एवं आध्यात्मिक रूप से विकसित होने की। समाज के प्रति अपने दायित्व का पालन इस विकास क्रम में पहला कदम है। विश्व के युवाओं को यह समझाना होगा और उनको इस बात का बोध करवाना होगा कि वे अपने स्वामी स्वयं तभी बन सकते हैं, जब वे अपने उत्तरदायित्वों को समझें। केवल अपने तर्कहीन आग्रहों के पूर्ति में लीन न रहें।

प्रश्न यह है कि क्या हम छात्रों को ऐसे मूल्य प्रदान कर सकते हैं, जो न केवल समय और परिस्थितियों की कसौटी पर खरे उतर सकें, वरन् नवीन युग की अपेक्षाओं के अनुरूप ढाले भी जा सकें। क्या ये मूल्य उनकी आकांक्षाओं

को संतुष्ट कर सकते हैं? उनकी नव अर्जित अवधारणा को, समानता और सर्वभौमिकता की खोज एवं मानवीय संवेदना से परिपूर्ण समाज की कामना को सन्तुष्ट कर सकते हैं? क्या समतावाद एवं पूर्ण स्वतंत्रता की कामना सहवर्ती हो सकती है? क्या ऐसा समाज सम्भव है, जहाँ ये दोनों आदर्श संयुक्त हो सकते हैं? छात्रों की इन्हीं समस्याओं के समाधान हेतु वेदान्त और स्वामी विवेकानन्द प्रासंगिक हैं। **छात्र ऐसे किसी भी व्यक्ति से नहीं सीखना चाहेगा, जो उसका आदर्श न हो। वह चाहेगा कि उसके शिक्षक की आयु जो भी हो, पर उसके विचार उन्हीं की तरह युवा हों।**

स्वामीजी का पैतृक आवास, कोलकाता

स्वामी विवेकानन्द का देहान्त युवा अवस्था में हुआ। उन्होंने अपना चालीसवाँ वर्ष नहीं देखा। उनका सम्पूर्ण कार्य मात्र १० वर्ष के अन्तराल में पूर्ण हुआ। वह विश्व को युवा-नेत्रों से देखते थे, एक साहसी युवा जो जीवन को समझना चाहता हो, प्रतिक्रिया करता हो और अपने अनुसन्धान के आधार पर विश्व को एक नवीन आकार दे सके। उनकी अपेक्षा युवाओं से थी, जो भारत के पुनरुत्थान के लिए कटिबद्ध हो। उन्होंने युवाओं का आह्वान किया। वे स्वयं युवा शक्ति से परिपूर्ण थे एवं उन्होंने अपने चरित्र एवं विचारों से सबको प्रभावित किया। यह आश्चर्यजनक बात है कि अधिकांश उनके आलोचक प्रौढ़ थे। वे जहाँ भी जाते, युवा उनका अत्यधिक सम्मान करते।

स्वामीजी का युवावस्था में ही देहात्याग होने का आज विशेष महत्त्व है। इसके कारण उनका जीवन एवं संदेश आज भी हमलोगों के लिये युवा है। यह स्वामीजी के प्रति आकर्षण और उनके वर्तमान युग में भी प्रासंगिक होने का भी एक कारण है। इसके अतिरिक्त अन्य बहुत से कार्यों का योगदान है। स्वामी विवेकानन्द का जीवन शाश्वत मूल्यों पर आधारित था। भारतीय हो या पाश्चात्य; स्वामीजी चाहते थे कि इन मूल्यों की अभिव्यक्ति हमारे दैनन्दिन जीवन में हो। वे गुफाओं और जंगलों तक सीमित वेदान्त को घरों और बाजारों तक लाना चाहते थे।

प्रश्न यह है कि वेदान्तिक मूल्य युवा छात्रों की इच्छाओं और महत्त्वाकांक्षाओं को सन्तुष्ट कर सकता है या नहीं, जिनकी निश्चियात्मकता, समानता और स्वतन्त्रता की आकांक्षाओं ने एक तर्कहीन और विद्रोह का रूप ले लिया है? क्रान्ति स्वयं में प्रशंसनीय नहीं है, जब तक कि उसका ध्येय विकास नहीं है। विकास – यहाँ विकास केवल शाब्दिक अर्थ की संकुचित सीमा में नहीं, अपितु जीवन एवं विचार के हर क्षेत्र में क्रमिक विकास से है।

स्वामीजी ने प्राचीन मूल्यों, आदर्शों को युवाओं के समक्ष रखा, जो भविष्योन्मुख थे, एक ऐसे साँचे के रूप में जिसमें असन्तोष एवं महत्त्वकांक्षाओं को ढाला जा सके और यह मूल्य हर युग के लिए हितकारी है, महत्त्वपूर्ण है।

युवावर्ग को भारत के पुनरुत्थान को स्वामीजी के आदर्शों के आलोक में देखना होगा। जो कुछ भी प्राचीन हो उसका प्रतिकार करना तथा उसे व्यर्थ समझकर नकार देने की हमारी प्रकृति को रोकना होगा, क्योंकि हमसे इतिहास को अलग करना, ठीक वैसे ही सम्भव नहीं है, जैसे अपने सिर को शरीर से अलग करना। प्राचीन मूल्यों को नये कार्यों और नयी परिस्थितियों में प्रयोग करने हेतु नयी दिशा देनी होगी।

ऐतिहासिक तथ्यों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है। हम ही अपने भूत का परिणाम और अपने भविष्य के निर्माता हैं। हम भले ही खण्डहरों को ध्वस्त कर दें, परन्तु वह जिस धरातल पर खड़ा है, उसे कभी भी अस्वीकार नहीं कर सकते। स्वामी विवेकानन्द ने हमारी प्राचीन धरोहर को आधुनिक युग हेतु पुन: प्रासंगिक बनाया।

इस परिप्रेक्ष्य में आज का महत्त्वाकांक्षी युवा स्वामी विवेकानन्द के आह्वान से महत्त्वपूर्ण शिक्षा प्राप्त कर सकता है, जिसकी शक्ति से वे स्वयं के समय से आगे रहे और उनकी शिक्षाएँ शाश्वत हो गयीं। स्वामीजी के साहित्य हमारे लिए संजोकर रखे गये हैं और अनुसन्धान करने पर छात्र उनके लेखों में अपने उत्तर प्राप्त कर सकते हैं। ○○○

स्वामी विवेकानन्द : युवाओं के लिए शाश्वत प्रेरणा

स्वामी गौतमानन्द
उपाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ और मिशन और
अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, चेन्नई

भूमिका

एक तथ्य पर आसानी से हम सबका ध्यान जाता है कि युवावर्ग आम तौर पर जीवन के क्षेत्र में प्रेरणादायक आदर्शों को सुनकर अनुकरण करने के लिए दृढ़ आकांक्षा व्यक्त करता है। वह क्षेत्र चाहे – विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अर्थशास्त्र, सामाजिक विज्ञान, खेल-कूद, साहित्य, कला या आध्यात्मिक जीवन का हो, युवावर्ग हर क्षेत्र में एक प्रेरणादायक आदर्श चाहता है। हम यह भी देखते हैं कि हमारे कई 'युवा विजेता' आध्यात्मिक जीवन को छोड़ बाकी सब क्षेत्रों में विजेता रहकर भी असन्तुष्ट हैं। जब हम इस असन्तुष्टि का कारण ढूँढ़ते हैं, तो समझ में आता है कि आध्यात्मिक ज्ञान ही हमारे असन्तुष्टि को दूर कर सकता है। जब तक इसे संवर्धित न किया जाए, सन्तोष अधिक देर नहीं रह सकता। जब अपने प्रेरणादायक आदर्श ढूँढ़ें, तो हमारे युवा इस बात पर ध्यान दें।

विवेकानन्द ही क्यों?

पिछले २० सालों से मुझे युवा शिविरों को सम्बोधन करने के लिए कई अवसर मिले। उन बैठकों में प्रश्नोत्तर के समय, हम बारम्बार उनको वही बरसों पुराने प्रश्नों को पूछते हुए सुनते हैं – लक्ष्य क्या है और लक्ष्य तक कैसे पहुँचा जाए? मैं युवाओं को इस सम्बन्ध में बताना चाहूँगा। हमारे आज कल के युवा स्वामीजी के उपदेशों में अपने प्रश्नों का उत्तर पाएँगे।

स्वामी विवेकानन्द विश्व के युवाओं के लिए एक आदर्श हैं। उनमें असाधारण शारीरिक शक्ति, तीक्ष्ण बुद्धि, असीम सहानुभूति और पीड़ित प्राणियों के लिए प्रेम और सर्वोपरि उनका साहस, संघर्षशीलता, नेतृत्व, अदम्य ऊर्जा और आध्यात्मिक ज्ञान था। वे भारतीय युवा वर्ग के राष्ट्रीय आदर्श रहे। उन्होंने उन्हें राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। अब युवा को उसी ऊर्जा के साथ आर्थिक और सामाजिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना होगा और अन्त में आध्यात्मिक स्वतन्त्रता – मुक्ति प्राप्त करनी होगी, जिसे आत्मज्ञान या ईश्वरप्राप्ति कहते हैं।

हम स्वामीजी की शिक्षाओं को पृथक्-पृथक् उपशीर्षकों में रखकर देखें कि वे युवाओं को कैसे प्रेरित करते हैं –

१. मानव के दिव्यता का स्मरण – प्राय: हमारे युवा पुरुष और महिला या तो निष्क्रिय हैं, नहीं तो विध्वंसक रूप से सक्रिय हैं। ऐसा लगता है कि उन्होंने अपनी युवावस्था की ऊर्जा के लिए सही दिशा खो दी है, जबकि उन्हें सही दिशा मिले, तो आनन्द और समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। केवल उन्हें प्रेरणादायक आदर्श की आवश्यकता है। उन्हें क्या प्रेरणा दे सकता है? प्रत्येक मनुष्य जीवन्त ईश्वर है, ऐसा बोध करना है। अगर हम एक भी व्यक्ति की सहायता कर सकें, तो बहुत अच्छा कार्य होगा, जो ईश्वर को मन्दिर में पूजने जैसा होता है। स्वामी विवेकानन्द ने कहा, 'आप ईश्वर को पूजने के लिए एक मूर्ति बना सकते हैं, लेकिन एक अच्छी जीवन्त मानव मूर्ति पहले से ही विद्यमान है। आप भगवान की पूजा

करने के लिए मन्दिर बना सकते हैं, लेकिन इससे अच्छा मानव-शरीर रूपी मन्दिर पहले से ही विद्यमान है। उन्होंने और भी कहा, सबसे प्रसिद्ध मानव रूपी ईश्वर विद्यमान है, इसकी कल्पना न कोई पुस्तक, न कोई शास्त्र, न कोई विज्ञान कर सकता है।

२. चरित्र-निर्माण – चरित्र क्या है? यह प्रश्न युवावर्ग बहुत बार पूछता है। मानव का चरित्र उसकी जीवन शैली है। शारीरिक शक्ति, शुद्धता, करुणा, ईमानदारी, सत्यवादिता, निर्भीकता, सादगी, नि:स्वार्थता और लोकोपकार, ये सब एक साथ मिलकर सच्चरित्र का निर्माण करते हैं। इन गुणों को विकसित करने और इसके विपरीत गुणों का त्याग करने से सच्चरित्र का निर्माण होता है, जो वैश्विक होगा। ऐसा सत्चरित्र बनाने के लिए प्रत्येक को चिन्तन करना चाहिये, प्रार्थना करनी चाहिये और महान साधु-सन्तों, देशभक्तों और नायकों के प्रभावकारी जीवन के बारे में पढ़ना चाहिये।

स्वामीजी ने चरित्र-निर्माण के लिये एक प्रभावशाली उपाय बताया है : सतत अपनी दिव्यता का स्मरण करते रहें और अपने आप से कहते रहें – मैं शिव हूँ, मैं शिव हूँ – शिवोऽहम्, शिवोऽहम्।

युवा वर्ग, धर्म और ईश्वर के बारे में पूछता है। वह कई बार कहता है, 'क्या हम ईश्वर के बिना धर्म नहीं पा सकते?' यह ईश्वर को लेकर भ्रामक विचारों का फल है, जो सभी धर्मों के स्वार्थी व कट्टरपंथियों द्वारा किया हुआ है। स्वामीजी ने युवाओं से विशेष रूप से कहा कि गरीबों की सेवा ही सच्चा धर्म है। वे कहते हैं, 'जो सभी प्राणी को भेद-भावरहित होकर प्रेम करते हैं, वे ईश्वर की सच्ची पूजा कर रहे हैं।'

३. अपनी दिव्यता को कभी मत भूलना – युवा कई बार प्रश्न करते हैं – 'धूम्रपान, मद-पान, मादक पदार्थों की आदत या इन्द्रिय-भोग की व्यग्रता पर कैसे नियन्त्रण पाएँ?' सर्वप्रथम यह मालूम होना चाहिए कि ये सब दुर्गुण हमारे शरीर, इन्द्रियों और मन को दुर्बल कर देते हैं और इसलिए ये हमारे विकास के शत्रु हैं। दुर्गुणों में दोषदृष्टि से हमारा मन इन विषैली बुराइयों के प्रति आकर्षित नहीं होता है। यदि किसी को आत्मनियन्त्रण के लाभ का ज्ञान हो, वह आत्मनियन्त्रण से बुराइयों के आकर्षण से बच सकता है। आत्मनियन्त्रण मानव की संकल्पशक्ति को बढ़ाता है। विषयों के प्रति निर्लिप्तता से वह धीरे-धीरे निकृष्ट वस्तुओं की ओर आकर्षण पर विजय प्राप्त कर लेता है। स्वामीजी हमारे सामने एक प्रशंसनीय आदर्श रखते हैं – आत्मसंयम और आत्मविकास। वे कहते हैं, ''प्रत्येक आत्मा अव्यक्त ब्रह्म है। बाह्य एवं अन्त:करण को वशीभूत करके आत्मा के इस ब्रह्मभाव को व्यक्त करना ही जीवन का परम लक्ष्य है। कर्म, उपासना, मन:संयम अथवा ज्ञान, इनमें से एक, एक से अधिक या सभी उपायों की सहायता से ब्रह्मभाव को व्यक्त करो और मुक्त हो जाओ। बस यही धर्म का सार है। मत, अनुष्ठान पद्धति, शास्त्र, मन्दिर अथवा अन्य बाह्य क्रिया-कलाप तो उसके गौण विवरण मात्र हैं।'' (वि.सा. १/१७३)

४. पवित्र बनो, शक्तिशाली बनो – स्वामीजी युवा-वर्ग को मानव के उच्चतम आदर्श ईश्वरप्राप्ति या दिव्यता की ओर आकर्षित करते हैं, जो मानव का सच्चा स्वभाव है।

इसे पाने के लिए शारीरिक व मानसिक; दोनों ही ऊर्जा की बहुत आवश्यकता होती है। ऊर्जा का संरक्षण पवित्र जीवन जीकर व सम्भोग का विचार मन में भी न आने देकर किया जा सकता है। अब हम देखते हैं, स्वामीजी इस विषय को कितनी अच्छी तरह समझाते हैं – 'योगी दावा करते हैं कि मानव शरीर की सभी ऊर्जाओं में सबसे उच्चतम को ओजस् कहते हैं। मानव के मस्तिष्क में अधिक ओजस् संग्रहित होने से वे अधिक शक्तिशाली, अति बौद्धिक और अधिक आध्यात्मिक गुणों से भी दृढ़ होंगे।'

मानव ऊर्जा का यह भाग, जो काम-सम्बन्धी विचारों में, काम-ऊर्जा से व्यक्त होता है, वह नियन्त्रित होकर आसानी से ओजस् बन जाता है। पवित्र पुरुष या महिला इस ओजस् को बढ़ा सकते हैं, जो दिमाग में संग्रहित है। इसलिए पवित्रता हमेशा ही सर्वोच्च गुण रहा है।

५. अच्छी शिक्षा का महत्त्व – आजकल की गलत शिक्षा के कारण हमारे युवाओं की प्रतिभा ठीक से विकसित नहीं हो पाती। इसलिये वे बेरोजगार और असन्तुष्ट रहते हैं और उग्रव्यवहार व उपद्रव करते हैं। इसलिए शिक्षा व्यवस्था में सुधार लाना बहुत आवश्यक है। एक अच्छी शिक्षा का केन्द्र बिन्दु – छात्रों को एकाग्रता सिखाना है। एकाग्रता हमें एक ही विषय में आसक्त न कर दे। अनासक्ति की सीख भी दे।

युवाओं को सकारात्मक विचार भी देना चाहिए। हमारे

युवा केवल आजीविका के लिए शिक्षा ग्रहण न करें। बल्कि वे उनका आश्रय लें, जो उन्हें स्वतन्त्र,निपुण नर-नारी बना सके। एक निपुण, कुशल बढ़ई, पलम्बर, नर्स, देहाड़ी मजदूर बनना बेहतर है, न कि थोड़ा सीखकर स्कूली प्रमाणपत्र लेना। स्वामी विवेकानन्द हमारे युवाओं को परामर्श देते हैं – ''जो शिक्षा सामान्य व्यक्ति को जीवन-संग्राम में समर्थ नहीं बना सकती, जो मनुष्य के चरित्र-बल, परोपकार की भावना और सिंह के समान साहस नहीं ला सकती, वह भी क्या कोई शिक्षा है? शिक्षा वही है, जिसके द्वारा जीवन में अपने पैरों पर खड़ा हुआ जाता है। (वि.सा.६/१०६)

६. प्रत्येक बुराई की चिकित्सा : मूल्य – आदर्श प्रदान करना – भौतिकतावादी जैसा दृष्टिकोण होने से युवा वर्ग आध्यात्मिक सिद्धान्तों – सत्यवादिता, पवित्रता, निस्वार्थ सेवा और ईश्वर पर विश्वास, इन्द्रिय-संयम के प्रति सजगता खो रहा है। यह उनकी इच्छा-शक्ति को निर्बल बना देती है। अब समय आ गया है कि वे अपने आप को आध्यात्मिक जीवन जीने के लिए उठायें, जो हमारे राष्ट्रीय जीवन का मेरुदण्ड है। जब कोई एक बार यह आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनायेगा, तो पहले बतायी गई सामाजिक बुराइयाँ ओझल हो जाएँगी। स्वामीजी का हमारे लिए उपदेश है – भारत में, बहुत सारे कंटक है। इनमें से अनात्मवाद एवं निरा अन्धविश्वास से दूर रहना है। इस धरती पर धर्म और आध्यात्मिकता की बाढ़ पूरे विश्व प्लावित कर देगी, जो अभी राजनैतिक व सामाजिक षड्यंत्र से अधोमृत और अधोगति को प्राप्त हो गए हैं।

७. आनन्दित कैसे रहें – एक दूसरी बात है, जिसकी शिकायत हमारे युवा करते हैं, वह है – प्रतिद्वंदिता, भ्रष्टाचार, सामाजिक अवरोध आदि से सम्बन्धित नैराश्य। वे कहते हैं कि वे इन सबसे नाराज हैं। परन्तु प्रसन्न-अप्रसन्न होना अपने भीतर है। एक नि:स्वार्थ व्यक्ति हमेशा आनन्दित रहता है। स्वामीजी कहते हैं : 'मानव मूर्खता के कारण सोचता है कि वह अपने को प्रफुल्लित रख सकता है और कई साल के संघर्ष के बाद समझता है कि सही प्रसन्नता स्वार्थ त्यागने के बाद होती है और उसे अपने अतिरिक्त कोई प्रसन्न नहीं कर सकता।'

युवा समझते हैं कि शारीरिक, भौतिक सहायता ही उन्हें प्रसन्न कर सकती है, जो कि सच नहीं है। स्वामीजी फिर कहते हैं, संसार का कष्ट केवल शारीरिक, भौतिक सहायता से दूर नहीं होगा। जब तक मानव प्रकृति बदलती रहेगी, ये शारीरिक आवश्यकतायें आयेंगी और संकटों का हमेशा अनुभव होगा। इसका एक ही समाधान है, ये विपदायें तभी दूर होंगी, जब मानव को आलोक मिले, वे शिक्षित हों, पवित्र रहें और आध्यात्मिक जीवन में दृढ़ रहें।

८. कर्तव्य क्या है – युवा कहते हैं कि यह उनका कर्तव्य है कि वे कुछ भी गलत का विरोध करें। वे बिल्कुल ऐसा कर सकते हैं, परन्तु केवल शान्तिपूर्ण ढंग से, जैसे याचिका या आलोचना द्वारा। उनके लिये यह जानना आवश्यक है कि उनका कर्तव्य क्या है। स्वामीजी उपदेश देते हैं – मानव संसार में बाहर निकलते हैं और पैसे के प्रति आसक्त होकर संघर्ष और लड़ाई करते हैं और कहते हैं कि 'यह हमारा कर्तव्य है !' सोना और लाभ के लिए यह तो व्यर्थ की लालसा है। एक मात्र कर्तव्य यही है कि वे अलिप्त रहें और स्वतन्त्र जीव की तरह कार्य करते रहें तथा सभी कार्य ईश्वर को समर्पित हो।

९. भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष – हमारे युवा कई बार कॉलेज में प्रेवश हेतु, किसी कार्यालय में नौकरी पाने के लिए, छात्रवृत्ति पाने के लिए या खेलों में भाग लेने के लिए पैसे का खेल और समाज में भ्रष्टाचार देखकर क्रोधित हो जाते हैं।

भ्रष्टाचार का मूल कारण यह है कि हमारे नेताओं का सिद्धान्तों – जैसे सत्यवादिता, प्रेम, परिश्रम पर से विश्वास उठ गया है। हमारी शिक्षा इन सिद्धान्तों को प्रदान करने में असफल रही। इसलिये युवा पीढ़ी इन सिद्धान्तों को पहले अपने अन्दर विकसित करें। फिर अपने को संगठित कर, वे इन बुराइयों के विरुद्ध असीम शक्ति दिखा सकते हैं। स्वामी विवेकानन्द ने कहा, कोई भी महान कार्य छल-कपट से पूर्ण नहीं हो सकता। यह केवल प्रेम, सत्य और असीम शक्ति से सम्पूर्ण होता है। इसलिए अपनी मानवता अभिव्यक्त करें।

हमने कुछ वर्ष पहले ही १९७९ में असम के राजनैतिक इतिहास को देखा है कि कैसे वहाँ के अधिकांश कॉलेज के छात्रों ने अपने को एक राजनैतिक संगठन के रूप में प्रस्तुत किया और तत्कालीन भ्रष्ट राजनैतिक दल से अधिकार, सत्ता छीन लिया। बाद में नैतिकता के अभाव मे छात्रदल का आन्दोलन नि:सन्देह असफल हुआ, नहीं तो युवा

आन्दोलन अजेय होता है। इसलिये स्वामीजी का उपदेश है – ''विश्वास, विश्वास, विश्वास, अपने आप में विश्वास, ईश्वर में विश्वास, यही महानता का एकमात्र रहस्य है। इस आत्मविश्वास के बल से अपने पैरों पर खड़े हो जाओ और शक्तिशाली बनो। इस समय हमें इसी की आवश्यकता है।'' (वि.सा. ५/८६)

१०. राजनैतिक कार्यकलाप – हमारे युवा राजनैतिक सोच का परिहार नहीं कर सकते, क्योंकि अभिनव भारत में उनके जीवन के हर क्षेत्र पर राजनैतिक गतिविधि व विचारधारा का प्रभाव है। अत: जानने के लिए वे अध्ययन कर सकते हैं कि कौन-सी प्रणाली अच्छी है, परन्तु राजनीति में सक्रिय होना, उनकी पढ़ाई में बाधा डाल सकती है। वे अपनी पढ़ाई पूरी कर राजनीति में आएँ तो बेहतर होगा। छात्र जीवन में पढ़ाई की उपेक्षा करना ठीक नहीं है। कलकत्ता विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध कुलपति, सर आशुतोष मुखर्जी, जिन्हें बंगाल का शेर कहा जाता था, उन्होंने अपने छात्रों को पढ़ाई बहिष्कार करने से यह कहकर रोका कि मैं नहीं चाहता कि भारत का भविष्य अशिक्षित, अशिष्ट लोगों से भरा हो।

हमारे युवाओं को यह अनुभव होना चाहिये कि चरित्र-निर्माण के लिये बहुत अच्छे प्रशिक्षण की आवश्यकता है, ताकि वे कुशल उत्तरदायी राजनीतिज्ञ बन सकें। स्वामी विवेकानन्द हमारे भविष्य के राजनीतिज्ञों को उपदेश देते हैं कि वे सबसे पहले मानव के प्रति प्रेम और श्रद्धा की भावना का विकास करें। यह संसार अच्छा चरित्र चाहता है। संसार के धर्म प्राणहीन परिहास की बस्तु हो गये हैं। जगत को जिस वस्तु की आवश्यकता है, वह है चरित्र। संसार को ऐसे लोग चाहिए, जिनका जीवन स्वार्थहीन ज्वलन्त प्रेम का उदाहरण है। वह प्रेम एक-एक शब्द को वज्र के समान प्रभावशाली बना देगा। (वि.सा.४/४०८)

हम कई बार सुनते हैं कि युवा पीढ़ी यह शिकायत करती है कि ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब लोगों की उपेक्षा की जा रही है। यह बात सच है। लेकिन इस स्थिति को सुधारने के लिए कठिन परिश्रम करना होगा, ग्रामीण कृषि कार्य में और दूसरे उद्योगों में विज्ञान व प्रोद्योगिकी का प्रयोग करना पड़ेगा। हमारे शिक्षित युवा वर्ग को अपने सुख-साधन का त्याग कर ग्रामीण क्षेत्रों में शैक्षणिक संस्थान आरम्भ करने के लिए मदद करनी चाहिए, ताकि ग्रामवासियों को नैतिक शिक्षा मिल सके, जो शिक्षा धर्मनिरपेक्ष रूप से आध्यात्मिक हो। इसलिये वे सामाजिक-धार्मिक संघ का गठन कर सकते हैं, जैसे 'विवेकानन्द एजुकेशन सोसाइटी' है, जो बहुत से विद्यालय नैतिक सिद्धान्तों पर चला रहे हैं। चेन्नई के आसपास ऐसे बहुत से हैं। स्वामी विवेकानन्द और महात्मा गाँधी पर अध्ययन करने से इनको प्रेरणा मिलती है। स्वामी विवेकानन्द इस विषय पर कहते हैं – 'नि:सन्देह इस देश का स्तर नीचे गिर गया है, लेकिन यह पुन: उन्नत होगा और विश्व को आश्चर्यचकित कर देगा।' जब लाखों पुरुष व महिलाएँ, प्रज्वलित अग्नि की तरह धार्मिकता की औत्सुकता पूर्ण, अनन्त काल तक ईश्वर पर दृढ़ विश्वास, सिंह जैसा साहस रखते हुए, दरिद्रता से सहानुभूति... धरती की लम्बाई-चौड़ाई आच्छादित कर मोक्ष सिद्धान्तों पर, सेवा धर्म पर, सामाजिक उत्थान पर व एकता के सिद्धान्तों पर उपदेश देते हुए अग्रसर होंगे।

११. वास्तविक भारत की ओर – हमारे युवा को इस बात पर ध्यान देना चाहिये कि भारत का बृहत् भाग ग्रामीण, जंगल और पर्वतीय क्षेत्र में है। इसलिए स्वामीजी उनको समझने का परामर्श देते हैं कि भारत का भविष्य इन पिछड़े वर्ग को सम्मिलित करके है। वे प्रशंसनीय दृष्टि से कहते हैं, एक नवीन भारत निकल पड़े, हल पकड़कर, किसानों की कुटि भेदकर, मछुए, माली, मोची, मेहतरों की कुटीरों से। निकल पड़े बनिये की दुकान से, भुजवा के भाँड़ के पास से, कारखाने से, हाट से, बाजार से, निकल पड़े झाड़ियों, जंगलों, पहाड़ों और पर्वतों से। (वि.सा.८/१६७-१६८)

१२. सेवा धर्म – युवा पूछते हैं कि वे सामाजिक सेवा क्यों करें? स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि परसेवा करना, परोपकार करना ईश्वर की पूजा है। यहाँ स्वामीजी का एक बहुत ही सुन्दर उत्तर है : 'सभी पूजा आराधना का सार है – पवित्र रहना और दूसरों की सेवा करना।' क्या आप अपने भाई-बन्धु-साथी से प्रेम करते हो? ईश्वर को पाने के लिए अन्यत्र कहाँ जा रहे हो? क्या इन सभी दुखी-दरिद्रों, दुर्बलों और असहायों में

शेष भाग पृष्ठ २२ पर

युवा कर्त्तव्यनिष्ठ बनें

स्वामी वागीशानन्द

पूर्व-सह-संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ और मिशन

युवा-सम्मेलन का महत्त्व और प्रयोजन सर्वविदित है। आज के जो युवक-युवती हैं, वे ही भविष्य के भारत के कर्णधार हैं। देश के सर्वांगीण विकास रूपी रथचक्र के चालक हमारे देश के युवा हैं। आपलोगों ने अपने जीवन के अनुभव से यह बोध किया है कि हमारा देश क्रान्ति-काल से गुजर रहा है। विज्ञान की द्रुतगति के साथ-साथ हमलोग अपने प्राचीन मूल्यों, आदर्शों को खो रहे हैं। भारत के शाश्वत त्याग, कर्म, ज्ञान और वैराग्य के आदर्श का परित्याग कर रहे हैं। विज्ञानपरक वस्तुतांत्रिक सभ्यता के प्रति आकर्षित हो रहे हैं। इसके कारण हमलोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया है और उसके साथ-साथ हमलोग अपनी आन्तरिक सम्पत्ति को खोकर मौन और कंगाल हो गये हैं।

आजकल हमारे स्वदेश और स्वजाति के सम्मुख कई प्रकार की समस्यायें हैं। हमारे देश के युवा आज राजनीति के चक्रवात में दिग्भ्रमित हैं, समाज के सभी स्तरों पर नैतिक पतन के कारण वे लोग उन्मार्गगामी और राष्ट्रीय स्तर के योग्य नेतृत्व के अभाव में वे दिग्भ्रान्त हैं। हमारे देश के युवक वर्तमान परिस्थिति में जीवन के सम्पूर्ण मूल्य-बोध, आदर्श को खोकर निराश और उद्भ्रान्त हैं। शिक्षा जगत में शुद्ध, स्वच्छ परिवेश और सुपरिकल्पना के अभाव में युवाशक्ति के अपचय ने राष्ट्रीय जीवन में एक बड़ी समस्या उत्पन्न की है। आज की शिक्षा-व्यवस्था युवकों को स्वावलम्बी बनाने में सहायता नहीं करती। वर्तमान युग के समाजिक परिवेश में युवकों के आत्मविकास और व्यक्तित्व का विकास लगभग बन्द है। राजनीति के क्षेत्र में विभिन्न मतवादों और विचारों के संघर्ष का प्रभाव समाज के सभी स्तरों के विस्तृत दलगत स्वार्थ के प्रभाव में राष्ट्रीय हित उपेक्षित है। आज मनुष्य श्रेय प्राप्ति हेतु उन्मुख नहीं है, भूमा का परित्याग कर भोग का जीवन जीने को अभ्यस्त हो गया है, सनातन भारत के त्याग और वैराग्य के, सेवा और कर्म के आदर्श को विस्मृत कर संकीर्ण जीवन व्यतीत कर रहा है।

समाज और स्वदेश के परिवेश का प्रभाव युवाओं के मन को भी प्रभावित कर रहा है। हमारे देश का युवा-समाज आज लक्ष्यच्युत हो गया है। वे लोग प्राचीन भारत के महान आदर्शों के प्रति आस्था-विश्वास को खोकर एक ध्वंसकारी प्रवृत्ति के होते चले जा रहे है। किन्तु आप सभी लोग जानते हैं कि युवावर्ग समाज का सबसे सतेज और सक्रिय भाग है। जिसमें शक्ति का असीम स्रोत छिपा हुआ हो, इस युवा शक्ति का यदि पूर्णत: सदुपयोग किया जाये, सत्कर्म में, अच्छे कार्यों में संलग्न किया जाये, तो बहुत से कठिन असम्भव कार्य भी सम्भव हो सकते हैं और उससे समाज-कल्याण का बन्द द्वार उद्घाटित हो सकता है।

किन्तु बड़े दुख का विषय है कि स्वाधीनता प्राप्ति के कई दशक बीतने के बाद भी हमारे समाज के यौवन की उच्छृंखलता की अभिव्यक्ति ने सैकड़ों प्रथाओं, आचार-विचार, विधि-निषेध के कारण अपरिवर्तित होकर राष्ट्रीय जीवन के विकास-गति को रुद्ध कर रखा है। हमलोगों का यह जड़ताग्रस्त समाज इस युवाशक्ति को सत्कर्म, शुभकर्म में संलग्नकर राष्ट्रीय जीवन को स्वस्थ और समृद्ध करने का कोई प्रयास नहीं कर रहा है। इसीलिए देश की युवा शक्ति अवांछित विधि-निषेध और निष्क्रिय-

शेष भाग पृष्ठ ३८ पर

हमें चाहिए : एक प्रगतिशील मानव परिवार

स्वामी सुहितानन्द

सह-संघाध्यक्ष, रामकृष्ण मठ और मिशन

यदि हम विश्व की ओर देखें, तो हमें कुछ संस्कृतियों की व्यापकता मिलती है। वहाँ यूनानी संस्कृति है, जो कला, विज्ञान, साहित्य, शरीर-सौष्ठव, दर्शनशास्त्र और नैतिकता दर्शाती है। रोम देश की संस्कृति जो प्रशासन, सामर्थ्य और सम्पत्ति वितरण तथा वास्तुकला का वर्णन करती है। इनके साथ, यहूदी, ईसाई – कैथोलिक व प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय, यूनानी परम्परागत गिरजाघर, विभिन्न इस्लामी समूह, कन्फ्यूसियस व शिन्तो धर्म के अनुगामी एवं ऐसे कुछ और दिखते हैं। इनमें से अधिकांश संस्कृतियों का मूल बौद्ध और जैन धर्म है, जो पुन: हिन्दुत्व या वेदान्त या आर्यवाद के पुनर्संशोधित सम्प्रदाय हैं।

आर्यवाद से पहले एक दूसरी संस्कृति थी, जिसे हम पूर्व आर्य संस्कृति कह सकते हैं। अगर हम उत्सुकतावश प्रादेशिक कहानियाँ, दंतकथाएँ, संस्कार, वैवाहिक जीवन, अन्त्येष्टि संस्कार, पूर्वजों की पूजा और ऐसी कुछ संस्कृतियों का अनुसंधान करें, तो सम्पूर्ण विश्व में आस्ट्रेलिया से लेकर मैक्सिको और अमेरिकी आदिवासी (रेड इंडियन्स – उत्तरी अमेरिकी आदिवासी) ये सभी संस्कृतियाँ किसी-न-किसी प्रकार से पूर्व-आर्य संस्कृतियों से सादृश्य रखती हैं। जैसे-जैसे समय बीतता गया, उन्हीं विचारों ने अलग-अलग आकार और संरचना ग्रहण कर ली।

आजकल हमलोग कहते हैं कि हम भारत, फ्राँस, यूनान, रूस, अमेरिका, अफ्रीका आदि के हैं। क्या हम वास्तव में ऐसे हैं? हम कितने सालों से ऐसे हैं? ५०० साल पहले ये सब लोग कौन थे? राजनीतिक क्रान्ति और प्राकृतिक आपदाओं के कारण, कुछ दल देश के दूसरे भागों में चले गये। स्वभावत: रक्त, धर्म, संस्कृति, भाषा और प्रवृत्तियों का सम्मिश्रण हुआ।

इसी सन्दर्भ में हम फ्राँसीसी, भारतीय आदि से शुद्ध होने का अधिकार नहीं जता सकते। सभी देश राजनैतिक, प्राकृतिक आपदाओं, महामारी, धार्मिक और सामाजिक, विभिन्न कारणों से निरन्तर परिवर्तन का अनुभव कर रहे हैं। अगर हम ठीक से निरीक्षण करें, तो पायेंगे कि हमारी एक ही पहचान है, जो पवित्र और विशुद्ध है, वह है हम सब मानव जाति हैं।

सम्पूर्ण विश्व में हमारा यह एक सार्वजनीन परिचय है कि हम सब मानव जाति के हैं और हमारी समान शारीरिक संरचना है, किन्तु हम मन से, बुद्धि से, शक्ति से अलग हैं। हमें अपने तन, मन और बुद्धि को इस तरह विकसित करना व समझना होगा, ताकि हमारी एक ही पहचान रह सके।

इसीलिये महान पुरुष इस संसार में अवतरित होते हैं और मानव को सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, साहित्यिक और शारीरिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में मार्गदर्शन करते हैं। आधुनिक विज्ञान व तकनीक हमें मानव संस्कारों में निहित सार्वभौमिक तत्त्व को तादात्म्य करने में मदद करती है। ऐसे भी देश भर में ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान हो रहा है।

विश्व की संस्कृति एवं सभ्यता के विकास की शृंखला का जगत साक्षी है। यह विकास आन्दोलन १५१७ में आरम्भ हुआ और इसने पश्चिमी देशों में ज्ञान का नया आलोक दिया। वे कैथोलिक समुदाय के गिरिजाघर के अधिकारियों से प्रश्न पूछने लगे, क्योंकि गिरिजाघर आलस्य और सन्तुष्टि का जीवन जी रहे थे और इसीलिये वे जनता का विश्वास खो चुके थे। प्रोटेस्टेंट समुदाय का आन्दोलन एक विस्फोट था। लोगों ने गिरिजाघर के अधिकारों के बारे में जानना चाहा। यूरोप में चारों ओर स्वतन्त्रता की ताजी हवा प्रवाहित हो रही थी और जनता स्वतन्त्रता का आनन्द ले रही थी – विचारों में स्वतन्त्रता, कार्य-कलापों में स्वतन्त्रता और सामाजिक मूल्यों में स्वतन्त्रता।

१४९२ में अमेरिका की खोज हुई। पूरा यूरोप इस नये स्थान में अपने भाग्य के निर्माण में लग गया। उस समय, अमेरिका, अफ्रीका, एशियाई देश अपने आप को बचाने के लिए तीर, धनुष, हाथी, घोड़ा, अग्नि बाण, ढाल व भाला का प्रयोग करना ठीक से जानते थे। परन्तु यूरोप ने १५वीं ईसवी से राइफल, बन्दूक का विकास किया। आदिम युग

के अस्त्र-शस्त्र तो बन्दूक का सामना करने के योग्य नहीं थे। बन्दूक से कुछ दूरी पर छिपकर मारने पर भी व्यक्ति की मृत्यु तुरन्त हो सकती थी। इसलिए अमेरिका के आदिमानव को यूरोप के सामने समर्पण करना पड़ा और उन्होंने मानव संसाधनों और धन का स्वेच्छानुसार का उपयोग करते हुए निर्दयता से आदिमानवों को नष्ट कर दिया। आदिमानवों का शिकार करना उनकी प्रवृत्ति बन चुकी थी। वे आदिमानवों के नवजात शिशुओं को उनकी माता की गोद से छीनकर अपने लिए व्यवहार करते थे। इस प्रकार से यह पीढ़ी बिना संस्कार और प्रशिक्षण के विलुप्त हो गई। आदिमानवों के साथ पशुवत् व्यवहार होने लगा।

यूरोप अपनी आवश्यकता और रुचि के अनुसार अमेरिका का निर्माण करना चाहता था। उनके पास ज्ञान था, परन्तु मजदूर कहाँ थे? उन्होंने अफ्रीका के देशों को बन्दूक और आग्नेयास्त्रों जैसे उत्कृष्ट अस्त्रों द्वारा अन्वेषण किया। उन्होंने आदि मानवों को अपनी आवश्यकता हेतु दास बनाकर रखा और अफ्रीका से उन्हें यूरोप व अमेरिका में जहाज में आयात किया। वे उन्हें घरेलू पशुओं के समान चैन से बाँध कर रखते थे। इस तरह के अमानवीय व्यवहार का वर्णन हैरीयट बीचर स्टोवे के उपन्यास – 'अंकल टॉमस केबिन' में किया गया है।

यूरोप में १७६० से १८४० तक औद्योगिक क्रान्ति रही। यूरोप के विभिन्न प्रान्तों में नयी मशीनें और तकनीकी का आविष्कार हुआ। कुछ यूरोपवासी अपना तकनीकी ज्ञान ले अमेरिका में प्रवास करने लगे। इसलिए, अमेरिका शीघ्र ही मशीन व दासों के साथ एक विकसित देश बन गया। वे अमेरिकी जो यूरोप से प्रवासित हुए, उनमें कई अच्छे विचार के लोग भी थे, जिन्हें दासों पर अमानवीय व्यवहार बिलकुल भी पसंद नहीं था।

जब तात्कालिक लक्ष्य धन और जीवन-शैली की पूर्ति हो गयी, तब पश्चिमी देश को जीवन के दूसरे पहलू पर ध्यान देना था, विशेषकर बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य, आचरण, धर्मज्ञान, दर्शनशास्त्र पर विचार करना था। यूरोप में सन् १७८९ से १७९९ तक फ्राँसीसी क्रान्ति हुई। किसी देश ने नहीं सोचा था कि ऐसा कुछ हो सकता है। सामान्य जनता शर्तों पर आज्ञा देने लगी। बैस्टील – सुधार गृह का पतन जागीरदारी का पतन का कारण बना। अन्य देश शान्ति और मैत्रीभाव लाने के लिये एकत्र हुए, किन्तु शत्रुता का कीड़ा हवा में फैल चुका था।

अमेरिकावासियों में अधिकांश यूरोपिय देश, फ्रांस एवं कुछ दूसरे देशों के भी लोग थे और दास-वर्ग अफ्रीका से था। भिन्न-भिन्न प्रकार के लोगों को नए जगह पर जीने के लिए एक साथ रहना पड़ा, उनको जीने व विकास के लिए कुछ संचार पद्धति का विकास करना पड़ा। स्वाभाविक रूप से उन्हें विभिन्न प्रकार के लोगों की आवश्यकताएँ पूर्ण करने के लिए संवैधानिक नियम बनाने पड़े। इसके अतिरिक्त उन्हें अपने प्राचीन समाज की पुरानी प्रथाओं और आचारों से मुक्त होने के लिये अपनी अलग संस्कृति और आचार का निर्माण करना पड़ा। इस प्रकार वे धीरे-धीरे अधिक उदार स्वभाव के हो गए।

यूरोपीय लोग अमेरिका में इंग्लैण्ड की छत्रछाया व मार्गदर्शन में विकसित होने लगे। इंग्लैण्ड की अमेरिका से अधिक अपने विकास में रुचि थी। इसलिये रुचि में संघर्ष दिखा। अंग्रेज जो अमेरिका आए थे, उन्होंने इंग्लैण्ड की ओर से शोषण का अनुभव हुआ। उन सबने नाराज होकर प्रतिक्रिया व्यक्त की। इंग्लैण्ड के लिए अमेरिका से लम्बे समय तक लड़ाई करना सम्भव नहीं था। इसलिये अमेरिका को ४ जुलाई, १७७६ को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। अमेरिकावासी अपनी रुचि, अधिकार में सतर्क हो गए और अपने नये देश में विदेशियों को आने की स्वीकृति दे दी।

हिरम मैक्सिम (१८४०-१९१६) ने १८८४ में स्वचालित मशीनगन का आविष्कार किया। इसने यूरोप को नयी शक्ति प्रदान की। यूरोपवासी अपनी बन्दूकों और मशीनगन से नया क्षेत्र खोजने लगे और संसार के अन्य भागों में भी अपना निवास बना लिया। इसमें उत्तर व दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका और एशिया का हिस्सा सम्मिलित हुआ। जहाँ भी उन्हें अच्छा लगा, उसे अपना वास-स्थान बना लिया। इन क्षेत्रों के निवासियों को अपनी संस्कृति, शिक्षा और धर्म अपने शासक के अनुसार अनुसरण करने की स्वीकृति थी। अधिकांश लोगों को जीने के लिए अपनी पहचान खोकर अपने शासक की इच्छानुसार समझौता करना पड़ा।

ऑस्ट्रेलिया और एशिया जैसे दूर देशों पर सीधे-सीधे राज्य-शासन करना कठिन था, इसलिये शासकों ने वहाँ के मूल निवासियों को उनके अनुसार रहने की स्वतन्त्रता प्रदान कर दी। अपने शासक के धर्म को मानना मुसलमान,

यहूदी और हिन्दुओं ने स्वीकार नहीं किया। शासकों ने अति निपुणता से कुछ प्रतिबन्ध के साथ स्वतन्त्रता दे दी। तब से यूरोप और अमेरिका को छोड़कर पूरा विश्व दास-क्षेत्र बन गया। केवल जापान, चीन और रूस के कुछ भाग भौगोलिक पृथकता के कारण लाभान्वित रहे। यह तत्कालीन विश्व की दुखद सच्चाई थी।

दास-देशों ने शासकों के साथ धर्म, संस्कृति, शिक्षा और नैतिकता जैसे मुद्दों पर समझौता किया। बेशक कुछ मुद्दों से गोरे दूर रहे, क्योंकि ये सब उनके लिए लाभकर और आवश्यक नहीं थे। इसलिए इन स्थानों के निवासी अपनी प्राचीन संस्कृति और परम्परा को जीवित रख सके, इतिहास में बहुत वर्षों बाद स्वास्थ्य, शिक्षा, भोजन और धन की आवश्यकता ने इन्हें विकसित शासक समाज से जुड़ने को विवश किया। फिर भी ये अपनी प्राचीन संस्कृति, प्रथा और परम्परा आज भी बचाए रखने में सफल रहे।

इन अमूल्य संस्कृतियों की पुन: स्थापना कैसे की जाए? प्रत्येक परिवार का अपना अलग भूगोल और इतिहास है। अगर हम प्रत्येक परिवार का भूगोल और इतिहास निकालें, तो हमें हर परिवार के बहुत सारे तत्त्व एक जैसे मिलेंगे। एक साथ जोड़ने पर यह एक गाँव का इतिहास और भूगोल बनेगा। इसी सिद्धान्त का अनुसरण कर हम हर प्रमंडल, राज्य और देश का इतिहास और भूगोल खोज सकेंगे। सारे विश्व के मानव को, यूरोप और अमेरिका को भी अपने परिवारों पर अनुसंधान कर अपनी आदि संस्कृति और सभ्यता को खोजकर निकालने का प्रयास करना चाहिये। भगिनी निवेदिता ने संकेत किया था – ''हमें भूगोल के प्रकाश में इतिहास और इतिहास के प्रकाश में भूगोल पढ़ना चाहिए।'' नये विश्व की सभ्यता और संस्कृति इसी प्रक्रिया से समाहित होगी।

अब प्रश्न उठता है कि क्या इतने वर्षों बाद इतनी भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ समाहित हो सकती हैं? क्या अतीत के पारम्परिक मूल्यों, सिद्धान्तों का पुनरुद्धार करना सम्भव है? निस्सन्देह विशेषकर ईसाई और मुस्लिम धर्म के आगमन से सब कुछ मिश्रित हो गया है, फिर भी प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे से पृथक् है। वस्तुत: विविधता में एकता का अनुसन्धान ही संस्कृति और सभ्यता कहलाता है।

ऐसी सम्भावना है कि हम यह अनुसन्धान करें कि पूरे विश्व में एक ही पूर्व आर्य-संस्कृति थी। भारत ७०० साल तक मुस्लिम शासन के अधीन था और ३०० वर्षों तक ईसाइयों के अधीन था। चीन का एक बड़ा भाग मुस्लिम और ईसाइयों के अधीन था। यही इतिहास रूस और अफ्रीका का भी है। सभी लोग एक साथ रहते हुए अपने देश के सुख-दुख बाँट लेते हैं।

यूरोपवासी और अमेरिकी अफ्रीका में बाहर से आये हुये थे। उन लोगों ने अफ्रीका का विकास अपने लाभ और प्रयोजन के अनुसार किया। अँग्रेजों की अफ्रीका में रुचि अपनी मूल संस्कृति और सभ्यता को स्थापित करना था।

भारत की बात कुछ अलग है। मुसलमानों ने भारत को अपना स्वदेश बना लिया। प्राकृतिक रूप से हिन्दू और मुसलमान सबने लगभग एक जैसी पीड़ा और लाभ का अनुभव किया और समानान्तर समझ से सहमत होकर जीवन निर्वाह कर रहे हैं। तत्कालीन अविभाज्य भारत में यूरोप की विशेष अभिरुचि थी। भारत अपनी धन-सम्पदा-समृद्धि के कारण विख्यात था। यूरोपवासियों को भारत में उर्वर भूमि बहुत सारे साधनों के साथ और विशेष रूप से मानव साधन मिला। वे इनका सब प्रकार से शोषण करने लगे। उन लोगों ने जो कुछ भी सड़क, रेलवे, तकनीकी, पुलिस, सेना और शिक्षा में विकास किया, वह भारत के हित के लिये नहीं, अपितु अपने हित के लिए, भारत का शोषण करने के लिये किया। पहले की शिक्षा, परिवहन, कृषि, कुटीर उद्योग, सब कुछ हटाकर शोषण के लिए अंग्रेजी परिवर्तन किये। भारत में एक छोटा अल्पसंख्यक चापलूसों का दल था, जो अंग्रेजों की सहायता करता था। नए क्षेत्र जैसे – शिक्षा, कृषि, उद्योग और व्यवसाय के लिए मानव संसाधन चाहिए। इसलिए अंग्रेजों ने शोषण के लिए शिक्षा की नयी पद्धति आरम्भ की। वे अल्पसंख्यक चापलूस लोग सुख-भोग का जीवन जीते थे और ९०% भारतीय गलियों के भिखारी से भी बुरा जीवन जीते थे।

भारतीयों में जिन्हें विदेश भ्रमण का अवसर मिला, वे लोग यूरोप और अमेरिका का विकास देखकर समझ गए कि इन देशों का वैभव भारतीयों के कारण है। कुछ उदार हृदय वाले लोगों ने आवाज उठाई और एक नयी सोच भारत में सुलगने लगी।

अपनी प्रशासनिक सुविधा हेतु अँग्रेजों ने भारत को चार

भागों में विभाजित किया – कलकत्ता, बम्बई, मद्रास और दिल्ली। बम्बई धन सामग्री के लिए बहुत ही संवेदनशील थी। मद्रास न्यायिक और गणितीय था। दिल्ली निष्क्रिय थी, परन्तु कलकत्ता उस समय बहुत ही संवेदनशील, लाभकर और अशान्त था। शासकों ने शोषण करने हेतु नौकरी का सुयोग दिया, जिसमें अँग्रेज व भारतीय दोनों की आवश्यकता थी। अँग्रेज केवल अधिकारी होंगे और बाकी सभी आज्ञापालक रहेंगे। एक ही काम के लिए अंग्रेजों को ३०० रुपए मिलते थे और भारतीयों को मात्र ३० रुपए। यह भारतीयों के लिये उस समय का सबसे अधिक वेतन था।

अन्याय, उत्पीड़न बहुत ही स्पष्ट था। शिक्षित और योग्य लोग इससे असन्तुष्ट थे। उनकी असन्तुष्टि भिन्न-भिन्न स्थानों पर व्यक्त हो रही थी। अंग्रेजों ने भारतीय शिक्षितों को अधिकारी, शिक्षक, प्रोफेसर, वकील, सैनिक और स्वास्थ्य कर्मी के रूप में उपयोग किया। हिमालयवासियों को सैनिक और शिक्षित योग्य लोगों को क्लर्क के रूप में नियुक्त किया। इनके द्वारा अंग्रेजों ने बाकी समुदाय का शोषण किया। स्वभावत: इससे समाज में क्रोध भड़क गया, किन्तु बहुसंख्यक शिक्षित व जागरूक लोग इस समस्या के समाधान में विवश दिखे।

इस पृष्ठभूमि से हमें स्वामी विवेकानन्द के द्वारा अमेरिका में सितम्बर, १८९३ में प्रदत्त व्याख्यान का मूल्य समझ में आता है। इससे विश्व के शोषित वर्ग को अपना नायक मिला। यह तथ्य तब सिद्ध हो गया, जब सम्पूर्ण भारत को प्रेरित करने के लिए स्वामीजी ने कोलम्बो से अलमोड़ा तक की यात्रा की। उनकी यात्रा ने युवा-पीढ़ी को नए विचारों और आदर्शों से जाग्रत किया। परन्तु १९०२ में उनके अचानक देहावसान से समस्त भारतीयों को गहरा धक्का लगा। भारतीयों को लगा कि उन्होंने अपना अमूल्य कुछ खो दिया, जो उनके करतलगत था। वे सब विवेकानन्द के विषय में और अधिक अध्ययन करने लगे और इसी प्रकार एक नये भारत की उत्पत्ति हुई।

फ्रांस-विद्रोह, स्वतन्त्रता के लिए अमेरिकी युद्ध, १९१७ में रूसी क्रान्ति और १९३४ में चीनीयों का दीर्घ प्रयाण के ज्ञान से भारतीयों का लहू खौल उठा। ऐसी ही कुछ और ऐतिहासिक स्थितियाँ उत्पन्न हुईं, जैसेकि असहयोग आन्दोलन और आजाद हिन्द आन्दोलन। अन्तत: अंग्रेजों ने भारतीयों पर पकड़ खो दी और विशेषत: दोनों विश्वयुद्ध के आक्रमण के बाद भारत छोड़कर चले जाना पसन्द किया, परन्तु वे भारत का विभाजन कर गये। वे दोनों भाग (भारत और पाकिस्तान) अंग्रेजों की विभाजित करो और शासन करो नीति से आज भी कष्ट पा रहे हैं। बर्मा और श्रीलंका पहले ही अलग कर दिए गए हैं। भारत की स्वतन्त्रता के बाद स्वतन्त्रता की लहर फैल गयी और यूरोप के सभी उपनिवेश परिस्थितिवश स्वतन्त्र हो गए। अब सभी राष्ट्र सामग्री, उद्योग, यातायात और व्यवसाय संसाधनों के कारण आपस में जुड़े हुये हैं।

फ्रांस-क्रान्ति के समय से जनता ने स्वाधीनता का अनुसन्धान सीख लिया। अमेरिका ने नए विचारों का परीक्षण किया, जैसे – 'प्रत्येक व्यक्ति की आत्मकथा है', 'प्रत्येक अपने पद पर महान है'। रूस ने जनता की पुकार में योगदान दिया। चीन ने जनता की शक्ति दिखायी। भारत ने सविनय अवज्ञा का मार्गदर्शन किया। इसलिये विश्व आज इन विचारों से धनी है, शक्ति की प्रदर्शन से और साथ ही इस बेचैनी से कि शक्तिशालियों की शक्ति को कैसे सम्भालें। तकनीकी और शक्ति के विकास ने इन परिस्थितियों को आश्रय दिया। जैसे माँ दुर्गा में सभी देव-देवियों की अच्छाइयाँ सम्मिलित हैं, वैसे ही जनमत, मतदान, सरकार का प्रतिनिधित्व, ये सब और कुछ नहीं, केवल आम जनता की शक्ति और शक्ति का संचय है। यह एक पवित्र विश्वास और शक्ति है, इसलिए जो लोग इसे सम्भालेंगे, वे अच्छी तरह से योग्य, सुसज्जित हों, नहीं तो इसका प्रभाव विनाशक होगा।

सरकार कोई दूसरा नहीं, बल्कि जनता की प्रतिनिधि है। जब तक जनता नैतिक स्तर पर बेहतर नहीं होती, तब तक हम बेहतर शासन की अपेक्षा नहीं कर सकते। स्वामीजी ने कहा था कि श्रीरामकृष्ण देव के अवतरित होने के बाद से सत्ययुग आ गया है और सभी मतभेद दूर हो जाएँगे और अल्पसुविधा प्राप्त जनता को वही सुविधाएँ प्राप्त होंगी, जो विशेष लोगों को मिलती हैं। यदि हम भारत की स्वतन्त्रताकालीन विश्व के अन्य देशों का इतिहास देखें, तो हमें दिखता है कि अन्य राष्ट्रों ने भी धीरे-धीरे स्वतन्त्रता प्राप्त की और जनता द्वारा शासन नियत समय पर प्रारम्भ हुआ। स्वामीजी ने इसे ब्रह्म-कुण्डलिनी के जागरण की भविष्यवाणी की थी।

प्रत्येक राष्ट्र अपनी योग्यता के अनुसार विकास कर रहा था। अब जनता को अपनी शक्ति, योग्यता और अन्य गुणों

के अनुसार अपने राष्ट्र को संचालित करने का सुअवसर मिला। परन्तु श्रीरामकृष्ण के आविर्भाव होने से कई और आयाम दिखे। यूरोप और अमेरिका ने जीवन का लक्ष्य भौतिक प्राप्ति समझा और उन्होंने कला, साहित्य, विज्ञान, नैतिकता, दर्शनशास्त्र और धर्म का भी उपयोग अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये किया। अपनी उन्नति के बाद भी इन देशों की जनता सन्तुष्ट और प्रसन्न नहीं थी। वहाँ शोषण, भ्रष्टाचार, दरिद्रता और आर्थिक अचिकित्सकीय बीमारियाँ थीं। यूरोप, अमेरिका तथा पश्चिमी रूस के वातावरण में कुछ लोग इसकी गन्ध का अनुभव कर रहे थे और इस अन्धकार से बाहर निकलने का मार्ग खोज रहे थे। उस परिस्थिति में स्वामी विवेकानन्द अमेरिका पहुँचे। हम सब जानते हैं कि स्वामीजी किस परिस्थिति में अमेरिका पहुँचे।

एशिया, अफ्रीका व ऑस्ट्रेलिया के राष्ट्र स्वतन्त्र थे। परन्तु यदि हम परीक्षण करें, तो हमें उनका इतिहास मानवों पर शोषण, भ्रष्टाचार और गरीबी से भरा हुआ मिलेगा। इस परिस्थिति से क्यों और कैसे निकला जाए? स्वामीजी ने कहा कि शिक्षा ही इन सब का राम-बाण है। तब प्रश्न उठता है कैसी शिक्षा? श्रीरामकृष्ण ने वर्तमान शिक्षा पद्धति की भर्त्सना की, जो केवल भोजन दे सकती है। उन्होंने अपना वेतन त्यागकर उससे सम्बन्धित सुरक्षा त्याग दिया। यह एक दृष्टान्त था। इसका अर्थ यह था कि यदि तुम आध्यात्मिक जीवन की उपेक्षा कर केवल भौतिक विकास पर ध्यान दोगे, तो इसका भयंकर दुष्प्रभाव होगा। इसलिए हमें सच्चे जीवन पर अपना ध्यान केन्द्रित करना है, वह है जीविका के साथ आत्म-अध्ययन – आध्यात्मिक विकास भी करना है।

श्रीरामकृष्ण का जीवन आकाश के तारे के समान है, जो सम्पूर्ण समाज को प्रकाश देता है। हमने देखा; उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से पश्चिम की, स्वामी विवेकानन्द द्वारा अभिनव वाणी से सहायता की। भारत में उन्होंने अपने जीवन के लक्ष्य को अलग ढंग से भिन्न मंचों, उदाहरणों से प्रस्तुत किया। रानी रासमणि ऐसी एक उदाहरण थीं, जिसने समाज के वर्ग का ध्यान आकर्षित करती थीं। वैसे ही केशवचन्द्र सेन एक दूसरे उदाहरण थे, जो समाज के कुछ अन्य वर्ग का ध्यान आकर्षित किया। बंकिमचन्द्र, विद्यासागर और शशधर एक अलग बुद्धिजीवि वर्ग के थे। उस समय के भिन्न-भिन्न भाषा और धर्म के साधक, देश के कोने-कोने से श्रीरामकृष्ण देव के पास प्रेरणा हेतु आए। यहाँ तक कि दरिद्र वर्ग के रसिक मेहतर तक उपेक्षित नहीं हुए।

यदि हम श्रीरामकृष्ण देव के अन्तरंग दल की ओर देखें, तो उसमें प्रतिभाशाली व्यक्ति जैसे – नरेन्द्र और श्रीम, धनियों में शुभचिन्तक जैसे बलराम बोस और सुरेन्द्र थे। कुछ वे लोग हैं, जो सोचते हैं कि उन लोगों ने जीवन में कुछ खो दिया, जैसे गिरीशचन्द्र घोष। बड़े गोपाल समाज के एक और वर्ग से आते हैं। कुछ लोग थे, जो अधिकांश मध्यम वर्ग के बुद्धिमान थे, परन्तु शुद्ध हृदय के थे। श्रीमाँ के पावन सान्निध्य में महान नारियों को पाते हैं, जो समाज को एक नया आयाम दे रही थीं। भगिनी निवेदिता महिला-मठ की प्रमुख केन्द्र बनी।

श्रीमाँ सारदा देवी, स्वामी विवेकानन्द और श्रीरामकृष्ण के अंतरंग शिष्य – गृहस्थ और संन्यासी दोनों ने ही सम्पूर्ण विश्व में एक सांस्कृतिक परिवर्तन लाया। समाज के विभिन्न क्षेत्रों में सर्वत्र हमें इस भावधारा के अनुयायी मिल जायेंगे, जिनका भिन्न दर्शन और जीवन-पद्धति है। अंतरंग शिष्यों में त्याग करने का उत्साह और सुख-दुख परस्पर विनिमय की भावना कभी लुप्त नहीं हुई। आज भी रामकृष्ण मिशन या वेदान्त सोसायटी के केन्द्र और उनसे जुड़े प्राइवेट सेन्टर में कितने लोग हैं, जो उच्च जीवन जी रहे हैं।

इसी प्रकार, रामकृष्ण-भावधारा पर शोध-कार्य हो रहे हैं। नए लोग जो इस कार्य में योगदान दे रहे हैं, उनकी खोज की जा रही है। इसके बाद भी लोग एक बेहतर विश्व के लिए रो रहे हैं। अब आवश्यकता है नैतिक शक्ति की, जो सामने खड़ा होकर कह सके कि क्या अच्छा है और क्या बुरा। यदि एक या दो लोग ऐसा बलिदान दे सकें, तो दूसरे भी जुड़ जायेंगे। स्वामीजी ने कहा था, शिक्षा पवित्रता के बिना क्रूर बना सकती है, जो विश्व में भरे पड़े हैं। वे लोग जो सत्ता में आते हैं, उन सबको श्रीमाँ सारदा देवी को अपना

आदर्श मानना चाहिए। अशिक्षित और सम्पत्तिहीन होते हुए भी श्रीमाँ फिर भी संन्यासी-संघ की महारानी रहीं, जिस संघ में समाज के प्रतिष्ठित रत्न आते हैं। इसके साथ ही श्रीमाँ एक उपद्रवी परिवार सम्भाल रही थीं और अपना निवास स्थान बारम्बार बदल रही थीं। अगर राष्ट्र के नेता उनकी विचार-धारा अपनाएँ, तो देश बेहतर दिशा में अग्रसर होगा।

जब यह भावधारा देश भर में प्रवाहित होने लगेगी, तब सज्जन लोगों को सुरक्षा मिलेगी और संस्कृति और सभ्यता बेहतर दिशा में जायेगी। अगर हम कुछ अच्छे लोगों की जीवन-शैली, जैसे जॉर्ज वॉशिंगटॉन (१७३२-९९), अब्राहम लिंकन (१८०९-६५), मार्टिन लूथर किंग जूनियर (१९२९-१९६८), मैजिनी (१८०५-१८७२), गैरीबॉल्डी (१८०७-८२), कमल अतातुर्क (१८८१-१९३८), व्लादिमीर लेनिन (१८७०-१९२४), नेल्सन मंडेला (१९१८-२०१३) और विश्व के कई विशिष्ट व्यक्तित्व, भारत, बांगलादेश और कई देश के त्यागी महान पुरुषों को हमने देखा है कि किस प्रकार इन लोगों ने स्वतन्त्रता पाने के लिए त्याग किया। पूरा विश्व एक सार्वजनिक उद्देश्य के लिए इनके पीछे था। अब इन देशों के लोग स्वाधीनता का आनन्द उठा रहे हैं, जो इन महापुरुषों के त्याग, बलिदान का फल है।

परन्तु स्वतन्त्रता के बाद छवि बदल गयी है। अब लगता है कि उनका पथ प्रदर्शन करने के लिए कोई एक सार्वजनिक लक्ष्य नहीं रह गया। फिर भी मानवीय प्रवृत्ती कुछ पाने लिए उत्सुक रहती है। इसलिये सत्ता और धन पाने के लिए प्रतिद्वन्द्विता आरम्भ हुई। प्रत्येक व्यक्ति में, दल में, जो शीघ्र ही सब कुछ पाना चाहते थे, ईर्ष्या धीरे-धीरे कुलबुलाने लगी। यह एक दुखद चित्र है, जो प्रत्येक नये राष्ट्र में दिखने लगा। वर्तमान में यदि शासक सहनशील, सच्चरित्र और सामंजस्यशील नहीं हैं, तो राष्ट्र का विकास रुक जाएगा। प्रारम्भ में अल्पसंख्यक दल, जो सत्ता में होते हैं, वे सभी सुविधाओं का आनन्द लेते हैं। इसलिये एक छोटा समूह भी अपने परिवार में, मुहल्ले में, क्षेत्र में विकास ला पाता है। लेकिन कुछ समय में स्वार्थ और प्रतिस्पर्धा धीरे-धीरे आने लगती है, जो दूसरों में गलतियाँ निकालने लगती है। इसलिये विभिन्न दल चुनाव में मत माँगने आएँगे और सभी एक-दूसरे को सही या गलत ढंग से हराकर चुनाव जीतना चाहेंगे। आज विश्व की यही स्थिति है। इस संघर्ष में निम्न वर्ग को दया के रूप में कुछ सामाजिक लाभ मिला है।

अब एक दूसरे जागरण का समय है। स्वतन्त्रता से पूर्व पूरा समाज एक उद्देश्य पर त्याग कर चुका है। उसी उत्साह और उमंग की पुन: आवश्यकता है। परन्तु बिल्ली के गले में घण्टी कौन बाँधेगा? नेतृत्व कौन करेगा? हर समाज में सज्जन लोग हैं, परन्तु वे लोकप्रसिद्धि नहीं चाहते। अगर कोई सामने आता है और कुछ बोलना चाहता है, तो उन्हें सूली पर चढ़ने जैसी पीड़ा सहनी पड़ती है, जो उत्तेजना जगा सकता है। जब भिन्न-भिन्न लोग विभिन्न क्षेत्रों से निश्छल होकर बलिदान देने को तत्पर होंगे, तब चीनी लोगों की १९३४ की लम्बी जुलूस यात्रा जैसी सामाजिक क्रान्ति आएगी। अब समाज में सज्जन हैं, पर ये लोग कोई खतरा उठाना नहीं चाहते। जैसे कुछ त्यागी लोगों ने स्वतन्त्रता के लिए अपना जीवन न्योछावर किया, अब फिर देवी माँ सच्चे आत्माओं को नैतिकता के साथ त्याग के लिए पुकार रही हैं। केवल वही जीते हैं, जो दूसरों के लिए जीते हैं। ○○○

पृष्ठ १५ का शेष भाग

भगवान नहीं हैं? सर्वप्रथम इनकी पूजा क्यों नहीं करते?

क्या तुम नि:स्वार्थ हो? – यदि हाँ, तो आप बिना कोई आध्यात्मिक पुस्तक पढ़े; बिना गिरिजाघर, मन्दिर गए पूर्णरूप से सही हैं।'

हमें याद रखना है कि 'भारत का राष्ट्रीय आदर्श है – त्याग और सेवा। आप इसकी धाराओं में तीव्रता उत्पन्न कीजिए और शेष सब अपने आप ठीक हो जायेगा। इस देश में आध्यात्मिकता का झंडा कितना ही ऊँचा क्यों न किया जाये, वह पर्याप्त नहीं होता. केवल इसी में भारत का उद्धार है। (४.२६५)

समाप्त करने से पूर्व, मेरा परामर्श है कि युवाओं को प्रतिदिन स्वामी विवेकानन्द जी की ये अमूल्य पुस्तकें पढ़नी चाहिए – १. स्वामी विवेकानन्द पत्रावली और २. भारतीय व्यख्यान (कोलम्बो से अलमोड़ा का व्याख्यान)। ये पुस्तकें नियमित पढ़ने से जोश, उत्साह देती हैं और एक सफल आनन्दमय जीवन जीने के लिए प्रेरित और सक्रिय करती हैं तथा समाज में शान्ति और आलोक प्रदान करती हैं।

○○○

स्वामी विवेकानन्द की शिक्षा और युवाओं का चरित्र-निर्माण

स्वामी सुवीरानन्द

महासचिव

रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ, हावड़ा

स्वामी विवेकानन्द जी ने एक बार कहा था, 'मनुष्य-निर्माण करना मेरा जीवनोद्देश्य है।' उन्होंने कहा था, 'अब मेरी एकमात्र इच्छा है राष्ट्र को जगाना, सुप्त तिमिंगल जो अपनी शक्ति पर पूरा विश्वास खो चुका है तथा जो किसी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं करता।' स्वामीजी ने और कहा था, 'समाज को उसके तमोगुण की गाढ़ी निद्रा से जगाना होगा।' अब 'मनुष्य-निर्माण' का क्या तात्पर्य है? स्वामीजी ने रोषपूर्वक जनसाधारण को शव की संज्ञा दी थी। उन्होंने कहा था, 'मुर्दे को मुर्दे दफनाने दो'। स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में – 'प्रत्येक आत्मा अव्यक्त ब्रह्म है।' इसीलिए उन्होंने कहा – 'मैं उस परमात्मा का उपासक हूँ, जिसे अज्ञानी लोग मनुष्य कहते हैं।' उन्होंने घोषणा की – 'प्रत्येक मानव के अन्दर अनन्त पूर्णता है, यद्यपि वह अव्यक्त है। प्रत्येक मनुष्य के अन्दर पूर्ण साधुत्व, ऋषित्व अथवा अत्युच्च अवतारत्व की अवस्था प्राप्त करने अथवा भौतिक आविष्कारों के क्षेत्र में एक वीर की महानता को प्राप्त करने की सम्भावना है।' प्रत्येक मानव के अन्दर अव्यक्त 'दिव्यता' है। यह पूर्णता की यात्रा है तथा अन्तर्निहित दैवी सम्पद की प्राप्ति की चाभी 'मनुष्य निर्माणकारी' एवं 'चरित्र निर्माणकारी' मशीन ही है।

अब प्रश्न है : हम 'चरित्र' से क्या समझते हैं? साधारणत: चरित्र है संस्कार-समूह अर्थात् मनुष्य की अन्तर्निहित प्रवणताएँ। जहाँ तक प्रवणताओं का सम्बन्ध है, प्रत्येक मानव अपने आप में विलक्षण है। एक परिवार में भी, लगभग समान आनुवंशिक पृष्ठभूमि रहने पर भी, लोगों की प्रवणताएँ अधिकांशत: एक दूसरे से पृथक् होती हैं। अपनी पुस्तक 'कर्मयोग' में स्वामीजी तीन मौलिक प्राकृतिक गुणों का निरूपण करते हैं – सत्त्व, रज एवं तम। हम देखते हैं कि समाज में ये तीन गुण मानसिक स्थिरता, सक्रियता एवं जड़ता के रूप में अपने आप को अभिव्यक्त करते हैं।

स्वामीजी ने देखा कि सम्पूर्ण राष्ट्र तमोगुण के घोर अन्धकार में डूबा हुआ है। व्यक्ति को उठकर खड़ा होना होगा एवं जड़ता को त्यागकर सक्रियता के सागर में छलांग लगानी होगी। घोर परिश्रम के पश्चात् मन शुद्ध हो जाता है तथा व्यक्ति सात्त्विक बन जाता है। दशेन्द्रियों के माध्यम से अनेकानेक शुभाशुभ प्रवणताएँ युगपद हमारे अन्दर कार्यरत हैं। इस प्रकार हम क्रमश: अपनी इच्छाशक्ति को मजबूत करते हैं। स्वामीजी कहते हैं, 'तुम वैसे हो, जैसा तुमने बनना चाहा'। अशुभ प्रवणताएँ हमारा पीछा करेंगी, अशुभ कार्य करने हेतु हमें बाध्य करेंगी, जो अशुभ कार्य हमें 'अन्धेरे' से 'घोरतर अन्धेरे' में ले जायेंगे। इस अवस्था में जिस चीज की आवश्यकता है, वह है दृढ़ इच्छाशक्ति, ताकि हम अन्तर्निहित अशुभ शक्ति को परास्त कर शुभ शक्ति को प्रोत्साहित करें एवं शुभ कार्य में प्रवृत्त हों। इसलिये 'मनुष्य निर्माणकारी' एवं 'चरित्र निर्माणकारी' कार्य में तीन गुण परम आवश्यक हैं, वे हैं एकाग्रता, आत्मविश्वास एवं दृढ़ धारणा। 'मनुष्य निर्माणकारी' एवं 'चरित्र निर्माणकारी' शिक्षा की पराकाष्ठा उस अवस्था को प्राप्त करना है, जहाँ से व्यक्ति भगवान बुद्ध के सन्देश – 'आत्मदीपो भव' को समझ सके। इच्छा का प्रवाह एवं उसकी अभिव्यक्ति व्यक्ति के नियंत्रण में होनी चाहिए। व्यक्ति को अशुभ संस्कारों को प्रभावहीन बनाने तथा शुभ संस्कारों को परिमार्जित कर समृद्ध करने में सक्षम होना चाहिए। स्वामीजी कहते हैं कि मनुष्य एवं राष्ट्र को महान बनाने हेतु तीन चीजों की आवश्यकता है। वे तीन चीजें कौन-सी हैं? १. भला बनना एवं भला करना २. ईर्ष्या का अभाव ३. दृढ़ धारणा-शक्ति।

प्रबुद्ध नागरिकों में हम दो तरह के लोग पाते हैं – एक प्रकार के लोग 'अभ्युदय' (सांसारिक समृद्धि) की अभिलाषा

करते हैं एवं तदर्थ संघर्ष करते हैं तथा दूसरे प्रकार के लोग 'निःश्रेयस्' (मोक्ष) हेतु प्रार्थना करते हैं। भगवान शंकराचार्य ने कहा है – '**द्विविधो हि वेदोक्तो धर्मः प्रवृत्ति लक्षणः निवृत्तिलक्षणश्च**' अर्थात् वेदोक्त धर्म दो प्रकार के हैं – प्रवृत्तिपरक एवं निवृत्तिपरक। इस सन्दर्भ में हम मानव जीवन पर दृष्टिपात कर सकते हैं। हम पाते हैं कि मानव जीवन चार पुरुषार्थों का चतुष्कोण है – धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष। प्रवृत्तिमार्गी को धर्म से मोक्ष तक की यात्रा करनी है, जबकि मुमुक्षु को केवल जीवन के चरम लक्ष्य यानि मोक्ष पर ही अपना पूरा ध्यान केन्द्रित करना है। इसीलिए हमारी संस्कृति में तीन प्रकार की बाधाओं की बात कही गयी है – आधिभौतिक, आधिदैविक एवं आध्यात्मिक। प्रबुद्ध नागरिक बनने के ईप्सित लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु हमें एक-एक कदम आगे बढ़ना होगा।

भले एवं बुरे के बीच विवेक की शक्ति ही सच्चे मनुष्य का निर्धारण करती है। सच्चा मनुष्य वही है, जो निरन्तर पूर्णता की ओर अग्रसर हो। यही पूर्णता मनुष्य को सही अर्थ में मनुष्य बनाती है। श्रीरामकृष्णदेव ने कहा है – 'मानुष' शब्द 'मान' (मर्यादा एवं सम्मान) एवं 'होष' (भले एवं बुरे, सकारात्मक एवं नकारात्मक आदि के बीच विवेक की शक्ति) के योग से बना है। वेद का विधान है – '**यानि अनवद्यानि तानि सेवितानि नो इतराणि**' – अर्थात् केवल वही कार्य करने चाहिए, जो व्यक्ति के लिए, परिवार के लिए, राज्य के लिए एवं पूरे राष्ट्र के लिए अच्छे हों। जो व्यक्ति लालच को दूर रखकर सन्मार्ग पर चल सके, वही सच्चा मनुष्य है।

तरवोऽपि हि जीवन्ति जीवन्ति मृगपक्षिणः।
स जीवति मनो यस्य मननेन हि जीवति।।

स्वामीजी ने एक बार कहा था – मैं ऐसे सभी लोगों को विश्वासघातक समझता हूँ, जो गरीबों के परिश्रम की कीमत पर शिक्षित होकर भी उनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते। एक सच्चे चरित्रवान मनुष्य के अन्दर दूसरों के प्रति सहानुभूति, प्रेम और दया अवश्य होनी चाहिए। स्वामीजी हम सबका आह्वान करते हुए कहते हैं, 'जो व्यक्ति जहाँ है, वहीं से उसे उठाओ एवं उन्नत करो।' इसीलिए मेरे मतानुसार, स्वामीजी के संदेशों एवं उपदेशों का सार दो शब्दों में है : 'बनो' और 'बनाओ'।

आज के समाज का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष है : शिक्षा में मूल्यबोधपरक व्यवस्था। यह हमारे देश के नवयुवकों के कल्याण से सम्बन्धित है एवं अति महत्त्वपूर्ण है। एक ओर मूल्यबोध में बहुचर्चित गिरावट एवं समसामयिक समाज में सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं जीवन सम्बन्धी समस्याओं में अति वृद्धि है तथा इस परिदृश्य का अति दुःखद पहलू है कि अधिकांशतः युवक ही इन समस्याओं से आक्रान्त हैं, तो दूसरी ओर यह स्पष्ट है कि इन समस्याओं में से अधिकांश का या तो परिवर्जन किया जा सकता था या उन्हें कम किया जा सकता था, यदि युवकों को नैतिक सही शिक्षा प्राप्त होती, उन्हें व्यक्तिगत मार्गदर्शन तथा परामर्श प्राप्त होता।

पहले स्वयं सीखो फिर दूसरों को सीखाओ

बंगाली भाषा में एक कहावत है – 'आपनि आचरि धर्म परेरे शिखाउ' अर्थात् धर्म का स्वयं आचरण कर दूसरे को सिखाओ। दूसरों को उपदेश देने के पहले स्वयं उसका आचरण करो। 'मनुष्य निर्माणकारी' एवं 'चरित्र निर्माणकारी' पद्धति के लिए यह अनिवार्य है। गाँधीजी के जीवन से मैं एक दृष्टान्त देता हूँ।

एक छोटा बालक चीनी खाने का आदि हो गया था। वह बहुत चीनी खाता था। उसकी माँ बहुत चिन्तित हो गयी कि यदि कोई इस परिमाण में चीनी खाये, तो आज नहीं कल वह अवश्य गम्भीर रूप से बीमार पड़ जायेगा। अपने पुत्र को इस अस्वास्थ्यकर अभ्यास से रोकने हेतु माँ ने यथासम्भव कोशिश की। लेकिन इसका कोई फल नहीं हुआ। पुत्र ने अपनी माँ की बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया। 'क्या किया जाये?' माँ सोच रही थी। अचानक उसके दिमाग में यह बात आयी कि उसका पुत्र गाँधीजी को चाहता है एवं गाँधीजी यदि वही परामर्श दें, तो बालक उसका पालन जरूर करेगा। गाँधीजी के प्रति उसका ऐसा सम्मान भाव था ! एक दिन बालक की माँ उसे गाँधीजी के पास ले गयी। उन्होंने गाँधीजी से अपनी समस्या की कहानी बतायी – उसका पुत्र चीनी खाने का आदि है तथा वह बहुत चिन्तित है कि

यदि उसकी यह बुरी आदत नहीं छूटी, तो एक दिन वह अवश्य गम्भीर रूप से बीमार पड़ जायेगा। उस महिला से सारी कहानी सुनने के बाद गाँधीजी ने उससे अपने पुत्र को पन्द्रह दिनों के बाद ले आने को कहा। माँ और पुत्र दोनों घर लौट गये। ठीक पन्द्रह दिनों के पश्चात् माँ और पुत्र पुन: गाँधीजी के पास गये। गाँधीजी ने लड़के को अधिक चीनी नहीं खाने का परामर्श दिया और कहा कि इससे गम्भीर स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरा पैदा हो सकता है। लड़के ने उसी दिन से चीनी खाना छोड़ने का वचन दिया। माँ बहुत खुश हो गयी। उन्होंने बापूजी को धन्यवाद दिया और कहा, 'बापूजी, मैं निश्चिन्त थी कि मेरा लड़का आपकी बातों को मानेगा, लेकिन आपने मेरे लड़के को यह परामर्श देने के लिए पन्द्रह दिन क्यों लगाये?' गाँधीजी ने कहा, 'पन्द्रह दिन पहले जब तुम आयी थी, उस समय मैं स्वयं बहुत चीनी खाता था। परन्तु, पिछले पन्द्रह दिनों में मैंने वह अभ्यास छोड़ दिया है। मैंने सोचा, अब मैंने इस लड़के को परामर्श देने का नैतिक अधिकार प्राप्त कर लिया है। मैंने परामर्श दिया और वह परामर्श मानने के लिए राजी भी हो गया।' उपदेश देने की अपेक्षा आचरण करना अधिक अच्छा है। अतएव, संदेश स्पष्ट एवं जोरदार है – 'आपनि आचरि धर्म परेरे शिखाउ'- पहले 'बनो' और फिर 'बनाओ'।

नैतिक शिक्षा के प्रसार में एक कठिनाई यह है कि विश्व के धर्मसमूह को परम्परागत रूप से नैतिकता का परिरक्षक माना गया है तथा भारतीय समाज सुस्पष्ट रूप से अनेकवादी है। अतएव नैतिक शिक्षा प्रसार का प्रयास, विशेषकर हमारे शिक्षा संस्थानों के माध्यम से, विवाद एवं नकारात्मक प्रतिक्रिया को जन्म दे सकता है। भारत की अनेकवादी परिस्थिति में जिस चीज की आवश्यकता है वह है एक ऐसा नैतिक-सिद्धान्त-समूह जो सार्वजनिक रूप से स्वीकार्य हो तथा जो हमारे शासन व्यवस्था के अनेकवादी एवं समावेशी प्रकृति के अनुकुल हो।

स्वामीजी का युवाओं पर विश्वास

इस देश के युवकों के लिए स्वामी विवेकानन्द जी एक अनुकरणीय आदर्श तथा युवा-शक्ति, सक्रियता एवं संवेदनशीलता के मूर्तरूप हैं। उन्होंने युवा मस्तिष्क को यह कहकर प्रदीप्त किया – 'मेरा विश्वास युवा पीढ़ी, आधुनिक पीढ़ी पर है। उनमें से मेरे कार्यकर्ता आयेंगे। वे ही सिंह की तरह सारी समस्याओं का समाधान करेंगे।'

स्वामी विवेकानन्द जी के उपदेश आज भी प्रासंगिक हैं, जब विखण्डनकारी शक्तियाँ दिन-रात हमारे देश को कमजोर करने में लगी हुई हैं। हम आशा करें कि उनके दर्शन तथा उनके आदर्श हमारी युवा पीढ़ी को अनुप्रेरित करते रहेंगे। भारत की युवा पीढ़ी में यह क्षमता है कि वह

स्वामी विवेकानन्दजी के उस भविष्यवाणी को सत्य साबित कर दे कि 'भारत समृद्धि एवं शक्ति के उच्चतर शिखर पर पहुँचेगा।'

युवावस्था जीवन का वह अद्‌भुत समय है, जब ऊर्जा असीम होती है, मानवीय सृजनशीलता अपनी चरम पर होती है तथा कभी हार न माननेवाली भावना अपनी शिखर पर होती है। स्वामी विवेकानन्दजी ने कहा था, 'मुझे १०० वीर्यवान् युवक दे दो और मैं भारत का कायाकल्प कर दूँगा।' भारतीय युवाओं के ऊपर उनका विश्वास कभी डिगा नहीं।

युवावस्था वह अति-संवेदनशील अवस्था है, जिसमें हम अपने आप को एक आदर्श के अनुरूप ढालना चाहते हैं। महान स्वामी विवेकानन्द के अतिरिक्त और कौन भारतीय युवावर्ग के लिए बेहतर आदर्श हो सकते हैं? हमारे युवाओं में चुनौतियों से सामना करने की सामर्थ्य है; साथ ही, हमें यह कड़वी सच्चाई भी स्वीकार करनी होगी कि उनकी प्राथमिकता सूची में यह ऊर्ध्वस्थान पर नहीं है। हम कैसे आशा करें कि हमारे युवक राष्ट्र-निर्माण को सृजनशील जीवन के एक महत्त्वपूर्ण पक्ष के रूप में समझेंगे, जबकि आज उनके आदर्श साधारणत: आर्थिक, प्रौद्योगिकी, संगीत, सिनेमा एवं खेल-कूद के क्षेत्र से होते हैं? हम उनसे कैसे आशा करें कि वे हमारे सामने उपस्थित असंख्य समस्याओं का समाधान करेंगे? जटिल सामाजिक, आर्थिक, संरचनात्मक, राजनैतिक एवं निर्धनता-सम्बन्धी समस्याओं का समाधान करना वास्तव में बहुत बड़ी चुनौती है।

युवा अनुभव करें

स्वामी विवेकानन्दजी ने 'त्याग' एवं 'सेवा' के आदर्श पर 'राष्ट्र-निर्माण' करने का परामर्श दिया था, जो युवकों के लिए एक अति महत्त्वपूर्ण जीवनोद्देश्य है। अधिक विवेकशील लोगों के लिए इस जीवन-पद्धति को उन्होंने 'आध्यात्मिक साधना' का रूप दिया था। उन्होंने अति साधारण शब्दों में युवकों के समक्ष जीने के लिए उच्चतर आदर्श एवं प्राप्तव्य उच्चतर अवस्था का निर्देश किया है, जो मानवीय अस्तित्व की सीमाबद्धता एवं चारदीवारी के अन्दर सम्भव है। एकमात्र योग्यता जो स्वामीजी युवकों में देखना चाहते थे, वह है 'अनुभव करने' की आश्चर्यजनक क्षमता। हमारे देशवासियों, पददलितों एवं गरीबों के प्रति वे एक ऐसी संवेदनशीलता चाहते थे, जो हमें निद्राहीन कर दे, हमारे सिर में चक्कर ला दे तथा हमारे दिल की धड़कन को बन्द कर दे। उन्होंने हमें विश्वास दिलाया है कि ऐसा करने पर हमारे अन्दर एक अदम्य शक्ति आविर्भूत होगी एवं हम अपनी व्यक्तिगत सारी चिन्ताओं को दूर फेंककर अपने आप को समाज के सेवक के रूप में प्रस्तुत करेंगे तथा अपनी आन्तरिक शक्ति एवं इच्छा का प्रयोग मानवजाति की समस्याओं के पार जाने में करेंगे।

जो संवेदनशीलता की सीमा को पारकर निश्चित कार्य करना चाहते हैं, उनके लिए उन्होंने यह प्रभावशाली मंत्र प्रदान किया है – पवित्रता, धैर्य एवं अध्यवसाय की शक्ति। मेरे मतानुसार, ये तीन शब्द उन गुणों के बोधक हैं, जो गुण समाज-सेवा करने के इच्छुक प्रत्येक युवक को धारण करना चाहिए। मन, वचन एवं कर्म में पवित्रता। समाज-विकाससम्बन्धी क्रिया-कलाप की गति-प्रकृति को समझने एवं इस वास्तविकता को जानने का धैर्य कि समाज हमेशा से समझने में देर करता है तथा इस तरह के क्रिया-कलापों को नामित करने में शीघ्रता करता है। साथ ही, भारतीय समाज के जटिल परिवेश में कार्य करने हेतु महान अध्यवसाय की भी आवश्यकता है। सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक विविधताओं के बीच कार्य करने हेतु अत्यधिक अध्यवसाय की आवश्यकता है।

युवाओं हेतु ५ प्रकाश स्तम्भ

आज के छात्रगण अति भ्रमित हैं – किसका अनुसरण करें? किस पर विश्वास करें? कैसे आगे बढ़ें? किसको आदर्श मानें? इस अवस्था में स्वामी विवेकनन्द जी के अनुप्राणित करनेवाले जीवन एवं सन्देश शाश्वत अनुप्रेरणा, मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन प्रदान करनेवाले हैं। स्वामीजी के संदेशों पर आधारित ५ प्रकाश-स्तम्भों के बारे में मैं यहाँ बताऊँगा जो सभी छात्र-छात्राओं के लिए दिशा-निर्देशों का कार्य करेंगे। वे हैं – लक्ष्याभिमुखीकरण (goal orientation), नैतिक परिपूर्णता (moral integrity), आत्मानुशासन (self-discipline), सेवा (service) एवं बल (strength)।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में मानवीय विकास की कहानी का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि मानव एक नि:संग व्यक्ति के रूप में दूसरे मानवाकृति (ab-human) जानवरों से बेहतर नहीं है। यहाँ स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है कि फिर मानव को अव-मानवीय (sub-human) एवं मानवाकृति (ab-human) जीवों से वस्तुत: क्या पृथक् करता है? उत्तर है : मानव सोचने, विश्वास करने तथा मिलकर कार्य करने की क्षमता रखता है। मानव के ये विशिष्ट गुण प्राणी जगत में उन्हें दूसरे जीवों से श्रेष्ठ बनाते हैं। उदाहरणस्वरूप, चीटियाँ समूह में चल सकती हैं, लेकिन युद्ध की घोषणा करते हुए एक साथ मिलकर रानी-चींटी को मारकर एक जाति-वर्णहीन या समाजवादी समाज की स्थापना नहीं कर सकती हैं। मधुमक्खियों के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है। वे एक साथ उड़ती हैं, लेकिन वे एक साथ मिलकर रानी-मधुमक्खी को मारकर समतावादी समाज की स्थापना नहीं कर सकती हैं। रुपये-पैसे के उपयोग सम्बन्धी हम दूसरा उदाहरण लें। मान लो कि तुमने चिम्पांजी को एक नोट दिया तथा उसके बदले में उससे एक जोड़े केले दिखाकर उससे कहो कि उस नोट को दिखाकर वह पाँच केले ले सकता है। इन शब्दों का उसके लिए कोई अर्थ नहीं है। लेकिन एक मानव तुम्हारी बातों को गम्भीरता से लेगा। मनुष्य स्वर्ग, नरक, जाति-वर्णहीन समाज, शेयर बाजार में गिरावट, राष्ट्रवाद, विश्वभ्रातृत्व का सिद्धान्त आदि बातों पर विश्वास करता है। लेकिन एक मानवाकृति दूसरा जीव वैसा नहीं कर सकता है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं – सत्य, विश्वास, दृढ़ धारणा, एकाग्रता आदि ऐसे गुण हैं, जो तुम्हें एक सच्चा मनुष्य बनाते हैं।

यदि हम मानवजाति के इतिहास को देखें, तो तीन चीज सामान्यत: पायेंगे – अकाल, महामारी एवं युद्ध। इस २१वीं शताब्दी में भी क्या आप अपने हृदय को स्पर्श कर कह

सकते हैं कि हमने इन तीन आपदाओं पर विजय प्राप्त कर ली है? हमें इसका उत्तर देना होगा। नि:संदेह, इसका अर्थ अनिवार्य रूप से यह नहीं है कि हमने इस दिशा में कोई प्रगति नहीं की है। हमने भौतिक एवं सांसारिक विकास के कुछ क्षेत्रों में आश्चर्यजनक रूप से अच्छे कार्य किये हैं। परन्तु, इन सारे विकासों के बावजूद अभी तक हम अकाल, महामारी एवं युद्ध के खतरों से बाहर आने में समर्थ नहीं हुए हैं। उदाहरणार्थ कोविड-१९ की महामारी को लें। हम सभी यह जानते हैं कि इस अति सूक्ष्म घातक वाइरस के द्वारा संसार भर में क्या तबाही मचाई गयी। फिर भी हम युद्ध की गड़गड़ाहट सुन रहें हैं। जब तक मानव के अन्दर पशु-प्रकृति रहेगी, तब तक युद्ध की यह गड़गड़ाहट सुनाई देगी। वर्तमान परिदृश्य में भी क्या हम दावा कर सकते हैं कि हमने अकाल एवं भूखमरी पर पूरी तरह विजय प्राप्त कर ली है?

सभी क्षेत्रों में अच्छाई की ओर बदलाव हुए हैं – लेकिन अपने विचार, कर्म एवं अभिव्यक्ति के द्वारा अपनी दिव्यता को व्यक्त करने में, जैसाकि स्वामी विवेकानन्द जी हमसे अपेक्षा रखते थे, हम बुरी तरह असफल रहे हैं। हम रूसी लेखक चेखोव को याद करें, जिन्होंने कहा था – यदि ओपेरा के पहले दृश्य में एक बन्दूक को देखते हैं, तो आप निश्चिन्त हो सकते हैं कि तीसरे दृश्य में उससे गोली अवश्य चलेगी। २१वीं शताब्दी के तीसरे दशक के प्रारम्भ में हम यह जानकर खुश हैं कि हम कुछ सीमा तक उस दृश्य से बाहर आ चुके हैं, जिसकी चेखोव ने हमारे लिए रचना की थी। लेकिन हमें यह बात याद रखनी चाहिए कि यद्यपि हमने भूखमरी, युद्ध आदि का तनाव काफी कम कर दिया है, नई समस्याएँ अपना बीभत्स सिर ऊपर उठा रही हैं। अब नई समस्याएँ हैं : अति भोजन, मोटापा, पर्यावरण सम्बन्धी असन्तुलन, जलवायु परिवर्तन, परानुभूति का अभाव, पारिवारिक बन्धनों में शिथिलता, व्यर्थ की बकवास, मानव की निर्दयता, मूल्य-परिवर्तन, सामाजिक मनोवृत्ति में परिवर्तन आदि। कुछ लोग आधुनिक युग को 'निगरानी पूँजीवाद का युग' (Age of Surveillance Capitalism) कहने से भी नहीं हिचकते हैं। अब लोग केवल दक्षता, विकास से ही सन्तुष्ट नहीं हैं, बल्कि 'कृत्रिम बुद्धि' बनाने की खोज में वे लग चुके हैं। यंत्र-मानवीय अभियांत्रिकी (Robotic Engineering) एवं कम्प्यूटर चमत्कार कर रहे हैं। लेकिन ये सारी चीजें हमें एक बंगाली लेख की एक उक्ति की याद दिला रही हैं कि 'विज्ञान दियेछे वेग, केडे नियेछे आवेग' अर्थात विज्ञान ने 'वेग' तो दिया है, परन्तु 'आवेग' को छीन लिया है। २०१३ में गूगल ने 'कैलिको योजना' नामक एक योजना आरम्भ की, जो बुढ़ापा तथा यहाँ तक की मृत्यु पर भी विजय प्राप्त करने हेतु संकल्पबद्ध है। हमने भौतिक खोज के क्षेत्र में बहुत अच्छा काम किया है, लेकिन आत्मा की खोज में हम उतने ही पीछे हैं।

स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था, 'प्रत्येक मनुष्य के भीतर तीन गुण (सत्त्व, रज एवं तम) हैं। कभी-कभी तम की प्रधानता होती है और हम आलसी हो जाते हैं, हम हिलडुल नहीं सकते, हम निष्क्रिय हो जाते हैं, हम कुछ विशिष्ट भावनाओं के दास हो जाते हैं या मतिमन्दता के शिकार हो जाते हैं। किसी दूसरे समय सक्रियता (रज) की प्रधानता होती है, तो कभी दोनों का शान्त-भाव रूप साम्य (सत्त्व) प्रबल हो जाता है। फिर अलग-अलग मनुष्यों में इनमें से किसी एक गुण की प्रधानता होती है। किसी के अन्दर निष्क्रियता, मन्दापन, आलस्य होती है, तो किसी के अन्दर सक्रियता, शक्ति, ऊर्जा की अभिव्यक्ति और किसी में हम माधुर्य, शान्ति एवं मृदुता का भाव देखते हैं, जो सक्रियता एवं निष्क्रियता का संतुलनरूप होता है। इस प्रकार सारी सृष्टि में – पशुओं, वृक्षों और मनुष्यों में हम इन विभिन्न गुणों की, न्यूनाधिक मात्रा में, विशिष्ट अभिव्यक्ति पाते हैं।'

ये तीन गुण विभिन्न अनुपात में प्रत्येक मनुष्य के अन्दर होते हैं तथा भिन्न-भिन्न समय में अलग-अलग गुण प्रबल होते हैं। प्रारम्भ में प्रबलता की दृष्टि से ये गुण बदलते रहते हैं, लेकिन धीरे-धीरे एक स्थायित्व आ जाता है, जो व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण करता है। परिणामस्वरूप इसे साधारणत: त्रि-आयामी व्यक्तित्व का सिद्धान्त कहा जाता है। उस मुख्य गुण के आधार पर जिसकी प्रधानता किसी व्यक्ति के अन्दर है, उसे हम सात्त्विक, राजसिक या तामसिक कह सकते हैं। एक सात्त्विक व्यक्ति दया, नि:स्वार्थता, परिपूर्णता, धैर्य, तितिक्षा, नम्रता तथा अन्य सद्गुणों से भूषित होगा। एक राजसिक व्यक्ति के अन्दर सक्रियता, अहंकार, वासना, महत्त्वाकांक्षा, भौतिकता, शक्ति-प्रदर्शन आदि की प्रचुरता होती है। जो व्यक्ति अधिकांश समय आलसी, मन्दमति, बेईमान, निराशावादी, ईर्ष्यालु तथा स्वकेन्द्रित हो, उसे तामसिक कहा जाता है।

स्वामीजी पुन: कहते हैं, 'पूरी पृथ्वी की परिक्रमा कर मैंने यही समझा है कि दूसरे देश के लोगों की तुलना में इस देश के लोग घोर तमोगुण में डूबे हुए हैं। बाहर से सत्त्व का स्वाँग है, किन्तु भीतर से निर्जीव पदार्थों एवं पत्थरों की तरह भारी जड़ता है। पाश्चात्यवासियों के जीवन में कार्य के प्रति कितना उद्यम एवं समर्पण है, कितना उत्साह एवं रजोगुण की कितनी अभिव्यक्ति है ! जबकि हमारे देश में, ऐसा लगता है कि मानो हृदय में खून जम गया है और वह नसों में नहीं दौड़ सकता है, ऐसा लगता है कि पूरे शरीर को लकवा मार गया है और वह शिथिल हो गया है। अतएव मेरा विचार है – सर्वप्रथम लोगों के अन्दर रजोगुण का भाव जागृत कर उन्हें सक्रिय बनाना तथा उन्हें जीवन संग्राम के उपयुक्त बनाना।'

किसी दूसरे अवसर पर उन्होंने कहा, 'भारत में रजोगुण प्राय: शून्य है। पाश्चात्य में यही अवस्था सत्त्वगुण की है। अतएव यह निश्चित है कि पाश्चात्यवासियों का व्यावहारिक जीवन भारत से सत्त्व यानि अन्तर्ज्ञान की धारा के प्रवाह पर निर्भर है तथा यह भी निश्चित है कि जब तक हम अपने तमोगुण को रजोगुण के विपरीत ज्वार से पल्लवित या नियन्त्रित नहीं करते हैं, तब तक हम इस जीवन में कोई सांसारिक उन्नति या कल्याण साधित नहीं कर सकते हैं। यह भी सत्य है कि परवर्ती जीवन से सम्बन्धित महान आकांक्षाओं एवं आदर्शों की प्राप्ति के मार्ग में हमें कई कठिन बाधाओं का सामना करना पड़ेगा।

धन कमाने में या ईश्वर की पूजा करने में या कोई भी कार्य करने में, एकाग्रता की शक्ति जितनी प्रबल होगी, वह कार्य उतना ही अच्छा होगा। यह वह पुकार है, जो प्रकृति के द्वार को खोल देता है और फिर प्रकाश की बाढ़ आ जाती है। यह एकाग्रता की शक्ति ही ज्ञान के भण्डार की एकमात्र चाभी है। राजयोग की पद्धति केवल इसी का निरूपण करती है। हमारी वर्तमान अवस्था में हम अति बहिर्मुखी हैं, मन सैकड़ों प्रकार की चीजों के पीछे अपनी शक्ति नष्ट कर रहा है। जैसे ही, मैं अपने विचार को शान्त कर मन को ज्ञान के किसी एक विषय पर एकाग्र करना चाहता हूँ, मस्तिष्क में हजारों अवांछित भावनाएँ प्रवेश कर जाती हैं, हजारों विचार मन में प्रवेश कर जाते हैं एवं उसे कैसे रोकें एवं मन को नियन्त्रण में कैसे लायें, यही राजयोग में अध्ययन का मुख्य विषय है।

स्वामी विवेकानन्द जी एवं उनके संदेश को समझना तथा हमारे युवकों तक उसे पहुँचाना ही, मेरी समझ से वह सरलतम मार्ग है, जिसके द्वारा हम भारत की वर्तमान कई समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। प्रत्येक युवक अपने आप से आरम्भ कर सकता है, अपने व्यक्तित्व को ठीक से गठित कर भविष्य के कार्य हेतु अपने आपको तैयार कर सकता है। उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि भविष्य के कार्य के अनुरूप उसकी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक योग्यता है। युवकों को एक सही दिशा चाहिए तथा दूसरों की सेवा के अतिरिक्त और कौन बड़ा केन्द्रीभूत लक्ष्य हो सकता है ! व्यवहारिक होना होगा तथा किसी कार्य को हाथ में लेने से पहले अपनी आवश्यकताओं एवं सीमाबद्धताओं को ध्यान में रखना होगा। पहले अपने आप से प्रारम्भ करना होगा, फिर अन्य योग्य लोगों को शामिल करने हेतु लक्ष्य को ध्यान में रखकर धीरे-धीरे अपनी पहुँच बढ़ानी होगी। यह एक माध्यम है, जिसके द्वारा हमारे सामाजिक कार्यों की सफलता एवं व्यवहारिकता को आज के युवाओं के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रत्येक युवा तकनीकी विशेषज्ञ, वैज्ञानिक, अभियन्ता, चिकित्सक आदि जो हो, वही बने रह सकता है। जो सबसे महत्त्वपूर्ण है, वह है यह समझ कि सामाजिक कार्यों को करने से न केवल हमारे आसपास के लोगों की समस्या का समाधान होगा, बल्कि हमारे अन्दर की समस्याओं एवं द्वन्द्वों का भी समाधान हो जायेगा।

अतएव हमें हृदय के अन्तस्तल से यह स्वीकार करना पड़ेगा कि स्वामी विवेकानन्द जी ने आधुनिक युग में भारतीय विचारों को नया स्वरूप प्रदान किया है एवं युवा पीढ़ी के लिए वे सर्वोत्तम आदर्श हैं।

यद्यपि मैं यहाँ यह जोड़ना चाहूँगा कि मेरी समझ में स्वामीजी के अनुप्रेरणादायी एवं जीवनदायी सन्देश न केवल युवा पीढ़ी के लिए हैं, बल्कि जीवन के हर क्षेत्र के लोगों – शिक्षकों, चिकित्सकों, व्यवसायियों, विशिष्ट सेवादारों, वरिष्ठ नागरिकों आदि सबके लिए हैं। हम जीवन के जिस किसी क्षेत्र में क्यों न हों, जिस किसी व्यवसाय में क्यों न हों, जिस किसी आयु-वर्ग के क्यों न हों, स्वामीजी हमारे सामने त्याग, सेवा एवं आध्यात्मिकता के ज्वलन्त प्रतीक के रूप में खड़े हैं। ○○○

वेद, उपनिषद् और पुराणों का युवाओं के चरित्र-निर्माण में योगदान

डॉ. सत्येन्दु शर्मा

सहा. प्राध्यापक, शा. महिला महाविद्यालय, रायपुर

वेद, उपनिषद् और पुराण ज्ञान के आदि स्रोत और विश्वकोश हैं, जिनमें सदियों से सुरक्षित हमारी भारतीय सांस्कृतिक विरासत सम्पूर्ण मानवजाति की सर्वांगीण अभ्युदय-यात्रा में अनवरत मांगलिक मार्गदर्शन करती रही है। कदाचित् ही कोई ऐसा विषय हो, जिन पर वेद, उपनिषद्, पुराणों में चिन्तन उपलब्ध न हो। जीवन जीने की कला हो या मृत्यु पश्चात् जीव-शान्ति-विधान, प्रकृति, वनस्पति हो या पशुजगत्, रीति-नीति या इहलोक से परलोक तक की उच्चतम चिन्तन पराकाष्ठा, समस्त विद्याएँ इन ग्रन्थों में गुम्फित दृष्टिगोचर होती हैं। जो कुछ लोक-परलोक में विद्यमान हैं, वे सब वेद-पुराणों में हैं और जो विषय अब तक लोक में अज्ञात हैं, वे भी इन ग्रन्थों में गूढ़तया वर्णित हैं –

इह परत्र या विद्याः सर्वाः श्रुतिसमाहिताः।
अधुनापि यदज्ञातं तच्चाप्यत्र निगूहितम्।।

ज्ञानागारभूत इन पुरातन ग्रन्थों में नानाविध चिन्तन के साथ-साथ युवाओं की चरित्र-निर्माण विषयक यथेष्ट सामग्री भी विद्यमान है, जिनका आचरण कर देवत्व पद की प्राप्ति की जा सकती है –

ऋग्वेद में युवा पीढ़ी को भद्रोन्मुखता की प्रेरणा देते हुए कहा गया है –

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसस्तनूभि
व्यशेम देवहितं यदायुः।। ऋग्वेद १.८९.८

– हमलोग श्रवणेन्द्रिय से कल्याणकारी वचन ही सुनें, नेत्रों से केवल शुभ देखें और दृढ़ शरीरधारी बनकर अपनी सम्पूर्ण आयु देवाराधन में व्यतीत करें।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथापूर्वे संजानाना उपासते।। ऋग्वेद १०.१९१.२

– हम सभी साथ-साथ चलें, परस्पर प्रेम से बोलें तथा परस्पर सहमत होकर ज्ञान प्राप्त करें।

समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा नः सुसहासति।।
ऋग्वेद १०.१९१.४

– हम सबके संकल्प एक समान हों, सबके हृदय एक समान हों और सबके मन एक समान हों, जिससे सब मिल-जुलकर साथ-साथ रह सकें।

इस प्रकार ऋग्वेद युवाओं को सामाजिक सौहार्द और सार्थक सात्त्विक जीवन का सन्देश देते हुए कहता है – **स्वस्ति पन्थानमनुचरेम। ऋग्वेद ५.५१.१५** – हमें मांगलिक मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

यजुर्वेद युवाओं का ध्यान आकृष्ट करते हुए बताता है कि ''ऐश्वर्य-प्राप्ति के लिए सतत जागरण अर्थात् चेष्टाशील रहना आवश्यक है – **भूत्यै जागरणम्। यजुर्वेद ३०.१७।**

ब्रह्मचर्य में देवत्व की प्रतिष्ठा का उल्लेख करते हुए अथर्ववेद युवाओं को ब्रह्मचर्य व्रत के लिए प्रेरित करता हुआ कहता है **– ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्ति तस्मिन् देवा अधि विश्वे समोताः। अथर्ववेद ११.५.२४** – ब्रह्मचारी दीप्यमान ज्ञान-धारण करता है, उसमें सभी देवता समाहित होते हैं।

ब्रह्मचर्य के साथ विनय की शिक्षा देते हुए पुत्र से माता-पिता की आज्ञाकारिता की अपेक्षा की गई है। ''पुत्र को अपने पिता का अनुकरण करनेवाला और माता के समान विचारवाला होना चाहिए – **अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः।अथर्ववेद ३.३०.२।**''

सामाजिक सौहार्द का सन्देश प्रसारित करता हुआ मन्त्रद्रष्टा ऋषि उद्घोष करता है –

सहृदयं सांमनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्या।।
अथर्ववेद ३.३०.१

– ''मैं आप सब के बीच विद्वेष हटाकर सहृदयता और समान मानसिकता का प्रसार करता हूँ। जैसे गाय अपने बछड़े से प्रेम करती है, वैसे ही आप सब एक-दूसरे से प्रेम करें।''

वेदों की ऋचाओं में जहाँ चारित्रिक सद्गुणों के परामर्श निरूपित दृष्टिगत होते हैं, वहीं उपनिषद् ग्रन्थों में मुख्यतया आख्यानों के माध्यम से चरित्र-निर्माणकारी उपदेश उपलब्ध होते हैं। आख्यानों में निहित चरित्र-निर्माण के कतिपय निम्नलिखित निदर्शन दर्शनीय हैं – **श्वेतकेतु-आरुणि आख्यान।** छान्दोग्योपनिषद में यह आख्यान है। आरुणि ने पुत्र श्वेतकेतु को अपने कुल में अध्ययन-परम्परा का उल्लेख करते हुए उसे विद्या प्राप्त करने की प्रेरणा दी। पिता के परामर्श से श्वेतकेतु बारह वर्षों तक सभी वेदों का अध्ययन करके घर लौटा, किन्तु उसमें पाण्डित्य का अभिमान भरा था। पुत्र में ऐसा अविनय देखकर पिता ने पूछा -

''क्या तुमने आचार्य से उस उपदेश के विषय में पूछा या नहीं, जिससे अश्रुत भी श्रुत हो जाता है, अमत भी मत हो जाता है और अज्ञात भी विज्ञात हो जाता है।''

श्वेतकेतु ने पिता से पूछा – ''वह उपदेश कैसा होता है?''

आरुणि ने कहा – ''जैसे एक मिट्टी के लोंदे से यह ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि मिट्टी के समस्त रूपों के नाम-भेद विकार मात्र हैं, तत्त्वत: सब मिट्टी ही है। जैसे एक स्वर्णपिण्ड के ज्ञान से यह ज्ञात हो जाता है कि हार, मुकुट, कंकण, बाजूबन्द आदि आकृति भेद मात्र हैं, किन्तु मूलत: सब स्वर्ण हैं। जैसे एक नहरनी को जान लेने से लौह पदार्थ का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जाता है। नाम-रूप विकार मात्र हैं, सत्य केवल लोहा ही है।''

तब श्वेतकेतु की जिज्ञासा का समाधान करते हुए आरुणि बतलाते हैं कि ''उस एक सत् ने अनेक होने की इच्छा से तेज उत्पन्न किया। तेज ने अनेक होने की कामना से जल को उत्पन्न किया और जल ने अन्न उत्पन्न किया।''

प्रकरणवशात् आरुणि पुत्र को विस्तार से यही समझाते हैं कि ''नाना नामरूपात्मक जगत् उस एक सत् ब्रह्म से उत्पन्न हुआ है और उस एक ब्रह्म के ज्ञान से सम्पूर्ण प्रपंच का ज्ञान अधिगत हो जाता है।''

यहाँ श्वेतकेतु के बहाने नवयुवकों को विद्यार्जन की प्रेरणा के साथ यह सन्देश प्राप्त होता है कि अनात्मसात् अपूर्ण ज्ञान से विद्वत्ता का मिथ्या अहंकार उत्पन्न होता है और ब्रह्मज्ञान के बिना सम्पूर्ण वेद-ज्ञान भी निरर्थक है।

गुरु-आज्ञापालक आत्मतत्त्ववेत्ता : सत्यकाम

बालक सत्यकाम ने अपनी माता से कहा – ''माता, मैं अध्ययन करने गुरुकुल जाऊँगा। इसलिए मुझे अपना गोत्र बता दो।''

माता ने कहा – ''बेटे, युवावस्था में अतिथि-सत्कार आदि कार्यों में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए मैंने तुम्हें जन्म दिया था। असमय में तुम्हारे पिता भी नहीं रहे। सो मुझे गोत्र की जानकारी नहीं है। मैं बस इतना ही जानती हूँ कि मैं जबाला हूँ और तू सत्यकाम है। इसलिए तुम अपना परिचय सत्यकाम जाबाल बतला देना।''

माँ की बात सुनकर सत्यकाम ने आचार्य हारिद्रुमत गौतम के समीप जाकर बोला, ''पूज्यवर, मैं आपके यहाँ अध्ययनार्थ निवास करने आया हूँ।''

सत्यकाम

हारिद्रुमत ने पूछा, ''वत्स, तेरा गोत्र क्या है?''

सत्यकाम ने उत्तर दिया, ''मैं अपना गोत्र नहीं जानता। माँ से पूछने पर उन्होंने बताया कि दिनचर्या में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए उन्होंने मुझे जन्म दिया और असमय में मेरे पिता का निधन हो गया। इसलिए वह गोत्र नहीं जान सकीं। इसलिए हे गुरुदेव, मुझे इतना ही ज्ञात है कि मेरी माँ का नाम जबाला है और मैं उनका पुत्र सत्यकाम जाबाल हूँ।''

हारिद्रुमत ने प्रसन्न होकर कहा – ''ब्राह्मण के अतिरिक्त दूसरा कोई ऐसा उत्तर नहीं दे सकता। तुमने सत्य का परित्याग नहीं किया। इसलिए हे वत्स, तू समिधा ले आ, मैं तेरा उपनयन करूँगा।''

सत्यकाम का उपनयन कर हारिद्रुमत ने उसे चार सौ दुर्बल गायें देकर चारण-सेवा का आदेश दिया।

''जब तक ये गायें एक हजार नहीं हो जायेंगी, तब तक

वापस नहीं लौटूँगा'', ऐसा बोलकर सत्यकाम गायों के साथ वन की ओर चला गया। जब गायों की संख्या एक हजार हो गयी, तब लौटते समय मार्ग में उसे ऋषभ, अग्नि, हंस और मग्दु पक्षी ने ब्रह्म के एक-एक पाद की शिक्षा दी और गुरुकुल आने के बाद हारिद्रुमत से उपदेश सुनकर उसके लिए कुछ भी ज्ञातव्य शेष नहीं रहा।

इस आख्यान में सत्यकाम के सत्यव्रत, जीव-सेवा तथा गुरु-शरणागति से आत्मज्ञान की उपलब्धि युवाओं के लिए अनुकरणीय चारित्रिक आदर्श की प्रेरणा है।

पितृभक्त और लोकेषणाजयी आत्मज्ञानी : नचिकेता

कठोपनिषद के अनुसार उद्दालक ने विश्वजित् नामक यज्ञ में अपना सारा धन दान कर दिया, किन्तु दक्षिणा में वह ब्राह्मणों को अत्यन्त अशक्त और दुर्बल गायें दे रहा था। यह देखकर उसके पुत्र नचिकेता को दुःख हुआ कि यजमान को दक्षिणा में अपनी प्रिय वस्तुएँ दान करनी चाहिए, लेकिन पिता मेरे लिए अच्छी गायों को बचाकर जिस प्रकार मरणासन्न गोदान कर रहे हैं, उससे तो उन्हें कोई निम्न योनि या नरक लोक प्राप्त होगा। इसलिए पिता की हितकामना से जाकर उसने पूछा, ''तात, आप मुझे किसके लिए दान कर रहे हैं?''

पिता उसकी बात अनसुनी करके वृद्ध गोदान में लगे रहे। नचिकेता ने फिर वही प्रश्न पूछा। तीसरी बार पूछने पर पिता ने क्रोधित होकर कहा, ''तुझे मैं मृत्यु को देता हूँ''

नचिकेता समझ गया कि क्रोध में आकर पिता ने उसे मृत्यु को देने की बात कह दी और अब पश्चाताप कर रहे हैं, किन्तु पिता से अनुमति लेकर वह यमराज के यहाँ चल पड़ा। यमराज के कहीं बाहर जाने के कारण नचिकेता भूखा-प्यासा उनकी प्रतीक्षा करता रहा। लौटने पर यमराज को पता चला कि ब्राह्मण कुमार तीन दिनों से बिना कुछ खाये-पिये उनके घर पर बैठा है, तब विधिवत् सत्कार करके उन्होंने नचिकेता से कहा, ''कुमार, आपने उपवासपूर्वक तीन रात्रि मेरी प्रतीक्षा की है, इसलिए आप मुझसे एक-एक रात्रि के बदले तीन वरदान माँग लीजिए।''

नचिकेता ने यमराज से कहा, ''हे मृत्युदेव, मेरे पिता का क्रोध शान्त हो जाये और घर लौटने पर वे मुझसे पहले की तरह प्रसन्नचित्त होकर बात करें। मैं आपसे पहला यही वरदान चाहता हूँ।'' यमराज के 'तथास्तु' बोलने के बाद नचिकेता ने अग्निविद्या और आत्मविद्या का वरदान माँगा।

पुत्र को पिता का आज्ञापालक अवश्य होना चाहिए, किन्तु सन्मार्ग-पतन होते देख मौनदर्शक न बनकर, किसी प्रकार की हानि की परवाह किये बिना पिता का हित-साधन पुत्र का सर्वोच्च दायित्व है, यह नैतिक परामर्श यहाँ युवाओं को प्रदान किया गया है।

दीक्षान्त-वर्णन

तैत्तिरीय उपनिषद् के अनुसार वेद-शास्त्र आदि का अध्यापन सम्पन्न कराने के पश्चात् आचार्य शिष्य को आचारशास्त्रीय शिक्षा प्रदान करते थे – **सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायान्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्। कुशलान्न प्रमदितव्यम्। भूत्यै न प्रमदितव्यम्। देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव। आचार्यदेवो भव। यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि।...एष आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदनुशासनम्। एवमुपासितव्यम्।**

(तैत्तिरीयउपनिषद् १.११)

– सत्य बोलना, धर्म पर चलना। स्वाध्याय में आलस्य न करना। आचार्य के लिए दक्षिणा देकर सन्तानोत्पत्ति की गृहस्थाश्रम-परम्परा का पालन करना। सत्य, धर्म, शुभ कर्म और ऐश्वर्य के प्रति सदा सजग रहना। देवताओं और पितरों के कार्य में आलस्य-प्रमाद न करना। माता, पिता तथा आचार्य को देवता मानना। जो अनिन्दनीय कर्म हों, वही करना। यह शास्त्र का आदेश है, यही गुरुजनों का उपदेश है, यही वेद-उपनिषद् है और यही परम्परागत शिक्षा है। तुम्हें आजीवन ऐसा ही आचरण-अनुष्ठान करना चाहिए।''

दीक्षान्त के अवसर पर सदाचार का दिया गया उपर्युक्त उपदेश आज भी युवाओं के लिए सच्चरित्र-निर्माणकारी नितान्त व्यावहारिक आदर्श है।

अनन्य पितृभक्त पुरु

वेद-उपनिषद् के समान पुराणों में भी युवाओं को

उदात्तचारित्र्य के प्रेरक ऐतिहासिक आख्यान उपन्यस्त हैं। मत्स्यपुराण में राजा ययाति की कथा वर्णित है कि शुक्राचार्य के शाप से वे असमय वृद्ध हो गये। लेकिन शुक्राचार्य ने साथ में यह भी बता दिया कि वे अपने युवा पुत्रों से यौवन-वार्धक्य का आदान-प्रदान कर सकते हैं। भोग से अतृप्त राजा ययाति ने अपने ज्येष्ठ पुत्र यदु को बुलाकर स्नेहपूर्वक कहा – ''पुत्र, शुक्राचार्य से अभिशप्त मेरे इस शरीर का वार्धक्य लेकर एक हजार वर्ष के लिए तुम अपना यौवन मुझे दे दो। फिर समस्त कामनाएँ भोगकर मैं तुम्हें यौवन लौटा दूँगा।''

किन्तु यदु ने इस कार्य के लिए मना कर दिया। फिर एक-एक कर ययाति ने अन्य पुत्रों – तुर्वसु, द्रुह्यु और अनु के समक्ष भी यह प्रस्ताव रखा, पर कोई तैयार नहीं हुआ। अन्त में सबसे छोटे पुत्र पुरु ने सहर्ष पिता की वृद्धावस्था लेकर अपना यौवन पिता को सौंप दिया, जिससे प्रसन्न होकर ययाति ने उन्हें अपना राज्य प्रदान किया और इतिहास की भित्ति पर पुरु एक यशस्वी राजा के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

क्षमा के आदर्श भगवान विष्णु

भागवत पुराण में महर्षि व्यास ने लिखा है कि एक बार सरस्वती नदी के तट पर आयोजित यज्ञ के अवसर पर ऋषियों के बीच यह वितर्क होने लगा कि ब्रह्मा, विष्णु और महेश में सर्वश्रेष्ठ देव कौन हैं। फिर सभी ऋषियों ने जिज्ञासावश ब्रह्मापुत्र भृगु ऋषि को निर्णायक बनाकर तीनों देवताओं के पास भेजा। सर्वप्रथम भृगु ब्रह्माजी के पास पहुँचे, लेकिन जान-बूझकर उन्होंने अभिवादन नहीं किया। भृगु की अशिष्टता से तिरस्कृत अनुभव करते ब्रह्माजी अत्यन्त क्रोधित हो गये, किन्तु उन्होंने अपना पुत्र मानकर किसी प्रकार क्रोधाग्नि को भीतर ही दबा लिया।

इसके पश्चात् भृगु शिवजी से मिलने कैलास पर्वत गये। भ्राता को आये देख भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर उनके आलिंगन के लिए दोनों हाथ फैला दिये। लेकिन भृगु ने उन्हें अमांगलिक बताते हुए आलिंगन से मना कर दिया। भृगु के अपमान से कोपाभिभूत भगवान् शिव त्रिशूल उठाकर उन्हें मारने दौड़ पड़े, किन्तु माता सती ने किसी प्रकार मनाकर शान्त किया।

वहाँ से भृगु वैकुण्ठ लोक गये और श्रीलक्ष्मी की गोद में लेटे हुए भगवान् विष्णु के वक्षस्थल पर चरण-प्रहार कर दिया। भगवान् विष्णु ने तुरन्त शय्या से उठकर भृगु को सिर झुकाकर प्रणाम करते आसन देते हुए कहा –

''हे महामुने, आपके आगमन की जानकारी न होने से आपका स्वागत न कर सका, इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। आपके चरण बड़े कोमल हैं।'' यह कहते हुए भगवान् विष्णु भृगु के चरण सहलाते हुए बोलने लगे – ''आपके चरण-स्पर्श से आज मेरे सारे पाप धुल गये और आपके चरण-चिह्न से अंकित मेरे वक्षस्थल पर लक्ष्मीजी सदा निवास करेंगी।''

भगवान् विष्णु की ये बातें सुनकर भृगु चुपचाप वहाँ से लौटे और सारा वृत्तान्त यथावत् सुना दिया। उनके अनुभव सुनने के पश्चात् सभी ऋषियों ने एकमत से भगवान् विष्णु को ही सर्वश्रेष्ठ देवता स्वीकार कर लिया।

वस्तुत: इस त्रिदेव-परीक्षण कथा के माध्यम से भगवान् विष्णु के समान असीम शान्ति और क्षमा के सद्गुणों को आत्मसात् करने की प्रेरणा निरूपित की गई है।

इस प्रकार वेदों, उपनिषदों तथा पुराणों में ऐसे अनेक चरित्रोन्नयनप्रेरक वचन एवं आख्यान वर्णित हैं, जिनके आचरण से युवासमुदाय आत्म-अभ्युदय के साथ एक आनन्दमय आदर्श समाज का निर्माता बन सकता है। ○○○

जो व्यक्ति अपने प्रति घृणा करने लगा है, उसके पतन का द्वार खुल चुका है और यही बात राष्ट्र के सम्बन्ध में भी सत्य है।

हमारा पहला कर्तव्य यह है कि अपने प्रति घृणा न करें, क्योंकि आगे बढ़ने के लिए यह आवश्यक है कि पहले हम स्वयं में विश्वास रखें और फिर ईश्वर में। जिसे स्वयं में विश्वास नहीं, उसे ईश्वर में कभी भी विश्वास नहीं हो सकता।

– स्वामी विवेकानन्द

युवा-शक्ति के प्रेरणा-स्त्रोत

शरद विवेक सागर, पटना

संस्थापक, डेक्सटेरिटी ग्लोबल ग्रुप

मैं सर्वप्रथम श्रीरामकृष्ण देव, श्रीमाँ सारदा देवी और स्वामी विवेकानन्द को प्रणाम करता हूँ। मेरा विषय है – युवाशक्ति के प्रेरणा स्त्रोत : स्वामी विवेकानन्द। युवाओं के प्रेरणा स्त्रोत आज से ही नहीं १५० साल से स्वामी विवेकानन्द जी रहे हैं और राष्ट्र-निर्माण में जिस प्रकार की भूमिका उनके विचारों की, उनके द्वारा प्रेरित राष्ट- निर्माताओं की, क्रान्तिकारियों की, स्वतन्त्रता सेनानियों की रही है, यह सभी लोग जानते हैं।

मेरे लिए स्वामीजी मेरे जन्म से पूर्व मेरे प्रेरणास्त्रोत रहे हैं। ऐसा सौभाग्य बहुत सारे लोगों को नहीं मिलता है। मेरे जन्म के पूर्व मेरे पिताजी श्रीरामकृष्ण मिशन आश्रम, पटना के पुस्तकालय में पढ़ने के लिए जाया करते थे। उन्हें एक दिन ऐसी प्रेरणा आई कि वे या तो रामकृष्ण मिशन में संन्यासी बनेंगे, नहीं तो अगर गृहस्थ जीवन में जाना पड़े, तो अपने बच्चों का नाम स्वामी विवेकानन्द पर रखेंगे और बचपन से उन्हें स्वामीजी के विचार देंगे। आजकल तो नाम यूट्यूब और गूगल देख कर भी रख दिया जाता है। किन्तु मेरा नाम रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य देखकर रखा गया। पिताजी ने ऐसा तय किया होगा, बड़े भाई का भी, मेरा भी कि सागर ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के नाम से लिया, विवेक स्वामी विवेकानन्द से लिया और शरद क्योंकि मैं शरद ऋतु में पैदा हुआ। इस प्रकार मेरा नाम शरद विवेक सागर हुआ। ऐसा विश्वास था की स्वामीजी के विचारों से एक ऐसा शरद तैयार कर पाएँगे, जो विवेक का सागर होगा। यह बहुत गम्भीर विषय है। आजीवन इस नाम के अनुसार चलना होगा। कभी विवेकहीन बात न हो, नहीं तो लोग बोलेंगे, पिताजी ने तो नाम रखा था विवेक सागर, परन्तु इस प्रकार हो रहा है। जब हम बड़े होने लगे, तो छोटे-छोटे गाँवों, शहरों के हम जिन भी किराए के घरों में रहते थे, वहाँ पर स्वामीजी, माँ, ठाकुर के विचार लगे हुए थे। हम सुबह उठते थे, इन विचारों को पढ़ते थे और काम में लग जाते थे। मैं जब बहुत कम उम्र का था, तो स्वामीजी को देखकर एक भाव आता था। हमारे घर में टीवी नहीं थी। स्वामीजी को देखकर मन में मेरे जो विचार आया, यह उस समय मन में आता रहा होगा, इसे मैं सम्प्रेषित कर पाया।

स्वामी विवेकानन्द : एक सुपर हीरो

एक बार मुझसे अद्वैत आश्रम के अध्यक्ष स्वामी शुद्धिदानन्द महाराज ने पूछा कि जब तुम छोटे थे, तो स्वामीजी को देखते कैसे थे? मैंने १०,२०,३० सेकेण्ड सोचा और उसके बाद मैंने कहा – महाराज, मैं जब छोटा था, तब मैं स्वामीजी को सुपर हीरो की तरह देखता था। सुपर हीरो क्यों? सुपर हीरो इसलिए क्योंकि जब पूरे देश में अन्धकार छाया था, निराशा छायी हुई थी, पूरा देश गुलाम था, यदि एक व्यक्ति अपने विचार से, अपने जीवन से, अपने पूरे के पूरे जीवन मार्ग में हर प्रकार के समर्पण से अगर उस निराशा में आशा की किरण जगा रहा था, एक व्यक्ति जो उस परतन्त्रता में स्वतन्त्रता की बात कर रहा था, एक व्यक्ति जो दूसरे पर आश्रित होने की जगह आत्मनिर्भरता, आत्मश्रद्धा की बात कर रहा था, तो वे स्वामीजी थे।

जब पिताजी से सुनते थे, तब बहुत चीजें तो समझ में नहीं आती थी, पर यह समझ में आता था कि ११ सितम्बर, १८९३ को स्वामीजी का शिकागो में भाषण हुआ था और लोग बहुत देर तक ताली बजाते रह गए। वह भाषण आज भी जीवित है। पड़ोस में कोई व्यक्ति थे, जो १० साल या ५ साल या ३ साल पहले मर गये और उन्हें घरवाले भूल गए, पर ये कैसे महामानव हैं, जिनके भाषण को १५० साल तक याद रखते हैं ! तो लगता था सुपर हीरो जैसे। कॉमिक्स या कहानियों में सुपर हीरो को कैसे दिखाते हैं? सुपर हीरो दिखाते हैं, कोई ऐसा व्यक्ति, जो सबको सही दिशा में लेकर आगे बढ़े। जिसे देखकर हजारों-लाखों लोग आगे बढ़ रहे हों। स्वामीजी की जो छवि थी मन में वह उस सुपर हीरो की थी, जो अन्धकार में प्रकाश के रूप में खड़ा

हो सके। जो एक पूरे राष्ट्र की चेतना को जागृत करने में लग सके, जो पूरे विश्व को यह सन्देश दे सके कि आपको जिस दिशा में अँधियारा दिख रहा है, वहाँ प्रकाश पुंज पड़ा है, जिससे आपके जीवन में शक्ति आएगी, आपके जीवन में प्रकाश आएगा। इस प्रकार मैंने स्वामीजी को देखा।

नया भारत कैसे गढ़ें?

भारत के निर्माण हेतु अपना निर्माण करो

स्वामी विवेकानन्द जी का संदेश था, भारत से प्रेम करो। मैं जब छोटा था, तब मैं स्वामीजी के भारत से प्रेम करो, इस विचार को प्रतिदिन अपने मन में भरता था। एक और विचार आता था, जब मैं कम उम्र का था, तब हिन्दी की एक पुस्तक आती थी 'नया भारत गढ़ो'। मैं उस समय छपरा में रहता था। लगभग ६/७/८ साल का रहा होऊँगा। मैंने जब उसे देखा, तो विचार आता था कि नया भारत कैसे गढ़ सकते हैं?

इस सम्बन्ध में स्वामीजी की यह बात समझ में आयी, वह यह थी – भारत के निर्माण हेतु स्वयं का निर्माण करो। हम भारत का निर्माण करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि भारत में कोई भूखा ना सोए, भारत में अस्पताल के बाहर किसी का देहान्त न हो जाए, हर बच्चा स्कूल जाए। हम चाहते हैं – राष्ट्र सशक्त हो, समाज में हर प्रकार की प्रसन्नता हो, परन्तु ऐसा करने के लिए लोग चाहिए। इसलिये स्वामीजी ने कहा कि हम १०० अच्छे लोगों को तैयार करें, तो हम राष्ट्र बदल सकते हैं, हम संसार को बदल सकते हैं। मेरी पहली प्रेरणा थी कि मैं उन १०० लोगों में एक होने का प्रयास करूँ। इसलिये जो भी करते थे, मन लगाकर करते थे। आप सभी आज घर जाएँ, तो स्वामीजी की किसी वाणी पर ध्यान करें। कोई न कोई पुस्तक उठायें और उसे अगले २/४/५, दिनों में पढ़ने का प्रयास करें। क्योंकि भारत से प्रेम करने की बात केवल भारत से प्रेम पर नहीं रुक सकती। आपको नए भारत को गढ़ना होगा। आपको भारतीय समाज को सशक्त करना होगा। भारत के नागरिकों के जीवन में खुशहाली लानी होगी। आपको समाज का उत्थान करना होगा। परन्तु इन सारी चीजों को करने के लिए पहले आपको अपने आप को सशक्त बनाना होगा। यदि आप चाहते हैं कि आप अच्छे प्रशासनिक सेवक बनें, अच्छे अभियन्ता, अच्छे चिकित्सक बनें, तो आपको स्वयं को वैसा योग्य, सक्षम बनाना होगा। स्वामी विवेकानन्द जी भी एकाग्रता की बात, सजग रहने की बात कहते हैं। यह तो हमें घर में ऐसे ही बताई जाती थी। मैं स्वामीजी से अभी बाहर मिलकर आया हूँ और घर में आकर गप कर रहा हूँ, तो स्वामीजी नाराज हो जाएँगे। पिताजी कहते थे, क्या तुम यही स्वामीजी की पुस्तक पढ़ते हो कि घर में बैठकर गप कर रहे हो? इससे एकाग्रता समाप्त हो जाएगी। जब कल गणित के चार प्रश्न हल करने जाओगे, तो मन एकाग्र नहीं होगा। हमें ऐसा भाव दिया गया कि यदि तुम स्वामीजी को पढ़ते हो, तो स्वामीजी को जीने का प्रयास करो। इस भाव के साथ मैं बड़ा हुआ। बारह वर्ष की आयु तक इस यात्रा में मैं कभी स्कूल नहीं गया। औपचारिक रूप से किसी भी स्कूल में नाम नहीं लिखवाया था। जब लगभग १२ वर्ष का हुआ, तो स्कूल जाना आरम्भ किया। माताजी के साथ पटना चला आया। और दो भाई, एक बहन पटना में रहते थे। मैं जितने दिन गाँव में रहा था, माता-पिताजी हमें रोज समाचार पत्र पढ़वाते थे। समाचार पत्र में कई प्रतियोगिताओं के बारे में पढ़ा था। कई ऐसे बच्चों की सूचनाएँ मिलती थीं कि किसी को पूरी स्कॉलशिप मिली है, विश्व के किसी बड़े विश्वविद्यालय से कोई किसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता का विजेता हुआ है। मैं इन प्रतियोगिताओं में भाग नहीं ले सकता था, क्योंकि स्कूल में मेरा नामांकन नहीं था। मैंने एक छोटी-सी आदत शुरू की – देश में जो भी ऐसी सूचनाएँ आती थीं, समाचार आता था, उसे मैं एक डायरी में लिख लेता था – कौन-सी प्रतियोगिता है, कौन-सी छात्रवृत्ति है, किसे मिलती है, कौन-से महीने में मिलती है, क्या प्रक्रिया है, जो भी जानकारी समाचार पत्र से मिल जाती थी।

अन्तर्राष्ट्रीय सत्र पर युवाओं के साथ चर्चा कैसी होती थी?

ऐसा करते-करते जब मैं स्कूल आया, तो मेरे पास एक डायरी बन चुकी थी, जिसमें जितने शैक्षणिक अवसर हैं, जो भी प्रतियोगितायें-छात्रवृत्तियाँ हैं, वे लिखी हुई थीं। मैं हर एक प्रतियोगिताओं में भाग लेने लगा। जब तक मैंने बारहवीं की पढ़ाई पूरी की, तब तक लगभग २०० स्थानीय, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगितायें जीती और लगभग ६ देशों में भारत का प्रतिनिधित्व किया। इस यात्रा में जब मैं अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर जाता था, तब मैं देखता था कि हमारे आपके उम्र के लोग भारत का वहाँ प्रतिनिधित्व करते थे। वहाँ पर चर्चाएँ होती थीं कि हम किस प्रकार से विश्व में

जलवायु पर नियन्त्रण करना चाहते हैं। हम किस प्रकार हर घर में शुद्ध पेय जल प्राप्त कराना चाहते हैं। आधुनिक युग के युवा किस प्रकार का राष्ट्र देखना चाहते हैं, किस प्रकार का विश्व देखना चाहते हैं। इसमें भारत का जो प्रतिनिधित्व करते थे, मैं देखता था कि वे प्राय: किसी छोटे राज्य या छोटे गाँव या छोटे शहर से आनेवाले बच्चे नहीं होते थे, वे प्रतिभावान थे, परिश्रमी थे, परन्तु वे ऐसी जगह से आते थे, जो की भारत के चुनिन्दा ४ या ५ विद्यालयों से हैं। वहाँ पर उन्हें जानकारी थी कि ऐसी चीजें होती हैं, तो उनका चयन होता था और वे आते थे।

मन में एक विचार आने लगा कि यदि हम सही में भारत का नेतृत्व करना चाहते हैं, यदि हम सही में चाहते हैं कि भारत विश्व का नेतृत्व करे, तो हमें उन लोगों को तैयार करना होगा, जो समस्याओं के बीच जीते हैं, जो भारत के छोटे गाँव और शहरों से आते हैं, जिन्होंने अपने दैनिक जीवन में परेशानियाँ देखी हैं। उन परेशानियों के बीच में उनके मन में बहुत विचार आया होगा। उनकी निजी कुछ वेदना होगी। वे समाज की वेदना समझ पाते होंगे।

स्वामी विवेकानन्द जी राष्ट्रभक्ति की एक परिभाषा देते हैं। उस परिभाषा में वे तीन शर्त रखते हैं। यदि दूसरे की पीड़ा को देखकर पीड़ा का अनुभव करते हैं, तो आप राष्ट्रभक्त हैं। यदि आप उस पीड़ा के निवारण के लिए किसी भी प्रकार की कोई युक्ति सोचते हैं, तो आप राष्ट्रभक्त हैं। यदि आप पीड़ा का अनुभव करते हैं, आपने कोई युक्ति सोची है, किन्तु इसी पर आकर रुक जाते हैं, तो आपकी देशभक्ति पूरी नहीं होती। यदि आप उस युक्ति से, समाज की उस पीड़ा, वेदना को हटाने के लिए उस उपाए से काम करने लगते हैं और सारी विकट परिस्थितियों के बावजूद भी आप वह काम करते रहेंगे, तब आप देशभक्त हैं। मैं सोचता था कि हम भारत में कैसे देशभक्त बनाना चाहते हैं? जिन लोगों ने सही में वेदनाएँ सहन की हैं, वेदनाएँ देखी हैं, अगर हम उन्हें सक्षम नहीं बना पाए, तो फिर आनेवाली पीढ़ी भी वैसी बनेगी। जैसे कोई मैसाचूसेटस का व्यक्ति आकर महाराष्ट्र की समस्याएँ सुलझाएगा, महाराष्ट्र का व्यक्ति बिहार में मुजफ्फरपुर में जाकर कोई समस्या, परेशानी सुलझाएगा। किन्तु हमारे पास एक दूसरा भी विकल्प है।

वह विकल्प यह है कि मुजफ्फरपुर में रहनेवाले बच्चे की शिक्षा इतनी मजबूत हो, उसके विचार इतने दृढ़ हों, उसे समाज के प्रति वेदना, शिक्षा के प्रति जागरूकता, सक्षमता के प्रति एक प्रतिबद्धता इस प्रकार की हो कि वह वहाँ पर सेवा के लिये नेतृत्व के भाव से तैयार हो सके।

इसलिये लगभग १६ वर्ष की आयु में मैंने एक संगठन बनाया। संगठन का मुख्य लक्ष्य था – हम भारत के लिए नेतृत्व की एक ऐसी पीढ़ी तैयार करें, जो भारत के छोटे-छोटे शहरों से आती हो, भारत के दूरवर्ती गाँवों से आती हो, जिसके नेतृत्व का निर्माण उसकी शिक्षा से हुआ हो। यह काम हम पिछले १५ वर्षों से 'डेक्स्टेरिटी ग्लोबल ग्रुप' नाम की एक संस्था के माध्यम से कर रहे हैं। डेक्स्टेरिटी ने दो चीजें चुनी – पहली, अधिकांश बच्चों को जानकारी ही नहीं होती है कि इस प्रकार की छात्रवृत्ति भी है, कोई कार्यशाला का आयोजन भी हो रहा है, कोई प्रतियोगिता भी होती है और इसलिये वे लोग उसमें भाग भी नहीं ले पाते। तो हमने तय किया कि यदि किशोरों या युवाओं के लिए ऐसा कोई शैक्षणिक अवसर है, तो सबसे पहले उसकी जानकारी उस किशोर या युवा को होनी चाहिए, जिसके लिए वह प्रतियोगिता निकाली है, जिसके लिए वह स्कॉलरशिप आती है। फिर हमने दूसरी बात पर गौर किया, हमने गाँवों में जाकर बच्चों से कहा, छोटे शहरों में जाकर कहा – ए.पी.जे. अब्दुल कलाम साहब को देखो, कलाम साहब ने गरीबी के बावजूद भी बहुत कुछ किया। सचिन तेंदुलकर को देखो, उन्होंने राष्ट्रभक्ति को लेकर कितने आगे तक जाने का प्रयास किया। परन्तु हम यह समझने में विफल रह जाते हैं कि एक छोटे-से बच्चे-बच्ची के लिए, जो गाँव में एक कोने में रहते हैं, यह अरबों में एक उदाहरण है। उन्हें लगता है, अरबों में एक व्यक्ति कलाम बनता है। संगठन में हमने इस बात पर विचार किया कि हमें स्थानीय प्रेरणा स्त्रोत तैयार करने होंगे। गाँव की पहली बच्ची, जो पूरी छात्रवृत्ति पर विश्वविद्यालय गयी हो। गाँव का पहला बच्चा, जो कोई अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता जीता हो। गाँव के वे पहले बच्चे जिन्होंने स्वरोजगार शुरू किया हो।

इसलिये हमने जो दूसरी पहल अपने संगठन के माध्यम से शुरू की, वह यह था कि हम स्थानीय प्रेरणा-स्रोत तैयार करेंगे। भारत के दूरवर्ती क्षेत्रों से, भारत के छोटे शहरों से, गाँव से, बच्चों को वहाँ से लेकर आएँगे, उन्हें हम प्रशिक्षित करेंगे। उनके मन में स्वामीजी का विचार भरेंगे। उन्हें कहेंगे कि राष्ट्र को सेवक नेतृत्व की एक नई पीढ़ी की आवश्यकता है। एक पीढ़ी थी, जिसने स्वतन्त्रता की लड़ाई लड़ी। वह स्वामीजी के विचारों से प्रेरित पीढ़ी थी। स्वतंत्रता के पश्चात् दूसरी पीढ़ी थी, श्री विक्रम साराभाई ने आकर के भारत की अन्तरिक्ष परियोजना को तैयार किया। यूनिवर्सिटी ऑफ केम्ब्रिज में पढ़कर आए थे। वर्गीज कुरीयन त्रिभुवन दास पटेल ने भारत की श्वेत क्रान्ति को शुरू किया, जिसे आप ह्वाइट रेवूलेशन कहते हैं। वे मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी से पढ़कर आए थे। राष्ट्रपति कलाम और प्रोफेसर ब्रह्म प्रकाश और प्रोफेसर सतीश धवन, ऐसे लोगों ने डी.आर.डी.ओ. और आइ.एस.आर.ओ (ISRO) को मजबूत किया। एम. एस. स्वामीनाथन् जैसे लोगों ने हरित क्रान्ति की। इन सारे लोगों ने अपनी शिक्षा से मात्र एक काम किया, सेवक नेतृत्व समाज को दे पाना। ई श्रीधरन् को हम मेट्रोमैन के नाम से जानते हैं। उन्होंने दिल्ली मेट्रो तैयार किया, कोंकण रेलवे तैयार किया, पम्मबन ब्रिज जोड़ा, जब फोर्स मैगजीन श्रीधरन् का एक साक्षात्कार लेने आयी, तो उन्होंने कहा कि आपने दिल्ली मेट्रो तैयार किया है, यह फास्टेस्ट है, यह मोस्ट पंक्चुअल है, यह विश्व के बेस्ट मेट्रोस में है। ई श्रीधरन् स्वभाव से बिलकुल सरल व्यक्ति हैं। उन्होंने रोककर कहा – नहीं, नहीं, यह चीपेस्ट है। हम जब इसे बना रहे थे, तो विचार यह था कि एक गरीब माँ अपने घर से निकले सब्ज़ी की एक टोकरी लिए हुए, सबसे कम दाम में वो मेट्रो से दूसरी जगह जा पाए, वहाँ पर वह सब्जी बेच पाये और जो उसने कमाया है, उसके बहुत छोटे अंश में वह अपने बच्चे के साथ शाम को वापस अपने घर आ जाये। इसे कहते हैं उद्देश्य, इसे कहते हैं लक्ष्य, इसे कहते हैं सेवा। सेवा की बात, जो स्वामी विवेकानन्द ने की कि हम शिक्षा से सक्षमता तैयार कर सकें और उस सक्षमता से हम सेवक नेतृत्व तैयार कर सकें।

मुझे प्रेरणा कहाँ से मिली

मुझे आपको बताते हुए हर्ष है कि पिछले १४ साल में हमने जिन बच्चों को तैयार किया, वे आज ११३ करोड़ से अधिक छात्रवृत्ति के साथ विश्व के श्रेष्ठ विश्वविद्यालयों में पढ़ते हैं। आप में से कुछ लोगों को मालूम है, मुझे हॉर्वर्ड विश्वविद्यालय जाने का सौभाग्य मिला। मैं हॉर्वर्ड के इतिहास में पहला भारतीय था, जो छात्रसंघ अध्यक्ष चुना गया। जब मैं छात्रसंघ अध्यक्ष था, तब मीडिया के लोग एक इंटरव्यू लेना चाहते थे। उन्होंने इंटरव्यू में मुझसे पूछा, हॉर्वर्ड में पूरे संसार से लोग आते हैं, आपने छात्रसंघ चुनाव लड़ने की सोच ली, इसके पीछे क्या प्रेरणा थी? यह शक्ति कहाँ से आयी? आप में से कुछ लोगों ने पहले से देखा हुआ है। जब मैं हॉर्वर्ड में जिस कमरे में रहता था, वहाँ पीछे स्वामी विवेकानन्द का चित्र रहता था। कौन बनेगा करोड़पति के शो में बहुत लोगों ने उसे देखा होगा। मैं थोड़ा हटा और मैंने कहा, यहीं से प्रेरणा मिली, यहीं से शक्ति आई, मेरे पीछे स्वामीजी बचपन से हैं। प्रेरणा कहाँ मिली, इसलिये यह कहानी मैं आपसे कह रहा हूँ।

मैं दो छोटे बच्चों की कहानी भी आपको सुनाता हूँ। दिसम्बर के आसपास आपने देखा होगा, शायद कम या अधिक लोगों ने देखा हो। तमिलनाडु में तिरुपुर नामक एक स्थान है। वहाँ एक छोटे-से किसान परिवार की बच्ची का यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो में चार साल की बैचलर्स डिग्री के लिए ढाई करोड़ की छात्रवृत्ति पर चयन हुआ। पूरे देश भर में समाचार पत्रों में, टेलिविजन चैनलों पर वह आया। हमारे संगठन की बच्ची थी। लगभग १२/१३ वर्ष की आयु में हमने उसको उठाया। उसे प्रशिक्षित किया। उसके मन में स्वामीजी के विचार दिए। हमारा प्रशिक्षण कोई आसान नहीं है। हम उसे अर्धसैन्य परम्परा में पढ़ाते हैं। वहाँ वो ड्रामा नहीं होता। अगर दो बजे कोई चीज शुरू होनी है, तो १.५५ की जगह १.५६ पर आप आयें, तो आप बाहर हो जाते हैं। हम कहते हैं, चार मिनट पहले आना एक मिनट लेट है। तो किसी भी काम में ५ मिनट पहले आओ। उस प्रकार की ट्रेनिंग रहती है। उनके

मन की संरचना वैसी ही बन जाती है। उस बच्ची का मैंने इन्टरव्यू देखा। एक और विशेष बात है, जब संगठन के बच्चे कुछ उपलब्धि करते हैं, तो आप मुझे नहीं देखेंगे कि मैं आकर के इंटरव्यू में बोल रहा हूँ, या संगठन का कोई और व्यक्ति आकर बोलेगा, वह बच्चा बोलेगा। मैं देख रहा था उस बच्ची का इंटरव्यू, लोग उससे सवाल पूछ रहे थे। मैंने देखा हॉर्वर्ड में मैंने अपने पीछे जो स्वामीजी की तस्वीर लगाई थी, उसने अपने छोटे-से घर में स्वामीजी की सेम तस्वीर प्रिंट करके लगाई हुई थी।

अभी एक-दो सप्ताह पहले की बात है। मुझे लगता है, देश में शायद ही कोई व्यक्ति इस खबर से अपरिचित हो। बिहार के एक छोटे से गाँव में झोपड़ी में रहनेवाला एक बच्चा, जिसके पिताजी दीहाड़ी मजदूर हैं, २०० रुपए दिन का कमाते हैं। अब वह लड़का अमेरिका पढ़ने जा रहा है ढाई करोड़ की स्कालरशिप पर चार साल की बैचलर्स डिग्री के लिये। संगठन का बच्चा है, लगभग १३/१४ वर्ष की आयु का था, तब आया था। उसके इंटरव्यू के लिए किसी ने मुझे फोन किया। उन्होंने कहा कि आप साथ में इंटरव्यू दे देते, तो अच्छा रहता। मैंने बोला – क्यूँ? उन्होंने कहा कि हो सकता है उसे उत्तर देने में कठिनाई हो। मैंने कहा, जिसे अमेरिका का एक बड़ा विश्वविद्यालय ढाई करोड़ की स्कॉलरशिफ दे सकता है, वह आपके बड़े टीवी चैनल के लिए पाँच हिन्दी के सवाल का जवाब नहीं दे सकता है क्या? दे सकता है। पर उसके जब इंटरव्यू शुरू हुए, तो देखा कि कैमरावाले किसी तरह उस झोपड़ी में घुसे। उस झोपड़ी में चौकी में रखी हुई मात्र ३ पुस्तकें थीं, बाकी बैग में रखी होंगी। जो ३ पुस्तकें थीं, वे स्वामीजी की पुस्तकें थीं। उसे कम लोगों ने देखा है। इस प्रकार से हमें लगता है कि आज युवाओं के प्रेरणास्त्रोत स्वामी विवेकानन्द हैं। इसलिये मैंने आपको ये दो उदाहरण दिये।

प्रेम नामक बच्चा जो अभी चुनकर जा रहा है, उसकी पृष्ठभूमि को तो मुझे लगता है कि पूरा देश देख चुका है। क्या हुआ कि चार दिन वह खबरों में बना हुआ था। रोज लगभग बीस-बीस, अट्ठाईस-अट्ठाईस इंटरव्यूज होते थे। इस बीच में हमारे संगठन की बैठक थी। उसमें छोटे बच्चों को बुलाते हैं। उसको वहाँ आना था। अनुशासित संगठन है, तो बेचारा गाँव छोड़कर पटना आया। पटना में पाँच बजे शाम को आना था। कोई मीडिया वाले उसका इंटरव्यू लेना चाहते थे। उसने कहा – नहीं, नहीं पाँच बजे मेरी बैठक है। वहाँ मुझे जाना ही है। वह समयानुसार वहाँ से निकल गया। उसके पीछे-पीछे उसके दो मीडिया वाले गए। वह गाँव से निकलकर पाँच बजे बैठक में पहुँच गया। बैठक शुरू हुई। पटना के सारे बच्चे मिल रहे थे। अलग देश में अलग-अलग जगह के बच्चे हैं। यह सब करते करते ७ बजे हमें एक फोन आया कि प्रेम के गाँव में यह बात फैल गई है कि जो तीन बजे के आसपास मीडिया वाले आए थे, वे मीडिया वाले नहीं थे, वे किडनैपर्स थे। वे प्रेम को लेकर चले गए हैं और उसका किडनैप हो गया है। वह दो घण्टे से गाँव में नहीं दिख रहा है। गाँव वाले लाठी-डंडा लेकर बाहर में गाँव के बैठे हुए हैं कि हमारा बच्चा गायब हो गया। अब इसकी पुष्टि कैसे हो?

एक-दो साल पहले हमारे संगठन का पटना का ही एक दूसरा बच्चा स्कॉलरशिप लेकर पढ़ने जा रहा था। उसके घर फोन हुआ, पर वह परिवार तिरुपति गया हुआ था। तो उसके पड़ोसी को फोन हुआ कि भाई, एक-दो साल पहले जिस बच्चे को दो करोड़ की स्कॉलरशिप मिली थी, वह सुरक्षित है कि नहीं? हमारे गाँववाला तो किडनैप हो गया। खैर, जब हमें फोन आया, तो हमने कहा कि वह तो यहाँ बैठा हुआ है। पिछले १४ वर्षों से हम ये काम कर रहे हैं। मुझे बहुत हँसी आयी, जब मैंने यह पूरा सुना। पर लगा कि ऐसे तो फिल्मों की कहानी लिखते हैं। ऐसे तो उपन्यास में कहानियों को लिखते हैं कि भाई, ऐसा-ऐसा हुआ। पर उस पूरे गाँव के लिए, उस स्थानीय प्रेरणास्त्रोत के महत्त्व को समझने का प्रयास कीजिए।

यद्यपि मुझे कुछ इंटरव्यू अच्छे नहीं भी लगे। एक इंटरव्यूअर बाहर खड़े हुए उस बच्चे की झोपड़ी के लिए कह रहे थे कि देखिए ये बच्चा ऐसी झोपड़ी में रहता है, जिसमें आप और हम कभी नहीं जाएँगे। खैर, उनका भाव कुछ अलग था, कुछ और समझना चाहते थे, परन्तु आप इन स्थानीय प्रेरणास्त्रोतों का प्रभाव देखिए। इन स्थानीय प्रेरणास्त्रोतों के अन्दर स्वामीजी की प्रेरणा का कमाल देखिए। मैं श्रीरामकृष्ण देव से, श्रीमाँ सारदा और स्वामीजी से प्रार्थना करता हूँ कि वे आपमें वैसी आत्मश्रद्धा, आत्मविश्वास दें। मैं आपसे निवेदन करता हूँ कि आप स्वामीजी को पढ़ें। आप उनका ध्यान करें।

मुझे युवकों से दो बातें कहनी है, जिसे आप करने का

प्रयास करें। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में किसी न किसी कष्ट से गुजरता है। कष्ट के समय भी आपका आत्मविश्वास, आपकी आत्मश्रद्धा, आपकी सकारात्मकता स्वामीजी को पढ़ने से आएगी। आप बलशाली बनेगें, आप शक्तिशाली बनेंगे, सकारात्मक रहेंगे, आपको बिघ्न-बाधाएँ हिला नहीं पाएँगी। जब आप सबल हो जाएँगे, तो प्रत्येक सबल व्यक्ति का नैतिक सामाजिक दायित्व है कि वह किसी दूसरे व्यक्ति के लिए जो कष्ट से गुजर रहा है, उसके जीवन में चट्टान की तरह खड़ा हो जाए। ये दोनों प्रेरणायें, ये दोनों विचार, ये दोनों जीवन के मार्ग स्वामीजी को पढ़ने से प्रतिदिन निरन्तर आते हैं। यदि इसे आपने जीवन का मार्ग बना लिया, तो आप राष्ट्रपति कलाम से लेकर विक्रम साराभाई तक, कूरीयन से त्रिभुवनदास पटेल तक, ई. श्रीधरन् तक ऐसे लोगों में सम्मिलित होंगे, ऐसी मेरी प्रार्थना है। आप सभी का बहुत बहुत धन्यवाद। ○○○

पृष्ठ १६ का शेष भाग

प्राचीर में घिरकर बन्द हो गयी है। स्वामीजी भारत के युवावर्ग पर बहुत विश्वास करते थे। उन्होंने श्रीहीन-दीन भारतमाता को पुन: उनके महिमोज्ज्वल गौरवशाली पद पर प्रतिष्ठित करने का दायित्व युवा वर्ग को ही प्रदान किया है।

स्वामीजी का जीवन और सन्देश युवाओं के लिये दीपशिखा है। तत्कालीन इस निराशा की परिस्थिति में उपनिषद के 'अभी:' मन्त्र का स्वामीजी ने दिग्-दिगन्त प्रचार किया था। युवकों को उसी 'अभी:' मन्त्र की दीक्षा लेनी होगी। उन्होंने प्रज्ञावान, शक्तिशाली और कर्मयोगी होना सिखाया था।

आज के युवा वर्ग को स्वामीजी के 'अभी:' मन्त्र में दीक्षित होकर कर्म, भक्ति, त्याग और सेवा के आदर्श में अनुप्राणित होकर देश की सेवा में स्वयं को समर्पित करने से भारत पुन: पूर्ण गौरव के सिंहासन पर प्रतिष्ठित होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। भारत जैसे देश में जहाँ अधिकांश लोग गरीबी रेखा से नीचे की सीमा में रहते हैं, अशिक्षा, कुशिक्षा, कदाचार जिनके जीवन को अध:पतन की अतल गर्भ में लेकर जा रहे हैं, वहाँ युवा वर्ग की भूमिका असाधारण है, उनकी विशेष भूमिका है। मैं मानता हूँ कि युवावर्ग के सामने विस्तृत क्षेत्र है। आज की युवाशक्ति को स्वार्थपरता, स्वनिर्मित कारागार से मुक्त होकर भोग और सुख के अलीक दुर्ग का ध्वंश कर महाजीवन के छन्द के साथ अपने को संयुक्त कर जीवन के स्वाद को खोजना होगा। युवाओं को राष्ट्रीय जीवन के सभी क्षेत्रों में जो स्थविरता है, उसे पूर्ण कर नवीन भारत के निर्माण में प्रयत्नशील होना होगा। इस महान कर्म के प्रयास में श्रीरामकृष्ण प्रदर्शित और स्वामीजी अनुशीलित त्याग और सेवा का आदर्श युवाओं का पाथेय होगा, ऐसा मैं विश्वास करता हूँ।

मैं युवाओं का आह्वान करता हूँ कि वे लोग स्वामीजी के ध्यान के भारत का निर्माण करने की कल्पना को साकार करने के लिये संकल्प लें। मैं उन्हें याद दिला देना चाहता हूँ – हमारा कर्तव्य-कर्म केवल चर्चा तक सीमित न रहकर वास्तविक जीवन में रूपायित हो और उसके फलस्वरूप सामाजिक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रयोग कर हमलोग महान भारत के निर्माण का व्रत लें।

युवा सम्मलेन के द्वारा देश-माता और नर-नारायण की सेवा के महान व्रत के सफल रूप से साकार होने के लिए हमलोग अपनी कर्मशक्ति और उद्यम को लगाने के लिए शक्ति और साहस प्राप्त करें, इसके लिए मैं श्रीश्रीठाकुर, श्रीश्रीमाँ और श्रीश्रीस्वामीजी से हार्दिक प्रार्थना करता हूँ। ○○○

प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपना आदर्श लेकर उसे चरितार्थ करने का प्रयत्न करे। दूसरों के ऐसे आदर्शों को लेकर चलने की अपेक्षा, जिनको वह पूरा ही नहीं कर सकता, अपने ही आदर्श का अनुसरण करना सफलता का अधिक निश्चित मार्ग है। – स्वामी विवेकानन्द

हमारे युवा ऋषि मुनि

डॉ. राघवेन्द्र शर्मा

साहित्य विभागाध्यक्ष, शास. संस्कृत महाविद्यालय, रायपुर

भारत भूमि ऋषि-मुनियों की भूमि रही है, जहाँ ऋषि-मुनियों ने ज्ञान के द्वारा इस भारत-भूमि को पुनीत करते हुए ज्ञान का बीजारोपण किया है। इस ज्ञान-वृक्ष ने आध्यात्मिक उन्नति के द्वारा सम्पूर्ण संसार को ज्ञानामृत फल का आस्वादन कराया। समग्र संसार में आत्मज्ञान एवं अलौकिकानन्दानुभूति की स्थापना का श्रेय भारतीय ऋषि-मुनियों को सम्प्राप्त है। इस दृष्टि से ऋषि-मुनियों के चरित्रों का अवलोकन करने की उपादेयता अनुभूत होती है।

ऋषि – सामान्यत: वेदों की ऋचाओं का साक्षात्कार करने वालों को ऋषि कहा जाता था – **'ऋषय: मन्त्र द्रष्टार:'**। ये ऋषि ज्ञान के प्रथम प्रवक्ता, परोक्षदर्शी, दिव्यदृष्टि वाले, ज्ञान के द्वारा मन्त्रों का एवं संसार की चरमसीमा का दर्शन करनेवाले, सत्यवादी, इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करनेवाले एवं समाधि की अलौकिक और अतिविशिष्ट अवस्था में दिव्य चक्षुओं द्वारा धर्म (मन्त्रों) का साक्षात्कार करनेवाले होते थे।

साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवु:।

रत्नकोष आदि ग्रन्थों में इन ऋषियों की सप्त भेदों का विस्तार से विवेचन प्राप्त होता है –

सप्त ब्रह्मर्षिदेवर्षि-महर्षि-परमर्षय:।
काण्डर्षिश्च श्रुतर्षिश्च राजर्षिश्च क्रमावरा:।।

ब्रह्मतत्त्ववेत्ता वशिष्ठ, भारद्वाज, भृगु, दधीचि आदि ब्रह्मर्षि कहलाते हैं। जो देवता ऋषि हो गये, वे नारदादि देवर्षि होते हैं। जो महान ऋषि या सन्त थे, वेदव्यास, वाल्मीकि आदि महर्षि होते हैं। सभी ऋषियों में सर्वश्रेष्ठ भेल आदि परमर्षि होते हैं। वेद की किसी एक शाखा, काण्ड या विद्या के ज्ञाता अथवा व्याख्याकार काण्डर्षि होते हैं। श्रुति-स्मृति में पारंगत सुश्रुत आदि श्रुतर्षि होते हैं। जो राजा ऋषि पद को प्राप्त कर लेते हैं, वे राजा जनक, विश्वामित्र आदि राजर्षि होते हैं। उक्त ऋषियों के सप्त प्रकार ज्ञान आदि की दृष्टि से क्रमश: अवरता को प्राप्त होते हैं।

मुनि – ब्रह्म के चिन्तन के लिये जो मौन धारण करता है, उसे मुनि कहते हैं। जिसे ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है, वही श्रेष्ठ मुनि है। मुनि प्राय: भाषण नहीं करता, मौन ही उसका व्याख्यान है, वह मन्त्रों के मनन-चिन्तन आदि में रत रहता है।

उक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि ऋषि अथवा मुनि एक विशिष्ट उपाधि है, जिसे प्राप्त करने के लिए मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, घृणा, जीव-हिंसा, असत्य भाषण, अशौच आदि विकारों का अपवारण करना होता है। इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करके एवं शुद्ध, सात्त्विक, समाधि अवस्था में ब्रह्म का साक्षात्कार अथवा दिव्य अनुभूति का अनुभव करनेवाला ऋषि उपाधि को सम्प्राप्त करता है।

युवावस्था का प्रभाव – युवावस्था मनुष्य के जीवन पर विशेष प्रभाव डालती है। यह चरित्र-निर्माण की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। युवावस्था राजनिघण्टु में १६-५० वर्ष मानी गई है। ज्योतिष शास्त्र के अनुसार १२-१६ वर्ष यौवनारम्भ काल माना गया है। इस प्रकार १२ वर्ष से ५० वर्षों के मध्य में मनुष्य अपने जीवन के परम लक्ष्य को प्राप्त करने में सन्नद्ध रहता है। ऋषि-मुनियों के लिए यह युवावस्था जीवनोन्नायिका, ऋषि-मुनि उपाधिप्रदायिका, अलौकिक आनन्दानुभूतिदायिका, ब्रह्मसाक्षात्कारिका, लोक-कल्याणविधायिका, परम तत्त्वज्ञानवर्धिका, अभय साधिका, आत्मतेजसंरक्षिका, तप:संयोजिका, सदाचार-विचारसम्पोषिका, आत्मज्ञानउपदेशिका आदि होती है। युवावस्था की दृष्टि से वैदिक, पौराणिक, लौकिक एवं आधुनिक ऋषि-मुनि-महापुरुष एवं सन्तों का आदर्श चरित्र लोक के लिये अनुकरणीय है। अनेक वैदिक-पौराणिक एवं लौकिक ऋषि-मुनियों ने युवावस्था में स्वकीय, सुचरित्र द्वारा ऋषि-मुनि उपाधि को प्राप्त किया एवं लोक के लिए प्रेरक बने। ऋषि-मुनियों के युवावस्था के चरित्र का अनुशीलन अभीष्ट है।

गुरु–सेवक उद्दालक

उद्दालक आरुणि एक वैदिक ऋषि हैं। इनके विषय में महाभारत के आदिपर्व में एक आख्यान प्राप्त होता है। जिसके

उद्दालक आरुणि

अनुसार विद्याध्ययन काल में इनके गुरु धौम्य ऋषि द्वारा इन्हें खेत पर मेड़ बाँधने की आज्ञा दी गई। खेत पर जाकर मेड़ को बाँधने का बहुत प्रयत्न करने पर भी पानी न रुकने की दशा में आरुणि स्वयं खेत की मेड़ के स्थान पर लेट गया, जिससे पानी का प्रवाह रुक गया। प्रात:काल होने पर गुरुजी स्वयं खोजते हुए खेत पर आये और इन्हें आवाज देकर पुकारा। गुरुजी के पुकारने पर आरुणि ने आकर धौम्य ऋषि को प्रणाम किया। गुरुसेवा से प्रसन्न होकर धौम्य ऋषि ने आरुणि को उद्दालक की उपाधि से विभूषित किया। इस प्रकार युवावस्था में आरुणि ने गुरुसेवा के द्वारा आशीर्वाद प्राप्त कर वैदिक ऋचाओं का साक्षात्कार किया।

गुरुभक्त उपमन्यु

उपमन्यु नामक एक महान ऋषि हुए थे। ये परम गुरुभक्त थे। इनकी कथा भी महाभारत के आदिपर्व में मिलती है। धौम्यऋषि के शिष्यों में यह परम गुरुभक्त थे। धौम्यऋषि ने इन्हें गौ-सेवा का कार्य दिया था। ये अत्यन्त पुष्ट थे। गुरुजी के द्वारा इनके हृष्ट-पुष्ट होने का कारण पूछने पर इन्होंने बताया कि गौ-सेवा के बाद भिक्षा वृत्ति से प्राप्त अन्न के द्वारा ये बलिष्ठ हैं। गुरु ने आज्ञा दी भिक्षावृत्ति पर गुरु का अधिकार होता है, अत: तुम उसे ग्रहण नहीं कर सकते। तदुपरान्त द्वितीय भिक्षा वृत्ति द्वारा भोजन किया, किन्तु उसके भी मना होने पर, गायों के दूध को पीना प्रारम्भ किया, उसके भी मना होने पर गायों के बछड़ों के मुख से दूध पीते समय नीचे गिरे हुए झाग को ग्रहण किया। उसके भी मना करने पर उपमन्यु ने मदार (आक) के पत्तों को खा लिया जिसके प्रभाव से वे अन्धे हो गए और एक सूखे कूप में गिर गये। उपमन्यु के आश्रम न पहुँचने पर गुरुजी ने इन्हें खोजा और कुँए में इनकी आवाज सुनी। धौम्य ऋषि ने इन्हें आज्ञा दी कि अश्विनी कुमार की स्तुति से तुम्हारी अन्धता नष्ट हो जाएगी। गुरु की आज्ञा पाकर अश्विनी कुमार की स्तुति करने से वह प्रसन्न हो गए और आशीर्वाद स्वरूप पुआ खाने को दिया। किन्तु बिना गुरु-आज्ञा के इन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया। अत: अश्विनी कुमार ने इनसे कहा कि इसी प्रकार पूर्वकाल में हमने तुम्हारे गुरु को भी पुआ खाने के लिए दिया था, तो उन्होंने इसे बिना गुरु की आज्ञा लिए खा लिया था। अत: तुम भी गुरु जैसा आचरण करो। किन्तु उपमन्यु के द्वारा मना करने पर अश्विनी कुमार गुरु-भक्ति से प्रसन्न हो गए और उसके अन्धत्व को दूर कर दिया। गुरु के आशीर्वाद से उपमन्यु को श्रेष्ठ ऋषियों में स्थान प्राप्त हो गया।

उपमन्यु

सत्यवादी सत्यकाम जाबाल

सत्यकाम जाबाल

सत्यकाम जाबाल का आख्यान छन्दोग्योपनिषद् में उपलब्ध होता है। ये सत्यवादी होने के कराण गुरु हारिद्रुमत गौतम ऋषि के आशीर्वाद से ब्रह्मविद्या के ज्ञाता हुए। वेदाध्ययन की तीव्र इच्छा होने से इन्होंने अपनी माता से पूछा कि मेरा गोत्र क्या है? माता ने उत्तर दिया कि मैं तुम्हारे पिता के घर अतिथियों की सेवा करनेवाली परिचारिका थी। युवावस्था में ही तुम्हारे पिता की मृत्यु हो जाने से मैं उनका गोत्र न जान सकी। तुम सत्यकाम हो और तुम्हारी माता मैं जबाला हूँ। अत: तुम स्वयं को सत्यकाम जबाल ही बताना।

इन्होंने ऋषि हरिद्रुमत गौतम के पास जाकर वेदाध्ययन की इच्छा प्रकट की। गुरु के गोत्र पूछने पर इन्होंने माता के द्वारा ज्ञात वृतान्त यथावत् कह सुनाया। आचार्य ने उनकी सत्यवादिता, श्रद्धा और निष्ठा से प्रसन्न होकर शिष्य के रूप में उन्हें दीक्षित कर दिया। तदुपरान्त आचार्य ने उन्हें चार सौ कृश गायें दी और उनकी सेवा के लिए नियुक्त किया। सत्यकाम जाबाल ने उन गायों को लेकर जाते हुए कहा कि जब तक इन गायों की संख्या एक सहस्र नहीं हो जाती, तब तक मैं नहीं लौटूँगा। एक सहस्र संख्या पूर्ण होने पर उसे वृषभ, अग्नि, हंस और मुदुगु के द्वारा चतुष्पाद वाले ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त हुआ। इस प्रकार सत्यकाम जाबाल ने सत्याचरण के द्वारा युवावस्था में ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया।

परशुराम

पितृ-भक्त परशुराम

भृगु ऋषि के पुत्र जमदग्नि एवं रेणुका के पाँचवे पुत्र राम थे। शिव के आशीर्वाद स्वरूप परशु अस्त्र प्राप्त होने के कारण वह परशुराम के नाम से विख्यात हुए। वह परम मातृ-पितृ भक्त थे। एक बार गन्धर्व राजा चित्ररथ को अप्सराओं के साथ विहार करते हुए देखकर उनकी माता रेणुका को जमदग्नि के लिये हवनार्थ जल लाने में विलम्ब एवं उनके द्वारा मानसिक व्यभिचार को जानकर जमदग्नि ऋषि क्रोधाभिभूत हो गए। अपने पुत्रों को माता का शिरच्छेद करने की आज्ञा दी। परशुराम के सभी ज्येष्ठ भाइयों के द्वारा आज्ञा मानने से मना करने पर पिता ने सभी को शाप दे दिया। अन्त में परशुराम से कहने पर उन्होंने बिना विचार किये माता का सिर काट दिया। जिससे जमदग्नि ने अत्यन्त प्रसन्न होकर वरदान माँगने को कहा। परशुराम ने माता का जीवन, उन्हें इस घटना का विस्मरण एवं भाइयों की पितृ शाप से मुक्ति का वरदान माँगा। वे परम मातृ-पितृ भक्त थे। एक बार हैहयवंशी कार्तवीर्य अर्जुन ने जमदग्नि से कपिला कामधेनु को बलात् छीन लिया, जिससे कुपित होकर परशुराम ने कार्तवीर्य अर्जुन का वध कर दिया। प्रतिशोध की दृष्टि से कार्तवीर्याजुन के पुत्रों ने जमदग्नि का वध कर दिया। जिसके प्रतिशोध में परशुराम ने २१ बार हैहयवंशी क्षत्रियों का पृथ्वी से समूल विनाश कर दिया। अत: परशुराम ने युवावस्था में मातृ-पितृ भक्ति से ऋषि पद को प्राप्त किया।

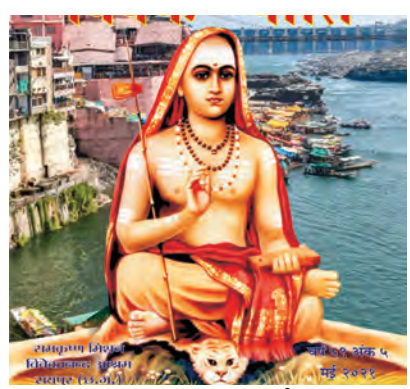

आदि शंकराचार्य

युवा ऋषि

युवा ऋषियों में अन्य अनेक ऋषियों की गणना होती है, जिन्होंने युवावस्था में त्याग, तपस्या, समर्पण अनन्य भक्ति एवं ब्रह्मज्ञान आदि के द्वारा ऋषि पद को प्राप्त किया। जैसे शिव-भक्त मार्कण्डेय ने १६ वर्ष की आयु प्राप्त कर अन्त समय में शिव-भक्ति के द्वारा दीर्घायु होने का वरदान प्राप्त किया। परम ज्ञानी अष्टावक्र ने १२ वर्ष की अवस्था में राजा जनक की सभा में शास्त्र में परास्त कर अपने बन्दी पिता कहोड़ को मुक्त कराया। उन्होंने अद्वैत का परम ज्ञान प्राप्त कर अष्टावक्रगीता की रचना की।

निर्लोभी नि:स्पृहयाचक कौत्स ऋषि

वरतन्तु के शिष्य कौत्स की कथा का उल्लेख कालिदास ने रघुवंश में किया है। जिसके अनुसार वरतन्तु ने कौत्स से १४ करोड़ स्वर्ण मुद्रा से गुरुदक्षिणा के रूप में माँगी। गुरुदक्षिणा स्वरूप १४ करोड़ स्वर्ण मुद्राओं के लिए कौत्स राजा रघु के पास गए। किन्तु राजा रघु अपना सर्वस्व यज्ञ दक्षिणा के रूप में दान कर मिट्टी के पात्रों में भोजन करने की दशा को प्राप्त हो गए थे। कौत्स के मन्तव्य को जानकर रघु ने कुबेर पर अतिक्रमण करने की इच्छा मात्र से कुबेर का सम्पूर्ण धन लेकर कौत्स को दे दिया। किन्तु कौत्स ने गुरु-दक्षिणा योग्य केवल १४ करोड़ स्वर्ण मुद्रायें ही लेकर अपने निर्लोभत्व एवं नि:स्पृहत्व का परिचय दिया। जिसके प्रभाव से उन्हें ऋषि पद प्राप्त हुआ।

आदि शंकराचार्य

आदि शंकराचार्य ने ८ वर्ष की अवस्था में संन्यास ग्रहण कर १६ वर्ष की अवस्था में ब्रह्मसूत्र पर शांकर भाष्य की रचना करके एवं बौद्ध धर्मावलम्बियों को शास्त्रार्थ में परास्त करके भारतवर्ष में बौद्धिक

ज्ञान-परम्परा की पुन:स्थापना की एवं ३२ वर्ष की युवावस्था में ही समाधिस्थ हो शिवसायुज्ज को प्राप्त किया। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में शताधिक रचनायें की एवं भारतवर्ष का भ्रमण करते हुए चार दिशाओं में ज्योतिष पीठ बद्रीनाथ, गोवर्धन पीठ पुरी, शारदापीठ द्वारिका, शृंगेरी पीठ, मैसूर में मठों की स्थापना की। युवावस्था में कृत कार्यों के द्वारा इन्होंने ऋषि पद को प्राप्त किया।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

आधुनिक काल में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जीवन चरित्र का अनुशीलन अपेक्षित प्रतीत होता है। स्वामी दयानन्द सरस्वती मात्र २२ वर्ष की अवस्था में सत्य की खोज में निकल पड़े। उन्होंने गुरु विरजानन्द से व्याकरण शास्त्र, योगसूत्र और वेद-वेदांग आदि का अध्ययन किया। इन्होंने पाखण्ड के खण्डन के लिए अनेक पण्डितों से

स्वामी दयानन्द सरस्वती

शास्त्रार्थ किया। समाज सुधार के लिए जनमानस को प्रेरित किया। आर्य समाज की स्थापना की। इन्होंने वेदों पर भाष्य एवं अन्याय रचनाओं का प्रणयन कर युवावस्था में ही ऋषित्व को प्राप्त किया।

स्वामी विवेकानन्द

आधुनिक ऋषियों में स्वामी विवेकानन्द का नाम बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है। युवावस्था में वह लोकहितकारी, समाज-सुधारक, राष्ट्रनायक, नारीहित-चिन्तक ज्ञानोपदेशक दार्शनिक, आत्मज्ञानी आदि के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त हुए। वे एक सामान्य चिन्तक नहीं थे, अपितु वे धर्म आदि को तर्क की कसौटी पर घिसकर उसमें निहित बाह्याडम्बरों को निकालकर नवनीत रूप गुह्यतम ज्ञानोद्घाटन के पक्षधर थे। उन्होंने समग्र विश्व में हिन्दू धर्म-ध्वजा को फहराया है। समूचे विश्व को भारत के सनातन धर्म के प्रति जागरूक एवं आकृष्ट करने का महनीय कार्य किया है। उन्होंने अपने चरित्र आदि के द्वारा सम्पूर्ण मानव जाति को सिखाया है कि किस प्रकार एक साधारण जन दृढ़ इच्छाशक्ति के द्वारा उच्चतम कोटि का आदर्श व्यक्तित्व धारण कर सकता है। आपने अपने व्याख्यानों एवं रचनाओं के द्वारा जन जागृति लाने का महनीय कार्य करते हुए युवा ऋषि के रूप में स्वयं को स्थापित किया है।

निष्कर्ष रूप से ये तथ्य प्रमाणित होते हैं कि युवावस्था में तन और मन में अनेक परिवर्तन होते हैं। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि अन्त:करण में स्थित शत्रुओं से आत्मरक्षा करनी चाहिए। इन्द्रियों के विषयोपभोग में न फँसते हुए उनका दमन करना चाहिए। आत्मतत्त्व ज्ञान के लिए सदा प्रयत्नशील रहना चाहिए। त्याग, तपस्या, समर्पण एवं सद्भाव का आचरण करना चाहिए। हिंसा का त्याग करना चाहिए। गुरुभक्ति में रत रहना चाहिए। ऐसे आचरण द्वारा युवावस्था में ही ऋषित्व को प्राप्त किया जा सकता है। उद्दालक, उपमन्यु, सत्यकाम-जाबाल, परशुराम, मार्कण्डेय, अष्टावक्र, कौत्स, आदिशंकराचार्य, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द आदि युवा ऋषियों के आदर्श जीवन चरित्रों के अवलोकन, अनुशीलन, मनन-चिन्तन से जन मानस उत्कृष्ट प्रेरणा प्राप्त कर सकता है। ○○○

स्वामी विवेकानन्द का युवकों को शक्ति और निर्भयता का सन्देश

स्वामी दिव्यानन्द

अध्यक्ष, काशीपुर उद्यानबाटी, कोलकाता

यदि हम भारत के सामाजिक धर्मशास्त्रों के इतिहास का अध्ययन करें, तो हम पाते हैं कि प्रत्येक युग में शाश्वत सत्य उस युग की मूल भावनाओं के अनुरूप ही अभिव्यक्त हुआ है। उदाहरणस्वरूप बौद्ध-युग में शान्ति की भाषा सत्य की वाहक बन गई, जबकि श्रीचैतन्य-युग में प्रेम की भाषा सत्य की सन्देशवाहक बनी। विश्लेषण करने पर हम सत्य की इस पुनराभिव्यक्ति को उस युग की समस्याओं के सर्वोत्तम समाधान के रूप में स्वीकार कर सकते हैं। सत्य की यह नवीन अभिव्यक्ति सदैव उस युग के आध्यात्मिक युग-प्रवर्तक द्वारा ही की जाती है, जो उस युग की सबसे अच्छी उत्पत्ति होती है। वह युग-प्रवर्तक उस युग के समक्ष उपस्थित चुनौतियों का सम्पूर्ण ज्ञान रखते हुए सत्य को ऐसी भाषा में व्यक्त करता है, जो मानवता को तत्कालीन युग के लिए निर्धारित बन्धन से मुक्त करती है। हमारे युग के प्रवर्तक युगाचार्य स्वामी विवेकानन्द ने व्यक्तिगत अस्तित्व के प्रति अत्यधिक लगाव को, हमारी भौतिकवादी संस्कृति को मूल रोग के रूप में पहचाना। अपने सीमित अस्तित्व के प्रति यह घृणित लगाव शारीरिक और मनोवैज्ञानिक आत्मविनाश के अविवेकपूर्ण भय के रूप में व्यक्त होता है। यह भय प्रत्येक प्रकार की स्वार्थपरता को जन्म देते हुए दृश्यमान् सीमित आत्मभाव की निरन्तरता, जिसे हम अपने अस्तित्व के रूप में स्वीकार करते हैं, को आश्वस्त करता है। इस अस्तित्व-भय का एकमात्र प्रतिकार व्यक्ति की शाश्वत आध्यात्मिक प्रकृति का स्पष्ट ज्ञान है।

वास्तव में आज की वैषयिक संस्कृति में यह व्यक्ति के अनश्वर आध्यात्मिक प्रकृति से जन्मी शक्ति ही है, जो उसे एक नि:स्वार्थ जीवन जीने के योग्य बनाती है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द जी ने हमारे युग के लिए शाश्वत सत्य का पुनर्निर्माण शक्ति और निर्भयता के सन्दर्भ में करना आवश्यक समझा। स्वामीजी कहते हैं – ''बल ही पुण्य है और दुर्बलता ही पाप। यदि तुम उपनिषदों में कोई ऐसा शब्द पाते हो, जो बम की तरह निकल कर अज्ञान की विपुल राशि पर फट पड़ता है, तो वह शब्द है 'निर्भयता'।'' एकमात्र धर्म जिसकी शिक्षा दी जानी चाहिए, वह है, निर्भयता का धर्म। अब शक्ति और निर्भयता के आदर्श को साकार करनेवाला सबसे उत्तम व्यक्ति कौन है? निस्संदेह, जो युवा हो। पुन: स्वामीजी के शब्दों को उद्धृत करते हुए, 'युवा, बलिष्ठ, स्वस्थ और कुशाग्रबुद्धि व्यक्ति ही ईश्वर को प्राप्त करेंगे। यही समय है, जब आपको अपना भविष्य तय करना है, जब आपके पास यौवन की ऊर्जा हो, न कि तब, जब आप थके और क्लान्त हो चुके हों, बल्कि तब जब युवावस्था की ताजगी और जोश में हों। कर्म करो, यही समय है; क्योंकि केवल नवीनतम, अस्पृश्य और अघ्राणित पुष्प ही देव-चरणों में अर्पण किए जाते हैं और उन्हें ही वे स्वीकार करते हैं। स्वयं को जगाओ, क्योंकि यह जीवन अत्यन्त छोटा है।''

वास्तव में युवाओं की योग्यता में उनकी असीमित आस्था के कारण ही स्वामीजी ने कहा है, 'मेरा विश्वास युवा पीढ़ी, आधुनिक पीढ़ी में है। मेरे कार्यकर्ता उनमें से ही निकल कर आएँगे। वे सिंहों की भाँति सारी समस्याओं का समाधान करेंगे।' पुन: इसी क्रम में स्वामीजी कहते हैं, 'मुझे विश्वास है, अपने देश पर और विशेष रूप से अपने देश के युवाओं पर। मेरी आशा तुमसे है, रक्त में अपरिमित

चेतना और उत्साह के साथ ऐसे वीर आएँगे, जो पृथ्वी के एक कोने से दूसरे कोने तक हमारे पूर्वजों के शाश्वत आध्यात्मिक सत्यों को प्रचारित करते हुए उनकी शिक्षा देंगे।'

एक और स्थान पर स्वामीजी कहते हैं, 'भविष्य के लिए मेरी आशा उन युवाओं में है, जो चरित्रवान, बुद्धिमान, परोपकार हेतु सर्वस्व त्यागनेवाले और स्वयं व सम्पूर्ण देश के प्रति आज्ञाकारी हों।' पुन: स्वामीजी कहते हैं, 'ऐसे सैंकड़ों-हजारों पुरुष और महिलाएँ पवित्रता का ज्वलन्त जोश लिए, ईश्वर में शाश्वत विश्वास से सुदृढ़ और दरिद्रों, दलितों और निम्न स्तर के लोगों के प्रति अपनी करुणा में सिंह-विक्रम लिए पृथ्वी के चारों कोनों में जाकर मुक्ति की, सहायता की, सामाजिक उत्थान की और समानता की अमृतवाणी का प्रचार करेंगे।'

वास्तव में चिर-यौवन के प्रतीक होने के कारण स्वामीजी का ज्वलन्त प्रोत्साहन युवाओं के मन में गहरी पैठ बना लेता है। आइए, कुछ ऐसे क्षेत्रों की समीक्षा करें, जिनमें युवाओं के प्रति स्वामीजी का शक्ति और निर्भयता का सन्देश और भी प्रभावशाली एवं स्पष्ट है।

स्वामीजी कहते हैं – ''जीवन का लक्ष्य नि:स्वार्थपरता और परोपकार है। यह जीवन बलिदान के निमित्त है।

''यह जीवन अत्यन्त छोटा है, सांसारिक दिखावा क्षणभंगुर है। किन्तु केवल वही जीते हैं, जो दूसरों के लिए जीते हैं। शेष तो जीवित होकर भी मृत हैं।

''बलिदान ही अतीत का नियम रहा है, पर हाय ! युगों-युगों तक यह नियम रहेगा ही। धरा के सबसे साहसी और श्रेष्ठ लोगों को अनेकों की भलाई और कल्याण हेतु अपना बलिदान देना ही होगा। शाश्वत प्रेम और करुणा से सम्पन्न सैकड़ों बुद्ध की आवश्यकता है।''

उनके अनुसार दीनजनों का हित-साधन कर्म की उच्चतम अवस्था थी। युवाओं को दीनों के प्रति संवेदनशील रहते हुए उनका हित-साधन करना चाहिए। विशेष रूप से वर्तमान युग में, जबकि समाज में असमानता बढ़ती जा रही है।

स्वामीजी कहते हैं – अनुभव करो, मेरे बच्चो, पीड़ा का अनुभव करो; दरिद्रों, उपेक्षितों और वंचितों की पीड़ा का तब तक अनुभव करो, जब तक कि तुम्हारा हृदय रुकने और मस्तिष्क चकराने न लगे और तुम्हें लगे कि तुम पागल हो जाओगे।

यह बल ही है, जो व्यक्ति को अपने कार्यों के प्रति उत्तरदायी बनाता है। इस परिपेक्ष्य में स्वामीजी युवाओं को सम्बोधित करते हैं, 'उठो ! साहसी बनो! बलवान बनो! सब उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लो और याद रखो कि तुम स्वयं अपने भाग्य के निर्माता हो।'

स्वामीजी चाहते थे कि युवा संगठित हों और संकीर्णता से दूर रहें। केवल इसी मार्ग से वे भारत के भविष्य का निर्माण कर पाएँगे। उन्होंने कहा, ''एकमत होना ही समाज का रहस्य है और जितना ही अधिक तुम द्रविड़-आर्य, ब्राह्मण-अब्राह्मण जैसे संकीर्ण प्रश्नों पर लड़ोगे-झगड़ोगे, उतना ही तुम उस शक्ति और ऊर्जा के संचय से दूर होते जाओगे, जो भविष्य के भारत का निर्माण करने जा रही है।''

जब तक युवा-वर्ग अपना चरित्र गठन नहीं कर लेता, उनकी ऊर्जा असृजनात्मक धाराओं में व्यर्थ होती रहेगी। स्वामीजी कहते हैं – संसार को आवश्यकता है चरित्र की। संसार को आवश्यकता है ऐसे व्यक्तियों की, जिनका जीवन एक नि:स्वार्थ ज्वलन्त प्रेम हो, वह प्रेम प्रत्येक शब्द को वज्र की भाँति प्रभावशाली बनाता है।

युवाओं का स्वास्थ्य उत्तम होना चाहिए। उन्हें इस पर कार्य करना चाहिए। उन्हें खेल-कूद, व्यायाम और शारीरिक रूप से सक्रिय रहना चाहिए। अन्यथा वे अपने आदर्शों पर कार्य न कर पाएँगे। स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन निवास करता है। स्वामीजी के वचन हैं – 'मेरे बच्चो, मैं जो चाहता हूँ, वह है – लोहे की मांसपेशियाँ और फौलाद के स्नायु, जिनमें एक ऐसा मन निवास करता हो, जो उसी धातु से बना हो, जिससे वज्र बना है।'

हमने अपनी चर्चा स्वामीजी के सत्य के पुनर्गठन को, बल और निर्भयता के रूप में इंगित करते हुए प्रारम्भ की थी। वास्तव में सच्ची निर्भयता उस मन:स्थिति के समरूप है जो कि सन्तुलन के साथ मृत्यु का सामना करती है। इसी परिप्रेक्ष्य में स्वामीजी के जीवन की एक घटना बताते हुए मैं इस विषय का उपसंहार करता हूँ। यह घटना पेरिस में जन्मे एक युवक (Duke of Rechelieu) के विषय में है, जो स्वामीजी से सन् उन्नीस सौ ईसवी. में मिला था। यह पेरिस की एक प्रदर्शनी का समय था, जिसमें स्वर्गीय जगदीश चन्द्र बोस वैज्ञानिकों के सम्मेलन में भारतीय

शेष भाग पृष्ठ ४६ पर

विद्यार्थी जीवन ही चरित्र-निर्माण का सर्वाधिक उपयुक्त समय

नवनीहरण मुखोपाध्याय

संस्थापक, अखिल भारत युवा महामंडल, कोलकाता

चरित्र के बिना हमारे अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। हमारा चरित्र चाहे भला हो या बुरा, वह हमारी इच्छा की परवाह किए बिना हमारे अस्तित्त्व के साथ अविभाज्य रूप से जुड़ा रहता है।

यदि हम अपनी शारीरिक और मानसिक क्रियाओं से निर्मित सत्संस्कारों की अतिरिक्त बढ़त को अच्छाई के पक्ष में संवर्द्धित न करना चाहते हों, केवल तभी चरित्र-निर्माण के कार्य को भविष्य की किसी सुविधाजनक तिथि तक के लिए टाले रख सकते हैं। यदि हम इस मनोवैज्ञानिक तथ्य का ध्यान रखें कि ''हमारी प्रत्येक मानसिक या शारीरिक गतिविधियाँ हमारे चरित्र को प्रभावित करने के लिए बाध्य हैं तथा भूल से भी यदि बुरी प्रवृत्तियों ने मन में जड़ जमा लिया और एक बार भी चरित्र बिगड़ गया, तो आसानी से उसे सच्चरित्र में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।'' इस सीधी-सी बात को हम यदि एक बार भी अच्छी तरह से समझ लें, तो फिर हममें से शायद ही कोई अपने चरित्र निर्माण के कार्य को जीविकोपार्जन की तिथि तक स्थगित रखना चाहेगा।

इसीलिए जब कभी हमारे मन में यह प्रश्न उठे कि जीवन स्तर को ऊँचा उठाने वाली भौतिक सामग्रियों के संग्रह अथवा चरित्र-निर्माण के लिए सार्थक प्रयास में से किसे प्राथमिकता दी जाए, तो धैर्यपूर्वक विवेक-विचार करने के बाद ही कोई निर्णय करना चाहिए तथा उपरोक्त प्रकार से विचार-विश्लेषण करने के बाद हमें यह समझ में आ जाएगा कि कुछ मानवीय आवश्यकताएँ तत्काल पूर्ण की जानेवाली अनिवार्य आवश्यकताएँ होती हैं और चरित्र निर्माण

के उपायों को सीख लेना भी उसी प्रकार से तत्काल पूर्ण की जानेवाली अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपायों को रोजगार की व्यवस्था कर लेने से पूर्व ही अर्थात् विद्यार्थी जीवन से ही प्रयोग में लाना प्रारम्भ कर देना चाहिए। क्योंकि विद्यार्थी जीवन में मन मिट्टी के लोंदे जैसा मुलायम होता है। वह सत् या असत्, अच्छे-बुरे किसी भी भाव को ग्रहण करने के प्रति अतिग्रहणशील तथा शीघ्र प्रभावित हो जानेवाला होता है। इसीलिए इस समय बुरी आदतों या अच्छी आदतों में से किसी को भी अत्यन्त सरलता से अपनाया जा सकता है।

जबकि आयु अधिक बढ़ जाने के बाद यह कार्य उतना सरल नहीं रह जाता। वही विद्यार्थी जीवन में डाली गई अच्छी आदतें सत्प्रवृत्तियों या सत्संस्कारों में परिणत हो जाती हैं और गृहस्थ जीवन में प्रविष्ट होने के पूर्व ही हमारा चरित्र अच्छा बन गया होता है तथा जीवन को सफल करनेवाले सारे सद्गुण हमारे आचरण में झलकने लगते हैं। किन्तु यदि हम अविवेकी के समान 'चरित्र' को केवल एक विलासिता की वस्तु या दिखावटी वस्तु समझकर बिना चरित्र-निर्माण किए ही गृहस्थ जीवन में कूद पड़ें, तो कुछ ही वर्षों बाद हमें यह निश्चित तौर पर अनुभव होने लगेगा कि चरित्र का अभाव प्रतिपल हमारे जीवन को कष्ट में डाल रहा है।

मान लीजिए मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में चरित्र-निर्माण के प्रति थोड़ी भी रुचि नहीं दिखाई, जिससे मुझमें विश्वसनीयता, ईमानदारी, समयनिष्ठता, सत्यनिष्ठा तथा अध्यवसाय आदि सद्गुणों का घोर अभाव हो गया और फिर जीविकोपार्जन का साधन भी ढूँढ पाने में असफल रहा, तो इसके लिए कौन उत्तरदायी होगा? निश्चित ही इसके लिए मेरा दुर्बल चरित्र ही उत्तरदायी होगा। इस बात को प्रमाणित करने के लिए क्या कोई और तर्क देना पड़ेगा?

इतना ही नहीं चरित्र रूपी मजबूत दुर्ग बनाए बिना अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए मेरे द्वारा किया गया संग्राम मुझे ऐसी स्थिति में ला खड़ा करेगा, जहाँ एक ग्रास अन्न जुटाने की यंत्रणा से भी अधिक भयावह परिस्थितियाँ खड़ी हो जाएँगी।

इतना सब समझ-बूझ लेने के बाद स्पष्ट हो जाता है कि चरित्र-निर्माण के कार्य को उसकी अपनी स्वाभाविक विलक्षणता के कारण अन्य दूसरी अनिवार्य आवश्यकताओं के पूर्ण हो जाने तक स्थगित नहीं रखा जा सकता है। इसीलिए हमेशा, विशेषकर छात्र-जीवन में अपनी प्रत्येक शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं (व्यवहार एवं विचार) को नियन्त्रित करने का प्रयास भले-बुरे परिवेश का ध्यान रखे बिना सदा करते रहना चाहिए। ○○○

पृष्ठ ४४ का शेष भाग

प्रतिनिधि थे। एक दिन स्वामीजी ने उस युवराज से कहा कि वे अगले दिन भारत के लिए प्रस्थान कर रहे हैं और यह जानना चाहते हैं कि क्या वह (युवराज) संसार को त्याग कर उनका शिष्य बनेगा? 'मुझे इसके बदले में क्या मिलेगा?' युवराज के यह पूछने पर स्वामीजी ने उत्तर में कहा, 'मैं तुम्हें मृत्यु की इच्छा प्रदान करूँगा।' युवराज यह सोचकर हँसा कि स्वामीजी कदाचित् नादानी कर रहे हैं। उसने अभी-अभी विश्वविद्यालय से स्नातक किया था और अपनी आजीविका आरम्भ करने वाला था, उसे मृत्यु से क्या लेना-देना? उसने स्वामीजी से कुछ अधिक प्रलोभनीय देने के लिए कहा। स्वामीजी गम्भीरतापूर्वक बोले, यदि तुम मेरे शिष्य बनोगे, तो मैं तुम्हें मन की ऐसी अवस्था प्रदान करूँगा कि मृत्यु के सम्मुख आने पर तुम उस पर हँसोगे।

क्या यह निर्भयता का सच्चा सन्देश नहीं है, जो स्वामीजी ने रिचेल्यू के युवराज के माध्यम से युवाओं के समक्ष प्रस्तुत किया? हमारा ऐसा ही विश्वास है। आइए, हम सभी निर्भयता के उस महान आदर्श को जीने की अनवरत चेष्टा करते हैं, जो स्वामीजी ने हमारे लिए निर्धारित किया है। ○○○

जीवात्मा की वासभूमि इस शरीर से ही कर्म की साधना होती है, जो इसे नरककुण्ड बना देते हैं, वे अपराधी हैं और जो इस शरीर की रक्षा में ही प्रयत्नशील नहीं होते, वे भी दोषी हैं।

शारीरिक दुर्बलता कम से कम हमारे एक तिहाई दुखों का कारण है। — स्वामी विवेकानन्द

विवेक-ज्योति के अंक ऑनलाइन निःशुल्क पढ़ें : www.rkmraipur.org

क्रान्तिकारी नौजवानों के आदर्श : शहीदे-आजम भगतसिंह

अवधेश प्रधान

पूर्व प्राध्यापक बी.एच.यू., वाराणसी

भगतसिंह ने १८ साल की उम्र में 'बलवन्त सिंह' छद्म नाम से एक लेख लिखा था जो 'साप्ताहिक मतवाला' के १६ मई, १९२५ के अंक में छपा था। भाव से लेकर भाषा तक में ललित निबन्ध का नया आवेग और ओजस्वी प्रवाह तो है ही; इसमें युवावस्था की भावोच्छ्वसित प्रशंसा के साथ-साथ स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़ने के लिए युवकों के प्रति उत्प्रेरक अवलम्ब भी है। अमेरिका के कुछ युवक दल के नेता पैट्रिक हेनरी की वक्तृता का यह अंश उद्धृत किया है, ''जेल की दीवारों से बाहर की जिन्दगी बड़ी महँगी है, पर जेल की काल-कोठरियों की जिन्दगी और भी महँगी है, क्योंकि वहाँ यह स्वतंत्रता-संग्राम के मूल्य-रूप में चुकाई जाती है।'' अत्याचारी अँग्रेज सरकार के खिलाफ संघर्ष करने को लेकर देश के नौजवानों में कोई हिचक न रहे, इसलिए भगतसिंह इसी लेख में अमेरिकी युवकों की निर्भीक घोषणा उद्धृत करते हैं, ''अमेरिका के युवक यह विश्वास करते हैं कि जन्मसिद्ध अधिकारों को पद-दलित करनेवाली सजा का विनाश करना मनुष्य का कर्त्तव्य है।''

संसार के इतिहास में अनेक क्रान्तियों के पीछे युवकों की भूमिका का उल्लेख करने के बाद क्रान्तिकारी नौजवानों के त्याग, बलिदान, शूरता और कष्ट-सहिष्णुता की याद दिलाते हुए वे लिखते हैं, ''सच्चा युवक तो बिना झिझक के मृत्यु का आलिंगन करता है, चोखी संगिनों के सामने छाती खोलकर डट जाता है, तोप के मुँह पर बैठकर भी मुस्कराता ही रहता है, बेड़ियों की झंकार पर राष्ट्रीय गान गाता है और फाँसी के तख्ते पर अट्टहासपूर्वक आरुढ़ हो जाता है। फाँसी के दिन युवक का वजन बढ़ता जाता है, जेल की चक्की पर युवक ही उद्बोधन-मंत्र गाता है, कालकोठरी के अंधकार में धँसकर ही वह स्वदेश को अंधकार के बीच से उबारता है।'' भगतसिंह ने सच्चे युवक के जिस क्रान्तिकारी आदर्श का यहाँ वर्णन किया है, उसे अपने जीवन में उन्होंने शब्दश: चरितार्थ करके दिखा दिया।

उनका जन्म २७ सितम्बर, १९०७ को पंजाब के लायलपुर (पाकिस्तान) जिले के बंगा गाँव में हुआ था। उनके दादा अर्जुनसिंह ने सिक्ख होते हुए भी स्वामी दयानन्द से आर्य समाज की दीक्षा ली थी। आर्य समाज के प्रभाव से उनके परिवार में धार्मिक रुढ़िवादी और सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध विरोध की भावना अत्यन्त प्रबल थी। भगतसिंह के पिता सरदार कियान सिंह और चाचा अजीतसिंह तन-मन से देशभक्ति के रंग में रंगे थे। उनके घर में क्रान्तिकारियों का आना-जाना लगा रहता था। भगतसिंह को देशभक्ति की शिक्षा घुट्टी में मिली थी। उन्होंने घर में रखी तमाम क्रान्तिकारी पुस्तकें और पत्रिकाएँ पढ़कर देश-दुनिया, राजनीति और इतिहास का ज्ञान प्राप्त किया। १३ अप्रैल, १९१९ के जलियावाला बाग हत्याकांड ने समूचे पंजाब में और धीरे-धीरे समूचे देश में अंग्रेजी राज के प्रति क्रोध और प्रतिशोध की आग भड़का दी। १२ साल के भगतसिंह सोलह मील पैदल चलकर वहाँ की खून-सनी मिट्टी अपने साथ लेकर आए और रोज उस पर अपनी श्रद्धा के फूल चढ़ाने लगे ! आयरलैण्ड के स्वतंत्रता संग्राम और फ्रांसीसी राज्यक्रान्ति के इतिहास से, मैजिनी और गैरीबाल्डी, पाल्तेयर, रूसो और क्रोपातकिन के जीवन और साहित्य से उन्हें भारी प्रेरणा मिली। फ्रांस के क्रांतिकारी वेलाँ का यह

कथन उनके मन-प्राण में प्रतिध्वनित होता रहता, ''बहरों को सुनाने के लिए ऊँची आवाज की जरूरत होती है।'' भगतसिंह की जिन्दगी और उनकी क्रांतिकारी गतिविधियाँ अत्याचारी अंग्रेजी राज के विरुद्ध ऐसी ही ऊँची आवाज थी !

क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल से उनका सम्पर्क हुआ। वे उनके दल के सदस्य बन गए। इधर उनकी दादी ने उन्हें विवाह के बंधन में बाँधने की कोशिश की, उधर भगतसिंह ने पिताजी को पत्र लिखकर बता दिया था कि उन्होंने अपना जीवन देश की सेवा के लिए अर्पित करने का निश्चय कर लिया है। वे दिल्ली होते हुए कानपुर आ गए। यहाँ योगेशचंद्र चटर्जी, सुरेशचंद्र भट्टाचार्य, बटुकेश्वर दत्त, अजय घोष और गणेशशंकर विद्यार्थी से उनकी भेंट हुई। गुप्त क्रान्तिकारी गतिविधियों के साथ ही उन्होंने यशपाल, सुखदेव, भगवतीचरण वोहरा आदि के साथ मिलकर नौजवान सभा का गठन किया ताकि उसके माध्यम से जनता के बीच राजनीतिक प्रचार किया जा सके। १९२३ से १९२८ तक उन्होंने प्रताप, किर्ती, महारथी, मतवाला, पीपुल्स आदि पत्रों में हिंदी, पंजाबी और अंग्रेजी में अनेक राजनीतिक-सामाजिक विषयों पर लेख और टिप्पणियाँ लिखीं।

दिसम्बर, १९२७ में काकोरी कांड के चार बड़े क्रांतिकारियों – रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाक उल्लाह खाँ ठाकुर रोशनसिंह और राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी को फाँसी दे दी गई। चंद्रशेखर आजाद से विचार-विमर्श के बाद भगतसिंह ने ८ और ९ सितम्बर, १९२८ को दिल्ली के फीरोजशाह कोटला के खंडहरों में क्रांतिकारियों की एक गुप्त बैठक की जिसमें क्रांतिकारियों की पार्टी का नाम 'हिन्दुस्तान रिपब्लिक एसोसिएशन' से बदलकर 'हिंदुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसिएशन' कर दिया गया। चंद्रशेखर आजाद को कमांडर इन चीफ बनाया गया और भगतसिंह और विजयकुमार सिन्हा को प्रचार और अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क की जिम्मेदारी सौंपी गई। उस समय समूचे देश में साइमन कमीशन का विरोध हो रहा था। ३० अक्तूबर, १९२८ को साइमन कमीशन जब लाहौर पहुँचा, उसका स्वागत पंजाब ने तीखे प्रतिवाद के साथ किया। जबर्दस्त लाठी चार्ज हुआ जिसमें लाला लाजपतराय बुरी तरह घायल हो गए। बीस दिन बाद ही उनकी मृत्यु हो गई। समूचे देश ने इसे राष्ट्र का अपमान समझा। क्रांतिकारियों ने लालाजी पर लाठी चलाने वाले अंग्रेज सांडर्स की हत्या करके इस अपमान का बदला लिया। सांडर्स की हत्या के दूसरे दिन क्रांतिकारियों ने एक पर्चा बाँटा जिसमें अंग्रेज सरकार को ''संसार की सबसे अत्याचारी सरकार'' कहा और अपना दृष्टिकोण इन शब्दों में स्पष्ट किया, ''हमें एक आदमी की हत्या करने का खेद है। लेकिन यह आदमी बस निर्दयी, नीच और अन्यायपूर्ण व्यवस्था का अंग था जिसे समाप्त करना आवश्यक है।'' क्रांति का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए पर्चे में कहा गया था कि, ''हमारा उद्देश्य एक ऐसी क्रांति से है जो मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त कर देगी।'' गिरफ्तारी से बचने के लिए भगतसिंह अपने केश कटवा कर हैट पहने हुए साहबी पोशाक में भगवतीचरण वोहरा की पत्नी दुर्गा भाभी के साथ लाहौर से कलकत्ता चले गए।

दिल्ली की केन्द्रीय असेंबली में सार्वजनिक सुरक्षा बिल (पब्लिक सेफ्टी बिल) और औद्योगिक विवाद विधेयक (इंडस्ट्रियल डिसब्यूट बिल) नाम के दो दमनकारी कानून पेश होने वाले थे। इसका विरोध करने के लिए भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने ८ अप्रैल, १९२९ को दर्शकदीर्घा से केन्द्रीय असेम्बली में होम मेम्बर के बेंच के पीछे की ओर से बम फेंके। बम के धमाके से सारा हाल दहल उठा। दोनों साथियों ने नारे लगाए – इन्कलाब जिन्दाबाद। साम्राज्यवाद का नाश हो। दुनिया के मजदूरों एक हो। उन्होंने अपने पर्चे हाल में फेंक दिए जिनमें लिखा था, ''बहरों को सुनाने के लिए बहुत ऊँची आवाज की जरूरत होती है – प्रसिद्ध फ्रांसीसी क्रान्तिकारी अराजकतावादी वेलाँ के ये अमर शब्द हमारे काम के औचित्य के साक्षी हैं।'' पर्चे में ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत का अपमान करने, एक पर एक दमनकारी कानून लाकर और किसानों की अंधाधुंध गिरफ्तारियाँ करके आतंक का राज्य कायम करने का हवाला देने के बाद बम विस्फोट का प्रयोजन स्पष्ट किया गया था, ''यह कार्य इस प्रयोजन से किया जा रहा है कि कानून का यह अपमानजनक प्रहसन समाप्त कर दिया जाये। विदेशी शोषक नौकरशाही जो चाहे करे लेकिन उसकी वैधानिकता की नकाब फाड़ देना आवश्यक है।'' पर्चे में जनता के प्रतिनिधियों से पार्लियामेंट का पाखंड छोड़कर अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्रों में लौट जाने और ''जनता को विदेशी दमन और शोषण के विरुद्ध क्रांति के लिए तैयार'' करने की अपील की गई थी। पर्चे में विदेशी सरकार को स्पष्ट शब्दों में बताया गया था कि ''हम सार्वजनिक... और औद्योगिक विवाद के दमनकारी कानूनों और लाला लाजपत राय की हत्या के विरोध में देश की

जनता की ओर से यह कदम उठा रहे हैं।''

दोनों की गिरफ्तारियों के बाद देशभर में छापे पड़े और कई क्रांतिकारी पकड़े गए। भगतसिंह ने जेल में रहते हुए निरंतर अध्ययन किया, अपनी क्रांतिकारी विचारधारा को मनन, चिंतन और लेखन के द्वारा निरंतर निखारा और अपने लम्बे-लम्बे बयानों के द्वारा देश के क्रांतिकारी राजनीति का प्रचार करने के लिए अदालत का भरपूर उपयोग किया। मुकदमा भी राजनीतिक लड़ाई का एक मंच बन गया। भगतसिंह का नाम पूरे देश में फैल गया। लोग क्रांतिकारियों की ओर एक नई आशा से देखने लगे।

दिल्ली बम केस में भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त को आजीवन कारावास की सजा हुई। फिर भगतसिंह और दूसरे क्रांतिकारियों पर सम्राट के विरुद्ध षड्यंत्र करने के आरोप में ''लाहौर षड्यंत्र'' का मुकदमा चलाया गया। अदालत ने इसमें भगतसिंह, राजगुरु और सुखदेव को फाँसी की सजा सुनाई। जब अदालत का फाँसी का हुक्मनामा आया, भगतसिंह उस समय लेनिन की जीवनी पढ़ रहे थे। अपनी न्यायप्रियता का दम भरने वाली ब्रिटिश सरकार ने सारे अन्तर्राष्ट्रीय कानून को ताक पर रखकर एक दिन पहले ही २३ मार्च, १९३१ को संध्या वेला में तीनों क्रान्तिकारियों को जेल में फांसी दे दी। जेल की पिछली दीवार तोड़कर उनकी लाशों को निकाला गया और उन पर मिट्टी का तेल डालकर जलाने की कोशिश की गई। तब तक सुराग लगते ही वहाँ लोग पहुँच गए और पुलिस ने आनन-फानन में अधजली लाशों के टुकड़े नदी में बहा दिए ! यह थी गोराशाही के कानूनी राज की हकीकत ! स्वयं भगतसिंह और उनके अनुयायियों को भी अनुमान हो गया था कि उन्हें फाँसी होगी। लेकिन भगतसिंह के मन में कोई भय या पश्चाताप नहीं था। शिव वर्मा ने लिखा है कि १९३० की जुलाई में अंतिम रविवार को भगतसिंह सरकार से विधिवत् अनुमति लेकर लाहौर सेन्ट्रल जेल से बोस्टर्ल जेल आए थे। वहाँ साथियों से बातचीत के दौरान उन्होंने बड़े दृढ़ स्वरों में कहा कि मैं जानता हूँ कि मुझे फाँसी होगी। वे क्रांतिकारी तो थे ही, एक क्रांतिकारी दार्शनिक भी थे। वे जानते थे कि फाँसी से केवल पार्थिव शरीर की मृत्यु होगी, पर उनके विचार जीवित रहेंगे। उन्होंने साथियों से कहा, ''देशभक्ति के लिए यह सर्वोच्च पुरस्कार है और मुझे गर्व है कि मैं यह पुरस्कार पाने जा रहा हूँ। वे सोचते हैं कि मेरे पार्थिव शरीर को नष्ट करके वे इस देश में सुरक्षित रह जाएँगे। यह उनकी भूल है। वे मुझे मार सकते हैं, लेकिन मेरे विचारों को नहीं मार सकते। वे मेरे शरीर को कुचल सकते हैं, लेकिन मेरी भावनाओं को नहीं कुचल सकेंगे। ब्रिटिश हुकूमत के सिर पर मेरे विचार उस दमन तक एक अभिशाप की तरह मँडराते रहेंगे जब तक वे यहाँ से भागने के लिए मजबूर न हो जाएँ।'' उनका दृढ़ विश्वास था कि उनकी मृत्यु के बाद भी उनके विचार अपना काम करते रहेंगे, ''ब्रिटिश हुकूमत के लिए मरा हुआ भगतसिंह जीवित भगतसिंह से ज्यादा खतरनाक होगा। मुझे फाँसी हो जाने के बाद मेरे

भगत सिंह सुखदेव थापर शिवराम हरि राजगुरु

क्रांतिकारी विचारों की सुगंध हमारे इस मनोहर देश के वातावरण में व्याप्त हो जाएगी। वह नौजवानों को मदहोश करेगी और वे आजादी और क्रांति के लिए पागल हो उठेंगे। नौजवानों का पागलपन ही ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को विनाश के कगार पर पहुँचा देगा। यह मेरा दृढ़विश्वास है। मैं बेसब्री के साथ उस दिन का इंतजार कर रहा हूँ, जब मुझे देश के लिए मेरी सेवाओं और जनता के लिए मेरे प्रेम का सर्वोच्च पुरस्कार मिलेगा।'' भगतसिंह के शरीर की सीमा थी, लेकिन उनके विचारों, आदर्शों के प्रसार की कोई सीमा नहीं रही। वे क्रांतिकारी नौजवानों के प्रेरणादायी आदर्श बन गए। उनका नारा 'इंकलाब जिंदाबाद' जिस प्रकार आजादी की लड़ाई के दौरान था, उसी प्रकार आजादी के बाद भी क्रांतिकारियों का नारा बन गया। उनका फोटो ग्रामों के पान की दुकानों तक छा गया। उनके विचारों ने क्रांति को आतंकवाद और अराजकतावाद से बाहर लाकर एक सही दिशा दी। उन्होंने लाहौर हाई कोर्ट में बयान देते हुए कहा था, ''पिस्तौल और बम इंकलाब नहीं लाते, बल्कि इंकलाब की तलवार विचारों की शान पर तेज होती है।''

आमतौर पर लोग भगतसिंह जैसे क्रांतिकारियों को बम और पिस्तौल तक सीमित करके देखते हैं और उनके विचारों की ओर ध्यान नहीं देते। आज जरूरी है कि हम उनके विचारों पर ध्यान दें और उनका महत्त्व समझें। २ फरवरी, १९३१ को 'कौम के नाम अंतिम संदेश' में उन्होंने कहा था, ''यदि देश की लड़ाई लड़नी हो, तो मजदूरों, किसानों और सामान्य जनता को आगे लाना होगा, उन्हें लड़ाई के लिए संगठित करना होगा।'' इसी संदेश में उन्होंने अपने दल 'सोशलिस्ट रिपब्लिकन पार्टी' का लक्ष्य स्पष्ट करते हुए कहा था, ''हमारा लक्ष्य शासन शक्ति को उन हाथों के सुपुर्द करना है, जिनका लक्ष्य समाजवाद हो। इसके लिए मजदूरों और किसानों को संगठित करना आवश्यक होगा। क्योंकि उन लोगों के लिए लार्ड रीडिंग या इर्विन की जगह तेजबहादुर या पुरुषोत्तम दास, ठाकुरदास के आ जाने से कोई फर्क न पड़ेगा।'' प्रेमचंद ने अपनी कहानी 'आहुति' में रुपमणि के मुँह से ठीक यही बात कहलवाई थी, अगर समाज में पूँजी और पैसे का शोषण चक्र और जात-पाँत की जगह गोविन्द को कुर्सी पर बैठा दिया जाये, तो मैं इसे आजादी नहीं समझती। भगतसिंह के लिए आजादी का मतलब गोरे साहबों की जगह काले साहबों का गद्दीनशीन होना भर नहीं था। उनके लिए आजादी का मतलब था – करोड़ों-करोड़ गरीब और दलित हिन्दू-मुसलमान-सिक्ख आदि विभिन्न धर्मों को माननेवाली जनता की सामंती और पूँजीवादी शोषण से मुक्ति और इसके लिए वे किसानों और मजदूरों को संगठित करने पर जोर दे रहे थे। उपर्युक्त संदेश में उन्होंने कहा है कि मैं आतंकवादी नहीं हूँ, क्रांतिकारी हूँ। उन्होंने साफ साफ कहा है, ''इस बम से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते... हमारा मुख्य लक्ष्य मजदूरों और किसानों का संगठन होना चाहिए।''

उनकी क्रांति केवल राजनीति तक सीमित नहीं थी; वे राजनीतिक, आर्थिक मुक्ति के साथ-साथ सामाजिक मुक्ति के भी समर्थक थे। अप्रैल, १९२८ में आयोजित 'नौजवान भारत', लाहौर के घोषणा पत्र में कहा था, ''धार्मिक अंधविश्वास और कट्टरपन हमारी प्रगति में बहुत बड़े बाधक हैं। वे हमारे रास्ते के रोड़े साबित हुए हैं और हमें उनसे हर हालत में छुटकारा पा लेना चाहिए।'' हिन्दू और मुसलमान दोनों समुदाय इतने कट्टर हो गए हैं कि पेड़ और पशु के नाम पर आदमी का खून बहाने में संकोच नहीं करते, ''पीपल की एक डाल टूटते ही हिन्दुओं की धार्मिक भावनाएँ चोटिल हो उठती हैं। पुतों को तोड़नेवाले मुसलमानों के ताजिये नामक कागज के पुत का कोना फटते ही अल्लाह का प्रकोप जाग उठता है और फिर वह 'नापाक' हिन्दुओं के खून से कम किसी वस्तु से संतुष्ट नहीं होता। मनुष्य को पशुओं से अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए, लेकिन यहाँ भारत में वे लोग पवित्र पशु के नाम पर एक दूसरे का सर फोड़ते हैं।''

जून, १९२८ के 'किरती' में भगतसिंह का एक लेख 'अछूत समस्या' छपा था जिसे उन्होंने 'विद्रोही' छद्मनामा से लिखा था। इस लेख को पढ़ते हुए बार-बार स्वामी विवेकानन्द के मद्रास के वे भाषण याद आते हैं जिनमें उन्होंने जात-पाँत और छुआछूत की तीखी आलोचना की थी। लेख की शुरूआत में ही उन्होंने भारत की ३० करोड़ आबादी (तत्कालीन) में ६ करोड़ 'अछूत' कहलाने वालों की नियति पर ध्यान खींचा है, ''उनके स्पर्श मात्र से धर्म भ्रष्ट हो जाएगा ! उनके मंदिरों में प्रवेश से देवगण नाराज हो उठेंगे ! कुएँ से उनके द्वारा पानी निकालने से कुँआ अपवित्र हो जाएगा ! ये सवाल बीसवीं सदी में किए जा रहे हैं जिन्हें कि सुनते ही शर्म आती है।'' उन्होंने पटना में लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में आयोजित हिंदू महासभा के सम्मेलन का संदर्भ

दिया है, जिसमें इस प्रश्न पर जोरदार बहस हुई थी कि अछूतों को यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार है कि नहीं और क्या उन्हें वेद-शास्त्रों का अध्ययन करने का अधिकार है? भगतसिंह ने लिखा है, ''बड़े-बड़े समाज सुधारक तमतमा गए, लेकिन लालाजी ने सबको सहमत कर दिया तथा यह दो बातें स्वीकृत कर हिन्दू धर्म की लाज रख ली। वरना जरा सोचो, कितनी शर्म की बात होती।'' अफसोस की बात तो यह है कि अब भी बड़े-बड़े धर्माचार्य हैं जो ऐसे प्रश्न उठाते हुए धर्म करने की कौन कहे, गर्व अनुभव करते हैं ! भगतसिंह कबीर और प्रेमचंद की शैली में व्यंग्य करते हुए लिखते हैं, ''कुत्ता हमारी गोद में बैठ सकता है। वह हमारी रसोई में निःसंग घूमता है, लेकिन इन्सान का स्पर्श हो जाए तो बस धर्म भ्रष्ट हो जाता है।''

लाला लाजपत राय

इस छूआछुत से भगवान को भी अछूता नहीं रखा गया, ''सबको प्यार करने वाले भगवान की पूजा करने के लिए मंदिर बना है, लेकिन यहाँ अछूत जा घुसे, तो वह मंदिर अपवित्र हो जाता है।'' अपने ही धर्मभाइयों को अछूत और अपवित्र कहकर हिंदू रूढ़िवादियों ने बड़ा पाप किया। मानव के भीतर की मानवीयता को समाप्त कर दिया। आत्मविश्वास एवं स्वावलम्बन की भावनाओं को समाप्त कर दिया। बहुत दमन और अन्याय किया गया। आज उस सबके प्रायश्चित का वक्त है।'' उन्होंने अछूतों को असली सर्वहारा, 'देश का मुख्य आधार और वास्तविक शक्ति' कहते हुए ललकारा, ''सोये हुए शेरो ! आओ और बगावत खड़ी कर दो।'' यहाँ यह प्रसंग भी याद करना चाहिए कि भगतसिंह ने फाँसी से पहले अपनी अंतिम इच्छा बतौर जेल के भंगी भाई (जिसे वे बेबे कहकर पुकारते थे) के हाथों की बनी रोटी बड़े चाव से खाई थी !

१२ अक्तूबर, १९२९ को पंजाब छात्र संघ, लाहौर के दूसरे अधिवेशन के लिए भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने जेल से एक पत्र भेजा था। अधिवेशन का सभापतित्व नेताजी सुभाषचंद्र बोस कर रहे थे। अधिवेशन में यह पत्र पढ़कर सुनाया गया था। इस पत्र का पहला ही वाक्य है, ''इस समय हम नौजवानों से यह नहीं कह सकते कि वे बम और पिस्तौल उठाएँ।'' उन्होंने पत्र द्वारा विद्यार्थियों का ध्यान ''इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण काम'' की ओर खींचा और कहा कि कांग्रेस के आगामी लाहौर अधिवेशन में कांग्रेस देश की आजादी के लिए जबर्दस्त लड़ाई की घोषणा करनेवाली है। राष्ट्रीय इतिहास के इन कठिन क्षणों में नौजवानों के कंधों पर बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ेगी।''

फिर इस जिम्मेदारी के बारे में पत्र में आगे कहा गया, ''नौजवानों को क्रांति का यह संदेश देश के कोने-कोने में पहुँचाना है, फैक्ट्री-कारखानों के क्षेत्रों में, गंदी बस्तियों और गाँवों की जर्जर झोपड़ियों में रहनेवाले करोड़ों लोगों में इस क्रांति की अलख जगानी है, जिससे आजादी आएगी और तब एक मनुष्य द्वारा दूसरे मनुष्य का शोषण असंभव हो जाएगा।''

भगतसिंह का चरम लक्ष्य था – मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण का अन्त। इस चरम लक्ष्य तक पहुँचने का रास्ता जनता के जनवाद से होकर जाता है। सच्चे जनवाद से समाजवाद और समाजवाद से आगे बढ़कर उपर्युक्त पूर्ण समतावाद के लक्ष्य तक पहुँचने के पहले जनता को अनगिनत संघर्षों से होकर गुजरना पड़ेगा। अभी तो आजादी और लोकतंत्र की रक्षा और सुदृढ़ीकरण पर और संविधान में स्वीकृत नागरिक स्वतंत्रता, सामाजिक न्याय, समता और पंथनिरपेक्षता के आदर्शों की रक्षा और सुदृढ़ीकरण पर विशेष ध्यान देना है। भगतसिंह के सपनों को साकार करने का भार सबसे अधिक नौजवानों के कंधों पर है, क्योंकि उन्हें सबसे अधिक आशा नौजवानों से ही थी। ○○○

जो कर्तव्य हमारे निकटतम है, जो कार्य अभी हमारे हाथों में है, उसको सुचारु रूप से सम्पन्न करने से हमारी कार्य-शक्ति बढ़ती है और इस प्रकार क्रमशः अपनी शक्ति बढ़ाते हुए हम एक ऐसी अवस्था की भी प्राप्ति कर सकते हैं, जब हमें जीवन और समाज के सबसे ईप्सित एवं प्रतिष्ठित कार्यों को करने का सौभाग्य प्राप्त हो सके।

– स्वामी विवेकानन्द

युवाओं के सनातन प्रेरक विवेकानन्द

स्वामी बलभद्रानन्द

सहायक सह-महासचिव
रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन

मैं स्वामी विवेकानन्द के विषय में चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के दो अमूल्य उद्धरणों को उद्धृत करके निबन्ध प्रारम्भ करता हूँ। भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानेवाले व्यक्ति और स्वतन्त्र भारत के एक प्रमुख राजनैतिक नेता, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी को भारत का सर्वोच्च नागरिक सम्मान 'भारत रत्न' मिला। भारत सन् १९४७ में स्वतन्त्र हुआ और १९५० में गणतन्त्र बना। लॉर्ड माउन्टबेटन अधीनस्थ भारत के अन्तिम गवर्नर जनरल थे और चक्रवर्ती राजगोपालाचारी भारत की स्वतन्त्रता के बाद १९४८ से १९५० तक स्वतन्त्र भारत के पहले और अन्तिम गवर्नर जनरल थे। बाद में वे भारत के गृहमन्त्री, पश्चिम बंगाल के पहले राज्यपाल और कई बार मद्रास के मुख्यमन्त्री भी रहे। साथ ही वे अंग्रेजी और तमिल के विख्यात लेखक भी थे। उन्हें तमिल भाषा में महाभारत लिखने के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' भी मिला।

उन्होंने श्रीरामकृष्ण और विवेकानन्द के बारे में कई मूल्यवान वक्तव्य दिए, जिनमें से यहाँ प्रसंगत: दो को उद्धृत कर रहे हैं – 'हमारे वर्तमान इतिहास को देखते हुए कह सकते हैं कि हम स्वामी विवेकानन्द के कितने बड़े ऋणी हैं। उन्होंने भारत के आत्म-गौरव की ओर भारत की दृष्टि को आकर्षित कर दिया। हम अन्धे थे, उन्होंने हमें दृष्टि दी। उनके बिना हम अपने धर्म को खो देते और कभी स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं कर सकते। भाई, हम इन सबके लिये विवेकानन्द के ऋणी हैं।'' ''वे हमारी राजनीतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक स्वतन्त्रता के जनक हैं।''[१]

राजगोपालाचारी आपादमस्तक गाँधीवादी थे। लेकिन फिर भी उन्होंने यहाँ भारत की सर्वांगीण स्वतन्त्रता के जनक गाँधीजी को नहीं, अपितु स्वामी विवेकानन्द को कहा। ऐसा इसलिए है क्योंकि भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के सभी प्रमुख व्यक्ति – महात्मा गाँधी, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस आदि स्वामी विवेकानन्द के आदर्शों से अत्यन्त गहन रूप से प्रेरित थे। यह स्वामी विवेकानन्द ही थे, जिन्होंने उन्हें भारत को ठीक से जानने, उससे प्रेम करने और भारत की स्वतन्त्रता के लिए अनन्त बलिदान और कष्ट सहने की प्रेरणा और शक्ति दी थी। गाँधीजी ने कहा था – स्वामीजी के लेखन को पढ़ने के बाद, उनकी देशभक्ति एक हजार गुना अधिक बढ़ गई। जब नेताजी सुभाष चन्द्र बोस १५ वर्ष के थे, तब वे एक परिचित के घर गए और अचानक उन्हें स्वामीजी के विदेश से भारत लौटने पर कोलम्बो से अलमोड़ा तक प्रदत्त व्याख्यान 'भारतीय व्याख्यान' नामक पुस्तक मिली। उन भाषणों के एक-दो पन्नों को ही पढ़कर भावी नेताजी सुभाषचन्द्र को उनके पूरे जीवन का आदर्श मिल गया। यह प्रसंग उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखी है। श्रीरामकृष्ण की शताब्दी समारोह के अवसर पर एक अमर पत्र में उन्होंने उद्बोधन पत्रिका के सम्पादक को लिखा – ''मैं शब्दों में कैसे व्यक्त कर सकता हूँ कि मैं श्रीरामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द का कितना ऋणी हूँ? उनलोगों के पुण्य प्रभाव से मेरे जीवन का उत्कर्ष हुआ। निवेदिता के जैसे मुझे भी लगता है कि श्रीरामकृष्ण और विवेकानन्द एक अभिन्न व्यक्तित्व के दो पृथक रूप हैं। यदि स्वामीजी आज सशरीर होते, तो वे मेरे गुरु होते, अर्थात् मैं उन्हें गुरु के रूप में अवश्य स्वीकार करता। वैसे भी, जब तक मैं जीवित हूँ, तब तक मैं रामकृष्ण-विवेकानन्द के प्रति कर्त्तव्यपरायण और समर्पित रहूँगा।''[२] उन्होंने एक निबन्ध में लिखा : ''मैं रामकृष्ण-विवेकानन्द साहित्य की तुलना में चरित्र-निर्माण के लिए इससे बेहतर साहित्य की कल्पना नहीं कर सकता।'' क्रान्तिकारी हेमचन्द्र घोष को उन्होंने एक बार कहा : ''विवेकानन्द को पढ़कर मैं भारतवर्ष को प्रेम करता हूँ और विवेकानन्द को मैं निवेदिता के लेखन से पहचानता हूँ।''[३]

न केवल प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानियों ने, बल्कि सभी स्वतन्त्रता संग्रामी नर-नारियों ने उस समय विवेकानन्द के

जीवन और कार्य से प्रेरित होकर स्वयं भारत पर गर्व अनुभव करना सीखा। यह स्वामी विवेकानन्द ही थे, जिन्होंने हममें स्वाभिमान की भावना उत्पन्न की। हमारा देश महान है, हम इस महान देश के वासी हैं, केवल डेढ़ सदी अंग्रेजों के अधीन थे, इससे हमारी कई हजार वर्षों की महान सभ्यता को मिथ्या नहीं कहा जा सकता, यह स्वाभिमान, यह गौरव-बोध स्वामी विवेकानन्द ने ही जगाया था और उन्होंने मुख्य रूप से पाश्चात्य जगत में अपना असाधारण प्रभाव विस्तार करके ऐसा किया था।

१८९३ में ११ सितम्बर से २७ सितम्बर संसार का पहला विश्व धर्म-सम्मेलन शिकागो, अमेरिका में आयोजित किया गया था। इस सम्मेलन में लगभग एक सौ सत्तर प्रतिनिधियों ने वक्ताओं के रूप में भाग लिया।[४] लेकिन वह व्यक्ति जो धर्म महासभा के सबसे प्रभावशाली उज्ज्वल व्यक्तित्व के रूप में खड़ा था, वह स्वामी विवेकानन्द ही थे।

बाकी सबने अपने धर्म की श्रेष्ठता के बारे में बात की। किन्तु स्वामीजी के भाषण में दो मुख्य विशेषताएँ सामने आईं – एक जिस हिन्दू धर्म का वे प्रतिनिधि होकर गये थे, उस हिन्दू धर्म की महिमा और महत्त्व। दूसरा प्रत्येक धर्म मनुष्य को एक ही ईश्वर की ओर ले जाता है और इसलिये प्रत्येक धर्म समान रूप से सत्य है। जब उन्होंने इस उदारवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया, तब उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि सभी धर्मों को सत्य मानने का यह आदर्श हिन्दू धर्म की ही प्राचीन परम्परा है। हिन्दू धर्म न केवल सभी धर्मों के प्रति सहनशील है, बल्कि सभी धर्मों को सत्य भी मानता है। उनके संदेश का सार यह है कि हिन्दू बेहतर हिन्दू हों, मुसलमान बेहतर मुसलमान हों, ईसाई भी बेहतर ईसाई हों। किसी को अपना धर्म नहीं छोड़ना चाहिए, किसी को भी अपने धर्म को छोटा नहीं समझना चाहिए। इसके साथ ही किसी और को भी दूसरे के धर्म को छोटा नहीं समझना चाहिए। अपने धर्म के प्रति निष्ठा और दूसरे धर्मों के प्रति सम्मान, धर्म-महासभा के पहले दिन से लेकर अन्तिम दिन तक स्वामीजी का यही मुख्य संदेश था। अमेरिका के एक प्रसिद्ध समाचार पत्र (बोस्टन इवनिंग ट्रांसक्रिप्ट, ३० सितम्बर, १८९३) ने उनके भाषण के बारे में लिखा था – 'धर्म महासभा में विवेकानन्द का भाषण आकाश की तरह उदार था, सभी धर्मों में सर्वश्रेष्ठ को गले लगाया था, जो वास्तविक सार्वभौमिक धर्म का लक्षण है।'' उनके उदार और गहन विचारों ने दर्शकों को प्रेरित किया। वह धर्म महासभा के सबसे लोकप्रिय व्यक्ति बन गये। जैसे ही वह मंच पर गए, भीड़ जयकारों से गूँज उठी। शिकागो की सड़कों पर उनका चित्र लगा दिया गया। यदि हम वेबसाइट www.parliamentofreligions.org पर जाते हैं, (वह वेबसाइट जिसे स्वामीजी के शिकागो व्याख्यान की शताब्दी मनाने के लिए लगभग १९९० में बनाया गया था) तो पाते हैं कि धर्म महासभा के सभी वक्ताओं में केवल स्वामीजी के नाम का ही उल्लेख किया गया है और कहा गया है –

"A Captivating Hindu monk, Swami Vivekananda, addressed 5,000 assembled delegates, greeting them with the words, "Sisters and brothers of America ! His declaration introduced Hinduism to America".

शिकागो धर्म-महासभा में जब स्वामीजी की गौरवमयी पराक्रम की कहानी भारत पहुँची, तो उसका प्रभाव विद्युत् के समान हुआ। जो भारतीय ब्रिटिश शिक्षा के प्रभाव में अपने आप को हीन और गोरी चमड़ीवाले लोगों को हर चीज में श्रेष्ठ मानने के अभ्यस्त हो गए थे, उन्होंने अचानक देखा कि उस गोरी चमड़ीवाले देश के लोगों ने हमारे देश के एक साधु को अपने सिर का मुकुट बना लिया है। पराधीन भारतीयों को पहली बार यह अनुभव होने लगा कि वे उतने महत्त्वहीन नहीं हैं, जितना कि अंग्रेजों ने उन्हें स्वयं के बारे में सोचना सिखाया था। भारत के लिये स्वामीजी का सबसे बड़ा योगदान देश भर में इस स्वाभिमान की भावना को जगाना था। इस स्वाभिमान की भावना के उदय के साथ, भारत का पुनर्जागरण प्रारम्भ हुआ। इसलिए चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा – उन्होंने भारत के स्वाभिमान के लिये भारत की आँखें खोलीं, हम अंधे थे, उन्होंने हमें दृष्टि दी। उनकी कृपा से भारतीयों ने अपने घर की सम्पत्ति का सम्मान करना सीखा। शिकागो धर्म महासभा के लगभग एक साल बाद कलकत्ता से प्रकाशित अमृतबाजार पत्रिका के एक अंक में स्वामीजी के बारे में की गई टिप्पणी बिलकुल सही है –

"He has done more to elevate our nation in the estimation of the West than what has hitherto been done by all our political leaders put together."[५]

पाश्चात्य की दृष्टि में भारत की अस्मिता, मर्यादा को उज्ज्वल करने में हमारे राजनैतिक नेताओं ने सामूहिक रूप से प्रयास करके भी जो नहीं किया, उससे अधिक अकेले

स्वामी विवेकानन्द ने किया है।

स्वामी विवेकानन्द के जीवन और उपदेशों की उत्कृष्ट व्याख्याता भगिनी निवेदिता कहती हैं कि विवेकानन्द का आविर्भाव भारत और सम्पूर्ण विश्व के लिए हुआ था, जिस विवेकानन्द की विश्व को आवश्यकता थी, वही विवेकानन्द इन तीन स्रोतों से शिक्षा ग्रहण कर बने थे – भारत का सनातन शास्त्र, उनके गुरु श्रीरामकृष्ण और भारतवर्ष। उन्होंने वेद-उपनिषद-गीता जैसे शास्त्रों को पढ़कर समझ लिया था कि शाश्वत सत्य क्या है? इस शाश्वत सत्य को हम भक्तों की भाषा में भगवान और वेद-उपनिषद की भाषा में ब्रह्म कहते हैं। किन्तु उन्होंने शाश्वत सत्य को समझा कि यह न केवल अतीत की सभ्यता के सत्य हैं, अपितु इस युग में भी जीवन में इस सत्य को अनुभव किया जा सकता है, इसे उन्होंने अपने गुरु श्रीरामकृष्ण के जीवन को देखकर समझा। श्रीरामकृष्ण के जीवन में उन्होंने सकल शास्त्र को जीवन्त पाया था। फिर अपने गुरु की महासमाधि के बाद, उन्होंने १८८६ से १८९३ तक सात वर्षों के लिए एक परिव्राजक तीर्थयात्री के रूप में भारत का भ्रमण किया। इस परिक्रमा के दौरान उन्होंने समझा कि हमारे सनातन शास्त्र में जो आध्यात्मिक सत्य है, वही आध्यात्मिक सत्य जो उनके गुरु श्रीरामकृष्ण के जीवन में सन्निहित है, उसी आध्यात्मिक सत्य को समग्र रूप से भारत के लोग अपने जीवन में युगों से धारण करते आ रहे हैं। विवेकानन्द ने गुरु श्रीरामकृष्ण में ही भारत के शाश्वत शास्त्रों और भारत; दोनों का अनुसन्धान किया था। जब यह अनुसन्धान पूर्ण हुआ, तो विवेकानन्द की विश्व-रंगमंच पर प्रस्तुत होने की तैयारी भी पूरी हो गई थी। इस प्रस्तुति के अन्त में विवेकानन्द ही श्रीरामकृष्ण, भारत के सनातन शास्त्र और भारत के संयुक्त रूप हो उठे। उसके बाद उन्होंने पाश्चात्य की यात्रा की और विश्वपटल पर आविर्भूत हुए, क्योंकि श्रीरामकृष्ण और विवेकानन्द का अवतरण केवल भारत के लिए ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व के लिए हुआ। निवेदिता कहती हैं – स्वामी विवेकानन्द-रूपी विश्व को रोशन करनेवाली महान मशाल, उनमें हमेशा जलती रहती थी, जिसकी तीन ज्वालाएँ हैं – शास्त्र, गुरु और मातृभूमि। आन्तरिक रूप से इन तीन तत्त्वों से विवेकानन्द ने नित्य वह महान औषधि प्रस्तुत किया है, जिसे निवेदिता के शब्दों में *World's heal-all* पृथ्वी के सभी लोगों की सभी मानसिक विकारों को दूर करने के लिये महान औषधि है। अर्थात् विवेकानन्द के उपदेशों में संसार की सभी समस्याओं का समाधान समाहित है, ऐसा निवेदिता का मत है।

वास्तव में संसार की प्रत्येक समस्या, चाहे वह व्यक्तिगत स्तर पर हो या सामूहिक स्तर पर हो, उसकी जड़ें व्यक्ति के भीतर हैं। मानवता सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु है। बुरे लोग अपने और दूसरों के लिए समस्याएँ पैदा करते हैं, वहीं अच्छे लोग अपने और दूसरों के लिए शान्ति के निमित्त बनते हैं। स्वामीजी की प्रत्येक वाणी का उद्देश्य मनुष्य को मानवीय गुणों के सन्दर्भ में एक बेहतर मनुष्य के रूप में परिवर्तित करना है। स्वामीजी ने किसी सिद्धान्त या वाद की बात नहीं की। उन्होंने मनुष्य-निर्माण के बारे में कहा। वे कहते थे, मनुष्य-निर्माण ही मेरा उद्देश्य है। उनका अनुसरण करते हुए सुभाषचन्द्र बोस ने भी बार-बार युवाओं के प्रति आपने भाषणों में कहा है – हम किसी भी वाद में विश्वास नहीं करते हैं, हमारे लिये स्वामीजी के शब्द 'मनुष्य-निर्माण ही मेरा उद्देश्य है' ही आदर्श है। दोनों ऐसा इसलिए कहते हैं, क्योंकि कोई भी सिद्धान्त मनुष्य द्वारा ही व्यवहार में लाया जाता है। यदि मनुष्य सही नहीं है, तो कोई भी सिद्धान्त, प्रकल्प या योजना, चाहे वह कागज पर कितनी ही अच्छी क्यों न हो, मनुष्य का कोई विशेष कल्याण नहीं कर सकती।

सच्चा मनुष्य कौन है? स्वामीजी कहा करते थे – जिसके पास ये तीन गुण हैं, वही सच्चा मनुष्य है। जिस व्यक्ति के पास अनुभव करने के लिए हृदय है, सोचने के लिए मस्तिष्क है और कार्य करने की शक्ति है, वही सच्चा मानव है। लोगों को चाहिए कि पहले दूसरों के दुखों और समस्याओं को अपने हृदय से अनुभव करें, फिर उन दुखों या समस्याओं का समाधान अपने मस्तिष्क से, बुद्धि से खोजें। फिर उसका वास्तविक रूप से जीवन में क्रियान्वयन करें। तभी वे सच्चे मनुष्य में परिगणित हो सकेंगे। स्वामीजी ने इन तीनों गुणों में हृदय को, प्रेम को सबसे अधिक महत्त्व दिया है। युवाओं को बार-बार उन्होंने इन शब्दों से सम्बोधित किया है – ''हे वीरहृदय युवाओ ! अन्य कुछ आवश्यक नहीं, केवल प्रेम, सरलता और सहिष्णुता आवश्यक है। जीवन का अर्थ विस्तार है, विस्तार और प्रेम एक ही वस्तु है। केवल प्रेम ही जीवन है, प्रेम ही जीवन का गति-नियन्त्रक है। स्वार्थ ही मृत्यु है, जीवित रहना भी मृत्यु है और देहावसान भी उस स्वार्थपरता की ही प्रकृत मृत्यु है। परोपकार ही जीवन है, परहित का अभाव ही मृत्यु है। नब्बे प्रतिशत नर-पशुरूपी व्यक्ति मरे

हुए हैं, प्रेत तुल्य हैं। क्योंकि हे युवकवृन्द ! जिसके हृदय में प्रेम नहीं, वह मरा हुआ नहीं तो और क्या है?... रुपये से कुछ भी नहीं होता, नाम से भी कुछ भी नहीं, यश से भी कुछ कभी नहीं, विद्या से भी कुछ भी नहीं होता, प्रेम ही सब कुछ है, केवल चरित्र ही बाधाओं की दीवारों को तोड़ सकता है।''

स्वामीजी के इस प्रकार के शब्दों ने ही पराधीन भारत के युवाओं को देश और देश के कल्याण के लिए विभिन्न साहसिक कार्य करने के लिए प्रेरित किया। यह बात स्वयं रवीन्द्रनाथ ने कही है। उन्होंने कहा – ''आधुनिक भारत में विवेकानन्द ने एक महान संदेश का प्रचार किया, जो कर्मकाण्ड नहीं है।'' यानी विवेकानन्द के महत्त्वपूर्ण शब्द किसी संकीर्ण प्रथा तक सीमित नहीं हैं। वह कौन-सा महत्त्वपूर्ण संदेश है, जिसने उन्हें प्रभावित किया? रवीन्द्रनाथ फिर वही बात कहते हैं – ''उन्होंने देश के सभी लोगों का आह्वान करते हुये कहा था, ब्रह्म की शक्ति आप सभी में है, दरिद्रों में है और भगवान उसी रूप में आपकी सेवा चाहते हैं।'' विवेकानन्द के शब्दों ने ''युवाओं के चित्त में समग्र भाव को जगाया है'', ''उनकी आत्मा का आह्वान किया है, उनकी उंगलियों को नहीं'', उनकी वाणी ने लोगों को एक ही समय में 'सम्मान' और 'शक्ति' दी है और ''एक विलक्षण रूप से मन-प्राण को प्राणवान कर दिया।'' इन सब के आधार पर रवीन्द्रनाथ ने निश्चित निष्कर्ष दिया – आज युवाओं में हम जो साहस और दृढ़ता पाते हैं, उसके मूल में विवेकानन्द की वाणी है।

रवीन्द्रनाथ का उपरोक्त उद्धरण बहुत महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि वे इन दोनों विचारों को विवेकानन्द के सभी कथनों के सारांश के रूप में प्रस्तुत करते हैं। प्रत्येक मनुष्य ब्रह्म या देवता है और मनुष्य की सेवा, विशेष रूप से गरीब और आभावग्रस्तों की सेवा करना ही ईश्वर की सेवा और पूजा है। रवीन्द्रनाथ बिल्कुल सही हैं। मनुष्य की अन्तर्निहित दैवी स्वरूप की घोषणा और सेवा के माध्यम से स्वयं और दूसरों की दैवी प्रकृति का जागरण, ये दोनों स्वामीजी के सभी विचारों की मूल बात है।

स्वामीजी ने स्वयं निवेदिता को लिखे एक पत्र में कहा है कि जीवन में उनका उद्देश्य है कि प्रत्येक व्यक्ति को जाकर यह बताएँ कि वह स्वरूपत: भगवान है और यह दिखाना है कि जीवन के प्रत्येक पग पर अपने भीतर सोए हुए भगवान को कैसे जगाया जाए। धार्मिक लोगों द्वारा की जानेवाली जप-ध्यान-तीर्थ-तपस्या का एकमात्र उद्देश्य सुषुप्त भगवान को जाग्रत भगवान में परिणत करना है। एक अपराधी भी स्वरूपत: देवता है, लेकिन उसमें वह देवत्व गहरी निद्रा में है। श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द जैसे लोग केवल स्वरूपत: देवता ही नहीं है, उनके भीतर में देवत्व पूर्ण रूपेण जाग्रत है। तभी तो वे संसार के लिए प्रणम्य हैं।

वास्तव में, न केवल हमारी हर धार्मिक प्रथा, बल्कि हम जो भी विचार या कार्य करते हैं, वह या तो हमारे भीतर के देवत्व को थोड़ा जगा रहा है या उसे थोड़ा और सोने के लिए विवश कर रहा है। यह हमारा कर्तव्य है कि हर दिन हर पल, पूरे सचेतन हो अपने भीतर उस सोए भगवान को थोड़ा और जगाने का प्रयास करें। स्वामीजी के अनुसार, इस युग में अपने भीतर सोए हुए देवता को जगाने का सबसे अच्छा उपाय है कि हम दूसरों को भी देवता के रूप में प्रेम करें और उनकी सेवा करें। यदि आप मनुष्य की मनुष्य के रूप में सेवा करते हैं, तब आपके भीतर सोए हुए भगवान जाग जाएँगे। किन्तु यदि हम उसे भगवान समझ कर सेवा, प्रेम करें, तो भीतर के सुषुप्त भगवान बहुत शीघ्र ही जाग उठेंगे।

अन्त में स्वामीजी के शब्द कैसे आज भी लोगों को प्रेरित और सशक्त कर रहे हैं, इसके बारे में दो व्यक्तिगत अनुभव मैं यहाँ प्रस्तुत करना चाहता हूँ। मैं तब रामकृष्ण मिशन इंस्टिट्यूट ऑफ कल्चर, कोलकाता में प्रकाशन विभाग का प्रभारी था। एक दिन मुझे कश्मीर के सपोर जिले के एक मुस्लिम प्रोफेसर द्वारा अंग्रेजी में लिखित एक पत्र मिला। उन्होंने जो अपना परिचय दिया था, उससे पता चलता है कि वे सात बॉयज कॉलेज और चार गर्ल्स कॉलेज के संस्थापक हैं। अपना परिचय देने के बाद उन्होंने लिखा – Personally I am a great admirer of Swami Vivekananda Ji. After reading the book" My India, the India Eternal (a compilation from Swami Vivekananda's complete works, published by RMIC) I awoke form a dogmatic slumber, and after that, I have been recommending this book to whosoever I come across. And my feedback is this that their lives are also totally revolutionised.

तब उन्होंने लिखा : ''इसलिए मुझे लगता है कि मेरी संस्था के प्रत्येक पुस्तकालय में इस महान व्यक्ति की स्वयं और उन पर लिखी गई प्रत्येक पुस्तक की एक प्रति होनी

चाहिए। कृपया मुझे बताएँ कि आपके पास कौन-कौन सी पुस्तकें हैं?'' हमारी संस्था के तत्कालीन सचिव श्रद्धेय स्वामी लोकेश्वरानन्द जी महाराज थे। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द की प्रत्येक पुस्तकों की एक प्रति प्रोफेसर के पते पर उपहार स्वरूप भेजी। वे बहुत प्रसन्न हुये और उन्होंने उत्तर दिया – ''यदि आपके रामकृष्ण मिशन का कोई केन्द्र कभी भी इस कश्मीर घाटी में होता है तो आप मुझसे सम्पर्क करें। आप मेरे निजी अतिथि के रूप में रहेंगे।''

एक दूसरा पत्र मुझे पश्चिम बंगाल के दक्षिणी छोर के सुन्दरवन क्षेत्र के एक गरीब छात्र का मिला। एक पोस्टकार्ड में छात्र ने लिखा – ''मैं सातवीं कक्षा में पढ़ता हूँ। मेरे माता-पिता दूसरे लोगों के खेत में मजदूरी करते हैं। वे मेरी शिक्षा का खर्च नहीं उठा सकते। मैं भी कड़ी मेहनत करके पढ़ता हूँ। लेकिन मैं इन सभी कठिनाइयों और संघर्षों के बीच जी रहा हूँ, उसके मूल में स्वामी विवेकानन्द हैं। मुझे आपके मिशन द्वारा प्रकाशित 'सबार स्वामीजी' (हिन्दी में 'सबके स्वामीजी') पुस्तक किसी से मिली है। इस किताब को पढ़कर मेरा जीवन ही बदल गया है। मेरे माता-पिता पढ़ नहीं सकते। मैंने उन्हें यह पुस्तक पढ़कर सुनाया। उनका जीवन भी अब बहुत बदल चुका है। हमारे दुख के संसार में अब बहुत खुशी है। स्वामीजी के बिना हमारे पास जीवित रहने का कोई मार्ग नहीं है। इसलिये कृपा कर स्वामीजी की कुछ और पुस्तकें भेज दें, तो यह गरीब परिवार उसी के सहारे जी सके।।''

अपने देह-त्याग के दो या तीन साल पहले, स्वामीजी ने एक पश्चिमी शिष्य से कहा : It may be that I shall find it goood to get outside my body-to cast it off like a worn-out garment. But I shall not cease to work ! I shall inspire men everywhere until the world shall know that it is one with God.[६] एक दिन ऐसा हो सकता है कि मैं अपने शरीर को जीर्ण-शीर्ण वस्त्र के समान त्याग दूँ। लेकिन मैं काम करना बंद नहीं करूँगा! मैं प्रत्येक व्यक्ति को तब तक प्रेरित करता रहूँगा, जब तक संसार यह नहीं जान लेता कि वह ईश्वर के साथ एक है !'' अर्थात् जब तक सारी पृथ्वी अपनी आन्तरिक दिव्यता को पूरी तरह से नहीं जगा पाती, तब तक स्वामीजी कार्य करते रहेंगे।

श्रीरामकृष्ण इन्हीं गुणों के कारण विशेष रूप से स्वामी विवेकानन्द से प्रेम करते थे, उनमें सबसे मुख्य था उनकी सत्यनिष्ठा। अत: स्वामीजी का यह वचन अवश्य ही सत्य होगा। स्वामी विवेकानन्द निरन्तर प्रेरणा के रूप में सदैव हम सभी के समीप हैं। हम उनसे प्रेरणा लें कि हमारे भीतर सोए हर देवत्व को हम पूरी तरह से जाग्रत कर सक्रिय देवता के रूप में परिवर्तित कर सकें। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ : 1. ("Swami Vivekananda Centenary Memorial Volume" 1963.pXIII & "Sandipan, Vivekananda Centenary Memorial, "1963, p.111, published by Ramakrishna Mission Shikshanamandira, Belur Math) २. (मेरा भारत अमर भारत, मनीषियों की दृष्टि में विवेकानन्द अध्याय से) **३.** (चिन्तानायक विवेकानन्द, पृष्ठ ९३९) **४.** (स्वामी विवेकानन्द : ए हंड्रेड इयर्स सिंस शिकागो, पृष्ठ १३१, प्रबुद्धप्राणा का लेख) **५.** (अमृत बाजार पत्रिका, १ सितम्बर, १९८४) **6.** (Life, vol. 2, p.661, Advaita Ashrama)

मैंने जापान में सुना कि वहाँ की बालिकाओं का विश्वास है कि यदि उनकी गुड़ियों को हृदय से प्रेम किया जाए, तो वे जीवित हो उठेंगी। जापानी बालिका अपनी गुड़िया को कभी नहीं तोड़ती।... मेरा भी विश्वास है कि यदि हतश्री, अभागे, निर्बुद्धि, पददलित, चिर-बुभुक्षित, झगड़ालू और ईर्ष्यालु भारतवासियों को भी कोई हृदय से प्रेम करने लगे, तो भारत पुनः जाग्रत हो जाएगा।

अपने पैरों पर तुम खड़े हो जाओ, देर न करो, क्योंकि जीवन क्षणस्थायी है।... अपनी जाति, देश, राष्ट्र और समग्र मानव समाज के कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग करना सीखो।

– स्वामी विवेकानन्द

बाल-मन के स्वप्न व जेनरेशन गैप

स्नेह सिंघानिया
शोधार्थी, प्रबन्ध-शास्त्र विभाग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, मद्रास

न कोयल की कुहू, न सूर्य की अन्तिम किरणें। सुकून भरी नींद के टूटने का कारण और कुछ नहीं पर अलार्म क्लॉक की जोरदार अप्रिय आवाज थी। वह उत्साह भरी सुबह को मायूसी में बदल देनेवाली कर्कश ध्वनि के समान थी। सुबह उठकर केवल समय पर स्कूल पहुँचने का ख्याल एक डर के समान मंडराता। काश ! दो वक्त अपने आप के लिए भी मिल पाते ! भागते-दौड़ते अर्द्ध निद्रा में ही किसी तरह बस को पकड़ना, बस्ते के बोझ को बड़ी मुश्किल से सँभाल पाना और उस बोझ तले अपने बचपन का ही दब जाना।

बच्चों के स्वप्न

स्कूल पहुँचकर जब वह अन्तिम सीट पर बैठता है, वह अपने आप को कक्षा से कहीं दूर अपने संसार में पाता है। उस बालक को अपने सहपाठियों में कम और खिड़कियों के बाहर झांकने में अधिक रुचि थी। खिड़कियों के बाहर वह उन बच्चों को देखा करता था, जो निश्चिन्त हो बारिश में खेला करते थे और वह उनमें ही अपना खोया हुआ बचपन देख पाता। ठीक उसी क्षण उसके मन की अतृप्त आकांक्षाओं को उसके क्लास टीचर ने उस पर दृष्टि डालते ही मानो राहु की भाँति ग्रहण लगा दिया हो। टीचर ने उस बालक को जोरदार फटकार लगाते हुए कहा कि बाहर देखने से उसे परीक्षा में अंक नहीं मिलेंगे और उसका जीवन भी उन बालकों की तरह ही सड़क छाप बनकर रह जाएगा। पर बालक के कानों पर जूँ तक न रेंगी। वह अभी तक अपने ख्यालों में ही डूबा हुआ था। उसे टीचर की डाँट बिलकुल भी न भायी और वह उन्हें अपने अन्तर्मन से नापसंद करने लगा।

जब आठ घंटे बाद स्कूल से थककर वह घर आकर बिस्तर पर लेटता है, तो वही सपना दोहराता है। वह बालक एम.एस. धोनी बनना चाहता है, परन्तु उसके सपनों को साकार करने का कहीं से भी अनुमोदन नहीं मिलता। मिले भी तो कैसे ! जीवन की सच्चाई तो उस बालक से परे है। जो उसके शुभचिन्तक हैं, वे जानते हैं कि उस सपने को सच बनाना, मानो सागर से मीठे पानी निकालने के बराबर है। यह बालक का मासूम भोलापन और संसार की कड़वी सच्चाई के मध्य का संघर्ष उस बालक की बालोचित समझ से परे है।

मोबाइल की व्यस्तता में अध्ययन को न भूलें

इन सबसे ध्यान हटा, तो मोबाइल फोन पर जा के अटका। वह बालक फोन पर ही क्रिकेट खेलकर अपने मन को बहलाने की कोशिश करने लगा। खेलने में इतना डूब गया कि उसे समय का ज्ञान भी नहीं रहा, मानो सारे

संसार की समग्र एकाग्रता उसने उस आभासी खेल में ही लगा दी हो। रात होते ही माँ ने होमवर्क करने के लिए फटकार लगाई। तब जाकर कहीं उसे अनुभव हुआ कि अब तो उसके पास बाकी के काम-काज के लिए समय ही नहीं बचा है। अन्त में वह मायूस हो अपनी माता से समय के अभाव की शिकायत करते हुए रुआँसा-सा अपना गृहकार्य करने चला गया।

अभिभावक बच्चों को मोबाइल पर यथोचित नियन्त्रण करें और समय का महत्त्व समझाएँ

सही समय प्रबंधन न होने से बच्चे क्या, बड़े-बड़े

शेष भाग पृष्ठ ६१ पर

चारित्र्य का बल

स्वामी आत्मानन्द

अंग्रेजी में एक कहावत है – "If wealth is lost, nothing is lost. If health is lost, something is lost. If character is lost, everythings is lost."

अर्थात् 'यदि धन नष्ट होता है, तो कुछ भी नष्ट नहीं होता। यदि स्वास्थ्य नष्ट होता है, तो कुछ अवश्य नष्ट होता है। पर यदि चरित्र नष्ट होता है, तो सब कुछ नष्ट हो जाता है।'' यह चारित्र्य व्यक्ति का प्राण है, जिसके न रहने से वह चलते-फिरते मुर्दे के ही समान है। चारित्र्य वह गुण है, जो जीवन को सुषमा प्रदान करता है, वह दीप्ति है, जो अन्धकार के क्षणों में व्यक्ति को पथ दिखाता है, वह चट्टान है, जो प्रलोभनों के झंझावात को झेल लेता है, वह निष्कर्ष है, जो व्यक्ति का मूल्यांकन करता है। व्यक्ति की महानता उसके चरित्र पर निर्भर करती है। कुर्सी किसी व्यक्ति को महान् नहीं बनाती। सत्ता से प्राप्त महत्ता क्षणिक होती है, वह सत्ता से अलग होते ही नष्ट हो जाती है। पर चरित्र से प्राप्त महत्ता शाश्वत होती है, वज्राघात भी उसका नाश नहीं कर सकता।

चारित्र्य तीन स्तम्भों पर खड़ा होता है – पहला कर्मठता, दूसरा निर्भीकता, व तीसरा नि:स्वार्थता। चरित्रवान व्यक्ति में आलस्य का अभाव होता है, वह उद्यमशील होता है, कोई भी कार्य उसके लिए असम्भव नहीं होता। उसमें भय का सर्वथा अभाव होता है। वह अन्याय के सामने नहीं झुकता। उसमें इतना साहस भरा होता है कि न्याय और सत्य की रक्षा के लिये वह जोखिम उठाने से नहीं कतराता। उसमें दूसरों के लिए जीने की प्रवृत्ति होती है। वह मानता है कि अपने लिए तो पशु भी जीते हैं, मानव-जीवन की सार्थकता वह इसमें देखता है कि वह दूसरों के काम आए।

यहाँ पर प्रश्न किया जा सकता है कि यदि मनुष्य केवल दूसरों के लिये जिये, तो अपने परिवार की देखभाल कैसे करेगा? इसका उत्तर यह है कि जो व्यक्ति पूरी तौर से दूसरों के लिए जी रहा है, उसे अपने परिवार को देखने की चिन्ता नहीं करनी पड़ती, उसकी व्यवस्था अपने आप हो जाती है। यह कर्म का अटल सिद्धान्त है। हाँ, जो अभी पूरी तरह से दूसरों के लिए अपना जीवन नहीं दे सकता, वह कुछ समय दूसरों के लिए निकाले। वही उसके चरित्र में निखार पैदा करेगा। चरित्र को निखारने वाला तत्त्व नि:स्वार्थता ही है। यदि व्यक्ति कर्मठ और निर्भीक हो, पर अपने स्वार्थ में डूबा हो, तो ऐसा व्यक्ति भले ही अपने और अपने परिवार के लिए उपयोगी हो, पर वह दूसरों के लिए उपयोगी नहीं हो पाता। जब चरित्र नि:स्वार्थता की कसौटी पर कसा जाता है, तब उसमें निखार उत्पन्न होता है। ऐसा ही व्यक्ति समाज और देश के काम आता है।

चरित्र को रीढ़ की हड्डी कहा गया है। यदि रीढ़ की हड्डी दुर्बल हो या खराब हो, तो मनुष्य अपंग हो जाता है। उसी प्रकार चरित्र के बिना व्यक्तित्व भी अपंग या खोखला हो जाता है।

जिस देश में चरित्रवान व्यक्तियों की संख्या जितनी अधिक होगी, वह देश जीवन के सभी क्षेत्रों में उतना ही समृद्ध होगा।

मन्दिर में जाना, पूजा-पाठ आदि करना चरित्र की कसौटी नहीं है। ये चारित्र्य को प्रकट करने का साधन बन सकती हैं, यदि इन क्रियाओं के पीछे हमारा दिखावे या स्वार्थपूर्ति का मनोभाव न हो। खेद की बात तो यह है कि अधिकांशत: हमारी धार्मिक क्रियाएँ भी हमारे स्वार्थ-साधन का ही अंग होती हैं और इसलिए वे हमारे चरित्र के प्राकट्य में साधक होने के बदले बाधक बन जाती हैं। ○○○

पहले हमें गुरुगृह-वास और वैसी ही अन्य शिक्षा-प्रणालियों को पुनर्जीवित करना होगा। आज हमें आवश्यकता है – वेदान्तयुक्त पाश्चात्य विज्ञान की, ब्रह्मचर्य के आदर्श और श्रद्धा तथा आत्मविकास की।

खूब परिश्रम करते रहो। पवित्र और शुद्ध बनो – उत्साहाग्नि स्वयं ही प्रज्वलित हो उठेगी।

कहो मैं सब कुछ कर सकता हूँ। नहीं, नहीं कहने से तो साँप का विष भी निष्प्रभ हो जाता है।

– स्वामी विवेकानन्द

रामराज्य का स्वरूप (७/५)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार थे। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्‌घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज थे। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में १९८९ में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन स्वर्गीय श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द जी ने किया है। – सं.)

दूसरी ओर माँ और बालक का एक सत्य है। छोटे बच्चे शुद्ध उच्चारण नहीं कर पाते। नन्हा बालक माँ से अगर रोटी को टोटी कहकर माँगे, तो माँ क्या करेगी? क्या यह कहेगी कि तू तो ठीक उच्चारण भी नहीं करता, यह टोटी क्या है, मेरे पास टोटी नहीं है, मैं नहीं जानती टोटी क्या होती है। लेकिन माँ ऐसा नहीं करती। माँ तो समझ लेगी कि बालक अशुद्ध उच्चारण भले ही कर रहा हो, पर उसे भूख लगी है और वह रोटी माँग रहा है। भाषा भले ही अशुद्ध हो, पर उसके पीछे जो भावना है, माँ उसे पूरा करती है। अब ऐसी स्थिति में दोनों बातें अपने स्थान पर बिल्कुल ठीक हैं। अगर शब्द शुद्धि पर ध्यान न दिया जाय, तो सारा व्याकरण सारा साहित्य निरर्थक हो जाएगा, उसकी कोई सार्थकता नहीं रह जायेगी और यदि केवल शब्द ही शब्द रह जाय, तो सृष्टि में वात्सल्य आदि रस का, सारी भावना का रस ही समाप्त हो जायेगा। इसलिए ये दो पक्ष हैं – धर्म का जो वैदिक परम्परा का पक्ष है, वह शब्द-प्रधान पक्ष है। गुरु वशिष्ठ का अभिप्राय यह है कि जो मुँह से निकला, वह सत्य है। महाराज श्रीदशरथ ने कैकेयी को जो वचन दिया, वह शब्द है और शब्द का अक्षरश: निर्वाह होना चाहिए। जैसाकि उन्होंने कहा था कि मैं दो वरदान दूँगा और उनसे दो वरदान माँगा गया। उन्होंने इस शब्द को सत्य मानकर स्वीकार किया और उसका अक्षरश: निर्वाह किया। उन्होंने जो वचन दिया, उस शब्द के सत्य की रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य है, तुम भी उस शब्द का ठीक से शब्दश: पालन करो।

श्रीभरत इस पक्ष को स्वीकार नहीं करते। बस यह अन्तर आप समझ लें। श्रीभरत भक्त शिरोमणि हैं और उन्होंने मानो इस पक्ष को प्रस्तुत किया कि शब्द को हम इतना महत्त्व न दें कि धर्म शब्द के कारागार में बंदी हो जाये। यह जो शब्द है, यह घर है कि कारागार है? जेलखाना है कि घर है? जेलखाने में और घर में अन्तर क्या है? ईंट-पत्थर, लोहा, सीमेन्ट घर में भी लगता है और जेलखाने के दीवाल जो बनते हैं, उनमें भी लगता है। पर दोनों में अन्तर यही है कि आप घर जाने के लिए तो उत्सुक रहते हैं, पर जेल जाने के लिए तो कोई उत्सुक नहीं रहता। क्यों? बोले, जेल में भीतर जाने और बाहर आने की स्वतन्त्रता नहीं होती। घर में स्वतन्त्रता है। शब्द तो घर है, पर शब्द में आप धर्म को कैद कर देना चाहते हैं? धर्म को शब्द से जोड़े रखने पर भी हम धर्म को इतनी स्वतन्त्रता दें, शब्द के तात्पर्य को महत्त्व दें, शब्द के पीछे निहित भावना को महत्त्व दें, केवल शब्द को महत्त्व न दें। बस मूल अन्तर दोनों में यही है।

श्रीभरत ने शब्द तो कहा, पर शब्द के अर्थ को उन्होंने बदल दिया। गुरु वशिष्ठ यह कहते हैं कि पिता की आज्ञा का पालन करना सत्य है। पर श्रीभरत इसके दूसरे पक्ष को सामने रखते हैं। वे कहते हैं कि पिता के मुँह से जो निकला, क्या वही सत्य है या उस शब्द के पीछे हमारे पिताजी की जो भावना थी, जो विचार था, वह सत्य है? मानो श्रीभरत ने जो बात कही, वह बड़े महत्त्व की है। बोले, गुरुदेव और आप सब यह कहते हैं कि मुझे पिताजी की आज्ञा का पालन करना चाहिए। माँ ने भी और मन्त्रियों ने भी कहा कि गुरुदेव की आज्ञा का पालन करना चाहिए और मैं भी यही मानता हूँ कि आज्ञा का पालन करना चाहिए। किन्तु श्रीभरत का अभिप्राय यह था कि क्या सचमुच पिताजी यह चाहते थे कि श्रीराम वन जायँ और भरत राज्य सिंहासन पर बैठे? क्या सचमुच उन्होंने यह कहा है? शब्द हो सकता

है, सुनाई दे सकता है, किन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं। सचमुच श्रीभरत की बातों में गहराई से पैठकर, उस पर विचार करके देखें, तो उनका पक्ष ही तो अन्त में सर्वोत्कृष्ट है। श्रीभरत ने जब यह कहा –

गुर पितु मातु स्वामि हित बानी।
सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी।। २/१७६/३

तो उनके इस वाक्य के कई तात्पर्य थे। उनमें एक तात्पर्य यह था कि गुरुदेव, आपको तो यह ज्ञात है कि पिताजी के अन्त:करण का सत्य क्या था? पिताजी की अन्तिम अभिलाषा क्या थी? पिताजी की अन्तिम अभिलाषा यही थी कि श्रीराम को सिंहासन पर बैठावें। इसी के लिए वे प्रयत्नशील थे। इसी के लिए उन्होंने आपसे आज्ञा माँगी। आपने आज्ञा दे दी और चारों ओर घोषणा कर दी गई कि कल अयोध्या के सिंहासन पर राम बैठेंगे। अब इसके पश्चात् आप बता रहे हैं कि पिताजी की यह आज्ञा है। पर मैं इस दृष्टि से विचार करके देखता हूँ कि यह आज्ञा किसकी है? महाराज के मुँह से जो शब्द, जो वाक्य निकले, वह उन्होंने कहा नहीं, उनसे कहलवाया गया। कहलवाने वाला कौन है? कैकेयीजी हैं। महाराज दशरथ तो 'मौनं स्वीकृति लक्षणम्' के अनुकूल, मौन रहकर स्वीकृति देते रहे, पर यह आज्ञा तो दशरथजी की नहीं, कैकेयीजी की है।

तो क्या हुआ ! अगर कैकेयीजी की आज्ञा है, तो भी मानना चाहिए। वे माँ हैं, पर श्रीभरतजी ने कहा कि अगर गहराई से विचार करके देखें, तो वस्तुत: यह कैकेयीजी की भी आज्ञा नहीं है। तो किसकी है? बोले, मैंने सुना है कि प्रभु के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर, महारानी कैकेयीजी बड़ी प्रसन्न हो गई थीं और ऐसी स्थिति में अगर उनका वश चलता, तो वे मन्थरा को पुरस्कार देतीं। किन्तु बाद में मन्थरा ने उनकी बुद्धि को भ्रष्ट करके उन्हें यह कहने के लिये बाध्य किया। तो यह आज्ञा पिताजी की है कि मन्थरा की? पिताजी की आज्ञा माननी है कि मन्थरा की, आप यह निर्णय पहले कर लीजिए। इसका अभिप्राय है कि शब्द के पीछे निहित तात्पर्य है – **अरथ अमित अरू आखर थोरे।** महत्त्व शब्द का नहीं है, महत्त्व तो शब्द में निहित भाव का है, उसके अर्थ का है। आप रामायण और महाभारत की तुलना करें, तो महाभारत में शब्दप्रधान धर्म की जो स्थिति है, वह महाभारत युग का अपना धर्म है। रामायण में भी श्रीभरत से पहले जो धर्म की व्याख्या है, वह शब्दपरक है। लेकिन भगवान राम और भरत ने शब्द के तात्पर्य को महत्त्व दिया। भगवान राम ने कहा –

जेहिं सायक मारा मैं बाली।
तेहिं सर हतौं मूढ़ कहँ काली।। ४/१७/५

जिस बाण से मैंने बालि का वध किया, कल उसी बाण से मैं मूर्ख सुग्रीव का वध करूँगा। अब उस वक्ता ने यह चौपाई कहने के बाद फिर प्रश्न उपस्थित किया। उसने कहा, भगवान राम के मुख से – 'रामो दुर्नेव भाषते'। राम तो महान सत्यवादी हैं और भगवान राम ने जब यह कहा कि मैं उसी बाण से सुग्रीव का वध करूँगा, तो उन्हें करना चाहिए था। यदि उन्होंने वध नहीं किया, तो वे असत्यवादी सिद्ध होते हैं। फिर उन्होंने समाधान दिया। उन्होंने कहा कि इस चौपाई का अर्थ समझने में भूल की गई है। भगवान राम ने यह कहा ही नहीं था कि मैं सुग्रीव को कल मारूँगा। भगवान राम तो यह कह रहे थे कि जिस बाण से मैंने बालि का वध किया है, उसी बाण से मैं कल सुग्रीव को मारूँ, तो लोग मुझे मूर्ख कहेंगे। भगवान राम तो पहले से ही नहीं कर रहे थे। श्रोता गदगद् हो गए कि हाँ, चलो श्रीराम का सत्य बच गया। पर क्या आप यही समझते हैं कि भगवान राम ने यह नहीं कहा था कि सुग्रीव का वध मैं कल इसी बाण से करूँगा? जहाँ शब्द इस सीमा तक व्यक्ति को बाध्य कर दे कि मुँह से जो शब्द निकाला, उसे अनावश्यक होने पर भी किसी प्रकार से पूरा ही करना है, तो यह उचित नहीं है। दृष्टान्त के रूप में मैं कहा करता हूँ कि किसी व्यक्ति को फोड़ा हो जाये और वह डॉक्टर के पास जाये। डॉक्टर उससे कहे कि कल मैं इसका ऑपरेशन करूँगा। किन्तु फोड़ा रात में ही फूट जाय और दूसरे दिन डॉक्टर के पास रोगी दिखावे। डॉक्टर यह कहे कि यद्यपि तुम्हारा फोड़ा ठीक हो गया है, पर मुझे अपने शब्द के सत्य की रक्षा करने के लिए तो ऑपरेशन करना ही पड़ेगा। तो ऐसे सत्यवादी डॉक्टर के पास कौन रोगी जाएगा? अरे भई, भगवान श्रीराम तो कह ही रहे हैं कि कल मैं मारूँगा और उसका अभिप्राय यह था कि अगर उसके पहले ही इसका रोग ठीक हो जाता है, अगर वह परिवर्तित हो जाता है, तो मारने की आवश्यकता नहीं रहेगी। वस्तुत: श्रीभरत और भगवान श्रीराम दोनों ने मुँह से निकले हुए शब्द को पकड़ लिया, उसी शब्द को सत्य मान लिया और वे उसी सत्य की रक्षा करने के लिए व्यग्र हो गए, यह सत्य नहीं है। शब्द के अन्तराल में जो

वास्तविक सत्य है, उसी वास्तविक सत्य को श्रीभरत ने कई रूपों में प्रस्तुत किया।

भरतजी ने कहा कि यह सत्य है कि मैं आपके वचन को मानूँ, पिता के वचन को मानू, माँ के वचन को मानूँ, पर मैं उसी वचन को मानूँगा, जो सचमुच आपलोगों के वचन हैं, जो वास्तव में पिताजी के वचन हैं, जो माँ के वास्तविक वचन हैं। सचमुच श्रीभरत की दृष्टि बड़ी दूरगामी थी। इन तीनों के द्वारा कभी वे बातें कहीं गई थीं। वे भिन्न प्रकार की थीं। श्रीभरत का तात्पर्य यह है कि आज जो शब्द आप बोल रहे हैं, उसमें बाध्यता है। श्रीभरत ने व्याख्या कर दी। माँ ने कहा था, राज्य ले लो, यह पथ्य है। गुरुजी ने ऐसा भाषण दे दिया, राज्य ले लो, यही चिकित्सा है। मंत्रियों ने समर्थन कर दिया। भरतजी ने प्रश्न उठाया कि आप लोग जो कह रहे हैं, इसके पीछे क्या कोई विचार है? उन्होने मंत्रियों से प्रश्न पूछा, आप राजा के लिए व्यग्र हैं, आप बताइए?

पितु सुरपुर सिय रामु बन करन कहहु मोहि राजु।
एहि तें जानहु मोर हित कै आपन बड़ काजु।।
२/१७७/०

आप लोग विचार करके बताइए कि जिस राजा के राज्यारोहण के लिये पिता को अपने प्राण देने पड़े हों, क्या उस राजसिंहासन पर मैं बैठूँ? श्रीभरत का तात्पर्य बड़ा दूरगामी है, उनका तात्पर्य था कि पिताजी अगर मुझे राजा बनाना चाहते, तो क्या मेरे आते तक जीवित नहीं रहते कि एक वचन तो पूरा हो गया, अब दूसरे वचन के पूरा होने के लिये अपने प्राणों को बचाऊँ? पर पिताजी ने प्राण दे दिए, उन्होंने तो मेरा मुख देखना भी पसन्द नहीं किया। मैं अनर्थ का इतना बड़ा हेतु हूँ और ऐसी स्थिति में अगर मैं सिंहासन पर बैठूँगा, तो क्या पिताजी की आत्मा सन्तुष्ट होगी? साथ-साथ उनका संकेत सर्वत्र यह था कि गुरुदेव आपने भी पिताजी से यही कहा था। गुरु वशिष्ठजी ने महाराज दशरथ को उपदेश देते हुए कहा था –

सुनु नृप जासु बिमुख पछिताहीं।
जासु भजन बिनु जरनि न जाहीं।।
भयउ तुम्हार तनय सोइ स्वामी।
रामु पुनीत प्रेम अनुगामी।। २/३/७-८

राम के भजन के बिना जीव की जलन शान्त नहीं हो सकती। बोले, गुरुदेव एक वाक्य आपका वह है और दूसरा वाक्य आज यह है कि राज्य स्वीकार कर लो, जलन शान्त हो जायेगी। तो दोनों वाक्य तो आपके ही वाक्य हैं। तो दोनों वाक्यों में से कौन से वाक्य को ठीक मानें?

उसका अभिप्राय उन्होंने कह दिया। कोमल वाणी में कितनी कठोर भाषा उन्होंने कह दी। बोले, मैं समझ गया, आज जो कुछ भाषण हो रहा है, किसी का स्वार्थ बोल रहा है, कौशल्या अम्बा के मुँह से ममता बोल रही है –

तुम्ह चाहत सुखु मोहबस मोहि से अधम कें राज।
२/१७८/०

सच्चे अर्थों में धर्म की प्रतिष्ठा, धर्म की व्याख्या, जो श्रीभरत ने की, वही रामराज्य का आधार है। इसकी चर्चा हम कल करेंगे। आज इतना ही। **(क्रमशः)**

पृष्ठ ५७ का शेष भाग

शिक्षाविदों व समाजशास्त्रियों को समयाभाव झेलना पड़ता है, किन्तु पढ़ाई व कैरियर बनवाने की होड़ में अपने बच्चों के बचपन को भुलवा देना कहाँ की समझदारी है? बच्चे तो सरल होते हैं, जीवन की वास्तविकता से अनभिज्ञ जिन्हें बाह्य जगत आकर्षित करता है, परन्तु शिक्षकों व अभिभावकों को साम्यता बनाने की जरूरत है, जिससे पढ़ाई के बोझ से बच्चों का बचपन भी न दबे और वह खेल-खेल में पढ़ाई कर अपने जीवन को सार्थक मुकाम तक ले जा सकें। मोबाइल फोन के प्रयोग पर अंकुश न लगायें, क्योंकि यह समय की जरूरत है, अपितु यह बताना आवश्यक है कि कितना प्रयोग उचित है।

आज बच्चों की विचारधारा और बड़ों की सोच में सामंजस्य बनाना अत्यधिक कठिन है। जेनरेशन गैप – पीढ़ियों की दूरियाँ भौगोलिक पृथ्वी की तरह बन गया है। जहाँ एक ओर बच्चों की सोच व आकांक्षाएँ उत्तरीय ध्रुव हैं, तो वहीं उनके अभिभावकों व शिक्षकों की सामाजिक दृष्टि व उत्तरदायित्व दक्षिणी ध्रुव की रेखाएँ। अगर हमें एक दूसरे को समझना है और विकास के मार्ग पर परिपक्वता के साथ चलना है, तो बुद्ध की भाँति ही मध्यम मार्ग अपनाना होगा। अभिभावकों को एक ऐसे चित्रकार की भूमिका निभानी होगी, जो अपने और अपने बच्चों के मध्य समन्वय की भूमध्य रेखा खींच सकें। ○○○

युवा-शक्ति के आदर्श : वे दो युवक

स्वामी विमलात्मानन्द

रामकृष्ण मठ-मिशन के न्यासी और अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, योगोद्यान

भारतवर्ष में, बरसों से उत्तराखंड पवित्र लोगों और संन्यासियों के लिए अत्यन्त प्रिय स्थान रहा है। राजसी एवं प्रगाढ़ हिमालय तथा निरन्तर प्रवाहमान गंगा-स्त्रोत से विभूषित, जो भारत का आध्यात्मिक प्रवाह है, आज भी तीर्थस्थानों में प्रतिध्वनित होता है। इन स्थानों में महान ऋषिकेश और हरिद्वार उन असंख्य पवित्र जीवन की साक्षी हैं, जो भारत के हृदय में चिरजागृत हैं। हरिद्वार में हिमालयीय शृंखला के पथरीले गिरिपाद में खड़े रहकर और द्रुत गति से प्रवाहित गंगा को निहारते हुए ऐसा लगता है, जैसे शाश्वत वैदिक संस्कृति आज भी यहाँ अबाधित जीवित है। इसीलिये भारत के पवित्र लोग और संन्यासी ऐसे तीर्थ स्थानों पर आकर कई दिन रहते हैं और गंगा किनारे कुटीर बनाकर तपस्या में लीन हो जाते हैं। करीब सौ साल पहले ऐसे स्थानों से मानव बहुत दूर रहते थे और चिकित्सा व स्वास्थ्य सुविधाओं से रहित थे।

वे दोनों कहाँ हैं?

उन दिनों, कैलाश आश्रम के महामंडलेश्वर – स्वामी धनराजगिरि को दशनामी परम्परा के संन्यासी उच्चतम सम्मान देते थे। वे एक आडंबरहीन वेदान्तवादी और उच्चकोटि के विद्वान थे। वे ऐसे ज्ञानी थे, जिनके साथ स्वयं स्वामी विवेकानन्द ने धर्मग्रन्थ सम्बन्धी चर्चा की। स्वामी अभेदानन्द ने उनसे वेदान्तिक ज्ञान प्राप्त किया। सम्भवत: सौ वर्ष पूर्व महामण्डलेश्वर धनराजगिरि हरिद्वार के एक आश्रम में साधुओं के भंडारे में उपस्थित हुए। अलग-अलग आश्रम के सभी महामण्डलेश्वर और हरिद्वार, कनखल और ऋषिकेश से साधु समुदाय पधारे थे। जैसीकि प्रथा थी, आश्रम-अध्यक्ष और शेष साधु-ब्रह्मचारियों ने अपने-अपने स्थान ग्रहण

रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम कनखल, हरिद्वार

किए। धनराजगिरि से ऊपरी वेदी पर आसन ग्रहण करने को कहा गया। उन्होंने वहीं से सभी साधु-समुदाय की ओर दृष्टि डाली और कहा, वे दोनों कहाँ हैं? मैं सभी को देख पा रहा हूँ, केवल उन दोनों के सिवाय। वे दोनों कहाँ हैं? धनराजगिरि का प्रश्न उन प्रबन्ध-कर्मियों के लिए था, जो असहजता से एक-दूसरे को देख रहे थे। कोई उत्तर न मिलने पर धनराजगिरि गम्भीर हो गए। आश्रम के अध्यक्ष, जहाँ इस भोज की व्यवस्था हुई थी, ने हाथ जोड़कर विनम्रता से पूछा, आप किनके बारे में पूछ रहे हैं? हमने तो सबको आमन्त्रित किया है। कोई भी अनिमन्त्रित नहीं है। आश्चर्यचकित हो धनराजगिरि ने पुन: पूछा, क्यों? सेवाश्रम के वे दो महात्मा कहाँ हैं? विवेकानन्दजी के वे दो शिष्य कहाँ हैं? मैं उन्हें यहाँ नहीं देख पा रहा हूँ। तत्क्षण आश्रम अध्यक्ष को अनुभव हुआ कि धनराजगिरिजी क्या पूछ रहे हैं। उन्होंने तिरस्कारपूर्वक उत्तर दिया, ओह वे दो साधु ! वे तो अस्पृश्य (भंगी) साधु हैं। वे लोगों के मलमूत्र साफ करते हैं; बीमारों के गंदे बिस्तर साफ करते हैं और मृतक जनों का दाह संस्कार करते हैं। हम उन्हें क्यों आमन्त्रित करें? वे सच्चे साधु नहीं हैं। वे अछूत हैं। वे हमारे बीच उठने-बैठने के योग्य नहीं हैं। इसलिये उनको आमन्त्रित करने का प्रश्न ही नहीं उठता। धनराजगिरि ऐसा कटु शब्द सुनकर दुखी हुए। उन्होंने गम्भीरता से कहा, 'केवल वे ही सच्चे साधु हैं। वे ही साधु-समाज के कलगी, भूषण हैं। वे हरिद्वार, कनखल और ऋषिकेश की महान आत्मा हैं। अगर इस भोज में वे दो महात्मा आमन्त्रित नहीं हैं, तो मैं कुछ भी स्पर्श नहीं करूँगा। मैं इसी क्षण इस स्थान को छोड़ देता हूँ।'

वे आश्रम अध्यक्ष, जिन्होंने भोज का आयोजन किया था, यह सुनकर परेशान हो गए। एक ओर वे उन दोनों महात्माओं को बुलाने में अनिच्छुक थे और दूसरी ओर धनराजगिरि की आज्ञा की अवहेलना करना असम्भव था। अन्त में बाध्य होकर उनको एक संन्यासी को उन दोनों महात्माओं को बुलाने भेजना पड़ा, परन्तु उन दोनों ने शिष्टतापूर्वक मना कर दिया। वे संन्यासी जिनको उन्हें बुलवाने भेजा गया था, उन्होंने बताया कि वे लोग भोज के लिए आना नहीं चाहते। धनराजगिरि ने आश्रम-अध्यक्ष को फिर आदेश दिया कि 'आपको उन्हें बुलाने जाना चाहिए, उन्हें कहिए की धनराजगिरि उनके लिए प्रतीक्षा कर रहे हैं और यदि वे लोग नहीं आए, तो वे भी कुछ ग्रहण नहीं करेंगे। आश्रम-अध्यक्ष उनके स्थान पर गए और भोजन पर पधारने के लिए प्रार्थना की। उन्होंने उनको बताया कि यह धनराजगिरि का आदेश है। ज्येष्ठ महात्मा जाने को सहमत हुए, परन्तु कनिष्ठ महात्मा नहीं माने। इस पर ज्येष्ठ महात्मा ने कनिष्ठ से कहा, धनराजगिरि के लिए हमें जाना चाहिए। वे महान संन्यासी हैं, हमें उनकी बातों का सम्मान करना चाहिए। इस बात से कनिष्ठ महात्मा थोड़े द्रवित, कोमल हुये और वे दोनों भोज में पधारने को तैयार हुए।

वेदान्त की जय हो

धनराजगिरि ने स्वयं उन्हें मुख्य द्वार पर स्वागत कर स्नेह से आलिंगन किया। एकत्रित साधुगण यह देखकर आश्चर्यचकित हो गये। फिर धनराजगिरि उन्हें भीतर ले गए और अपने दोनों ओर उन्हें बैठाया। उन्होंने सभाजनों से कहा, 'आप सबको लगता है कि आप महान साधु हैं, किन्तु यदि यहाँ कोई सच्चा साधु है, तो ये दोनों हैं। ये दोनों स्वामी विवेकानन्द के आदर्शों को मानकर विशुद्ध जीवन व्यतीत करते हैं, दरिद्र-सेवा करते हैं। ये ही इस युग के आदर्श हैं। ये ही वेदान्त की वाणी को व्यवहार मे लाना जानते हैं। हम केवल वेदान्त की वाणी को तोते की तरह बार-बार बोलते रहते हैं। ये आपके अस्वस्थ होने पर आपकी सेवा करते हैं और आप इनको अस्पृश्य कहते हैं।'' आप लोग लज्जित नहीं होते? जब आप छोटे बच्चे थे, आपका गंदा कौन साफ़ करता था? आपकी माँ करती थीं। इसलिये क्या आप अपनी माँ को अस्पृश्य कहते हैं? वे सब पर बहुत क्रोधित हुये और इन दोनों महात्माओं से कहा, 'हमें आप इस तरह अपमानित होने के लिए क्षमा कीजिए।' जब वे स्वयं उन दोनों से क्षमा-प्रार्थना कर रहे थे, तब ज्येष्ठ महात्मा ने कहा, 'कृपया आप ऐसा ना कहें। हमने अपमान को हृदयंगम नहीं किया।'

धनराजगिरि की बातें सुनकर, समस्त साधु-समाज मौन हो गया। वे इन दोनों महात्माओं के प्रति अपने व्यवहार के कारण लज्जित हुए। उन सबने इन दोनों महात्माओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त की। उन सबने इन दोनों महात्माओं को सम्मानित किया। तभी से सम्पूर्ण साधु-समाज ने इन दोनों महात्माओं का महत्त्व समझा और उनके मौन सेवा को सदा उच्च सम्मान दिया। विवेकानन्द के व्यावहारिक वेदान्त की जय हो। विवेकानन्द के परसेवा के सिद्धान्त का उत्तराखण्ड में स्वागत हुआ और 'आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च' (अपने

मोक्ष और विश्व का कल्याण) का विजय ध्वज लहराया गया। ये दोनों अस्पृश्य अब महात्मा के स्तर पर प्रसिद्ध हो गये। ये और कोई नहीं, कनखल के रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम के संस्थापक थे। ये स्वामी कल्याणानन्द और स्वामी निश्चयानन्द दोनों ही स्वामी विवेकानन्द के शिष्य थे। यह

स्वामी कल्याणानन्द

स्वामी निश्चयानन्द

केवल उन्हीं का वास्तविक प्रयास था, जिससे सेवाश्रम एक सम्मानित संस्था बनी।

प्रारम्भ

जब स्वामी विवेकानन्द उत्तराखण्ड में संन्यासी के रूप में भ्रमण कर रहे थे, तब वे वहाँ पर वृद्ध और बीमार साधुओं को देख बहुत दुखी हुए। वे स्वयं भी वहाँ बीमार पड़े और पीड़ित रहे। तभी से उनके मन में यह बात थी। १९०० में जब उन्होंने स्वामी कल्याणानन्द को संन्यास प्रदान किया, तब उन्होंने पूछा, 'तो कल्याण, तुम अपने गुरु को गुरु-दक्षिणा के रूप में देने के लिए क्या लाए हो?' कल्याणानन्द आगे आए और कहा – मैं यहाँ हूँ। मैं स्वयं को आपको समर्पित करता हूँ। मैं आपका दास हूँ। मुझे आप कुछ भी करने को कहिए, मैं करूँगा। स्वामीजी ने कहा, ''मैं यही चाहता हूँ। हरिद्वार जाओ। मैं तुम्हें कुछ पैसे देता हूँ। थोड़ी जमीन खरीदो, जंगल साफ करो और कुछ कुटिया बनाओ। बहुत सारे तीर्थयात्री हरिद्वार जाते समय अस्वस्थ हो जाते हैं और कुछ की मृत्यु हो जाती है, क्योंकि उनको सही चिकित्सा नहीं मिल पाती। अन्य कोई परवाह भी नहीं करता। जब मैं वहाँ था, तो मुझे एक डॉक्टर के लिए करीब १०० मील दूर मेरठ जाना पड़ा। इसलिए हरिद्वार में कुछ निर्माण करो। तुम यदि रास्ते के किनारे किसी को अस्वस्थ पाते हो, तो उन्हें उठाकर अपनी कुटिया में लाओ और उनकी चिकित्सा करो। बंगाल को भूल जाओ ! वापस मत आना ! जाओ !'' यह जानकर कि गुरु-आज्ञा ही सर्वोपरि और सबसे महान आध्यात्मिक कार्य है, कल्याणानन्द उनके अनुरोध को शिरोधार्य कर प्रसन्नतापूर्वक उत्तराखण्ड की ओर होम्योपैथिक दवाई लेकर निकल पड़े।

कनखल, हरिद्वार के रास्ते में स्थित, जहाँ अनगिनत परिव्राजक साधु और तीर्थयात्री दिखते हैं। कनखल, मानव-स्रोत से दूर, परन्तु प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान के निकट एक सौम्य शान्तिपूर्ण वातावरण के साथ नि:संदेह एक उचित स्थान था। इसलिए कल्याणानन्द ने गुरु की आज्ञा पालन करने के लिए कनखल में निवास करने का निर्णय लिया। तीन रुपए में दो कमरे किराए पर लेकर सेवा शुश्रूषा का स्थान – सेवाश्रम का बीज बोया। उन्होंने इन्हीं दो कमरों में सम्पूर्ण व्यवस्था की। अस्वस्थ साधुओं के लिए बिस्तर, एक औषधालय और स्वयं भी वहीं रहने लगे। प्रतिदिन वे साधुयों की कटिया-कुटिया में भ्रमण कर वृद्ध एवं अस्वस्थ साधुओं की कुशल-क्षेम पूछते थे और उनके उपचार और भोजन की व्यवस्था करते थे। आवश्यकता होने पर वे अस्वस्थ साधुओं को अपने निवास-स्थान पर लाकर उनकी देखभाल करते थे। यद्यपि वे स्वयं अपने भोजन के लिये सम्पूर्ण रूप से भिक्षा पर निर्भर थे, किन्तु अपने रोगियों के लिए वे भोजन स्वयं बनाते थे। उनके पास कुछ चिकित्सकीय उपकरण थे। वे स्वयं ही डॉक्टर, नर्स, सफाईकर्मी और भोजन बनाने का काम करते थे। इस प्रकार यह सेवा-कार्य स्वामी विवेकानन्द जी के आशीर्वाद से प्रारम्भ हुआ और क्रमश: रामकृष्ण मिशन की एक अत्यन्त सम्मानित संस्था कनखल सेवाश्रम में विकसित हुई। सेवाश्रम की नीरव सेवा सर्वप्रथम रामकृष्ण मिशन की अँग्रेजी मासिक पत्रिका 'प्रबुद्ध भारत' में प्रकाशित हुई। आर्थिक सहायता का निवेदन भी प्रकाशित किया गया, जिससे अस्पताल और आश्रम दोनों का विकास किया जा सके।

सेवा-योजना

सेवाश्रम की 'नारायण सेवा' केवल साधुओं के लिए ही सीमित नहीं थी। सभी अस्वस्थ तीर्थ-यात्री और कनखल तथा आसपास के निवासी भी सेवाश्रम से चिकित्सा करवा सकते थे। धीरे-धीरे कनखल से ऋषिकेश तक इस सेवा की ख्याति हो गई। दो साल बाद स्वामी विवेकानन्द के एक दूसरे शिष्य स्वामी निश्चयानन्द भी सेवा-योजना से जुड़ गए। दोनों गुरुभाई अपने गुरु के मार्गदर्शन से प्राण-पण से दीन-दुखी रूपी ईश्वरीय सेवा-सहायता में लग गये।

दोनों गुरुभाइयों के एकत्रित प्रयास से सेवाश्रम पूर्ण रूप से कनखल में स्थापित हो गया। अप्रैल, १९०३ में कलकत्ता के किसी उदार व्यक्ति के दान के धन से कनखल के बीचों-बीच एक ५ एकड़ जमीन १५००/- रुपए में खरीदी गयी। उस जगह पर ३ कुटिया बनायी गई और सेवाश्रम को वहीं स्थापित किया गया। वे दोनों गुरुभाई सबके लिए अपने हृदय में सहानुभूति लिए साधुओं की कुटियाओं और अछूतों के घरों के आसपास घूमते रहते। वे बीमारों का मल स्वयं अपने हाथ से साफ करते, उनके लिए भोजन बनाते और औषधि देते रहते। रूढ़िवादी साधु उन दोनों साधुओं के इस अति उत्तम सेवा को देखकर विस्मित हो रहे थे, अपमानजनक ढंग से उन्हें अछूत साधु कहकर व्यंग्य कर रहे थे। उनका कहना था कि मल साफ करना सफाईवाले का कार्य है, साधुओं का नहीं। वे ऐसे ही वेदान्त के उच्च आदर्शों की चर्चा कर रहे थे। परन्तु व्यावहारिक प्रयोग 'प्रत्येक प्राणी में परम सत्ता – भगवान को देखना' उनके लिए हास्यास्पद था। वे लोग जब स्वयं अस्वस्थ रहे, तब स्वेच्छा से दूसरों की सेवायें लीं और जब उन पर दूसरों की सेवा करने का भार आया, तो वे निष्क्रिय अस्थावर आत्मा रहना उचित समझे। परन्तु ईश्वरीय कृपा से, रूढ़िवादी साधुओं के हृदय में जो संशय था, उसे स्वामी धनराजगिरि जी ने कुशलता से हमेशा के लिए शान्त कर दिया।

स्वामी विवेकानन्द का मानव-जाति पर अपार प्रेम इन दोनों शिष्यों पर व्याप्त हो गया था। प्रारम्भ से ही विवेकानन्द ने इस सेवाश्रम पर दृष्टि रखी हुई थी। वे कल्याणानन्द का सेवा-भाव देखकर बहुत प्रसन्न थे और उनकी बहुत प्रशंसा की। एक दिन कल्याणानन्द अपने गुरु से सेवाश्रम के भविष्य पर विचार-विमर्श करने बेलूड़ मठ गए। स्वामी विवेकानन्द ने उनसे कहा, मैं ऐसा चाहता हूँ कि एक ओर श्रीरामकृष्ण का मन्दिर हो जहाँ, साधु-ब्रह्मचारी एवं अन्य शिष्यगण ध्यान-तपस्या करेंगे और उसके बाद उन लोगों ने जो कुछ सीखा है, उसका व्यावहारिक प्रयोग करेंगे। स्वामी विवेकानन्द ने उन्हें अच्छे से समझाया कि वेदान्त का केवल सैद्धान्तिक ज्ञान निरर्थक है, जब तक कि उसे आचरण में नहीं लाया जाता। अत: वेदान्त को व्यावहारिकता में लाना पड़ेगा। स्वामी विवेकानन्द ने उनकी स्वाभाविक सेवा-भावना को देखकर उनके मन में यह स्थापित करना चाहा कि सेवा वेदान्त का व्यावहारिक कार्य-क्षेत्र है। इस प्रकार ईश्वरीय कृपा को मानव सेवा के साथ एकीकरण करके और मानवता को ईश्वर के प्रति निष्ठावान करके भारत के प्राचीन आध्यात्मिक तत्त्व को व्यवहार में, आचरण में लाया जा सकता है। इस तरह उन्होंने शिष्य के सेवा-भाव को प्रोत्साहित किया।

युग धर्म

स्वामी विवेकानन्द की अभिलाषा कल्याणानन्द के बाद के जीवन में ठोस आकार ले सकी। ध्यान, पूजा और मानव सेवा ही ईश्वर की सेवा है, यही उनके जीवन का प्राथमिक विषय रहा और यह सब उनके हर कार्य में दिखाई दिया। दर्शनीय बात है कि जब वे कनखल सेवाश्रम के निर्माण की योजना बना रहे थे, कैसे कल्याणानन्द ने अपने गुरु की इच्छा का ध्यान रखा – अग्रभाग में अस्पताल और पिछले भाग में श्रीरामकृष्ण का मन्दिर, इसके साथ ही ध्यान कक्ष, पुस्तकालय और एकान्त में संन्यासी निवास-स्थान। ये सब सत्य साक्ष्य हैं कि स्वामी विवेकानन्द के इच्छानुसार एक आदर्श संस्था निर्मित हुई, जहाँ कर्म वेदान्तिक चिन्तन पर आधारित है, जैसाकि स्वामीजी ने कल्याणानन्द को बताया था। विवेकानन्द के गुरु भाई – स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी शिवानन्द, स्वामी तुरीयानन्द और स्वामी प्रेमानन्द कनखल सेवाश्रम में रहकर उन्हें प्रोत्साहित करते थे। सेवाश्रम के बारे में स्वामी ब्रह्मानन्द ने कहा – 'यह एक मन्दिर है, जहाँ विराट (सभी प्रचारित धर्मविज्ञान) की पूजा होती है। इस मन्दिर के प्रतिष्ठित होने से, कर्मी, सेवक और सेवा पानेवाले, सभी सौभाग्यशाली हुए।'

धीरे-धीरे सेवाश्रम की प्रसिद्धि और उसकी समर्पित सेवाएँ पूरे देश में प्रसारित हो गयीं। कल्याणानन्द और निश्चयानन्द दोनों के कठोर परिश्रम से सेवाश्रम का विलक्षण अस्पताल बना। प्रतिवर्ष अस्पताल के अन्तरंग और बहिरंग विभागों के द्वारा हजारों अस्वस्थ साधुओं, दरिद्रों और तीर्थयात्रियों

को नि:शुल्क चिकित्सा प्रदान की गयी और आज भी सभी साधुओं को नि:शुल्क चिकित्सा प्रदान की जाती है और जन-साधारण से नाम मात्र की राशि लेकर चिकित्सा दी जाती है।

यहाँ का कार्य केवल बीमारों की सेवा करना ही नहीं था। इन सबके साथ हरिद्वार के कुम्भ मेले के समय स्वामी कल्याणानन्द तीर्थयात्रियों के रहने के लिए भी व्यवस्था करते थे। १९१३ में उन्होंने दरिद्र श्रमिक और उनके बच्चों की शिक्षा के लिए एक रात्रि पाठशाला की स्थापना की। स्वामी कल्याणानन्द और स्वामी निश्चयानन्द इन दीन-दुखी, अस्पृश्यों – मोची, सफाईकर्मी, डोम और अन्य लोगों के प्रति प्रगाढ़ प्रेम का अनुभव करते थे।

दोनों गुरु भाई अपनी दिनचर्या के प्रति दृढ़ थे। उनकी साधना, सेवा, पूजा-पाठ वस्तुत: सभी क्रियाएँ स्वामी विवेकानन्द के शिक्षण पर आधारित थीं। वे अपनी साधना के प्रवाह, जैसे जप-ध्यान और सेवा को एक ही धारा में पिरोए उस लक्ष्य को अपना आदर्श – स्वामी विवेकानन्द की कथन मानते हुए रखते थे। अत्यधिक अथक प्रयास और कठोर नियम के कारण उनका स्वास्थ्य पूरी तरह टूट चुका था और उन दोनों ने सेवाश्रम में अपनी अन्तिम साँस ली, पहले, २२ अक्तूबर, १९३४ में स्वामी निश्चयानन्द ने और बाद में, २० अक्तूबर, १९३७ में स्वामी कल्याणानन्द ने।

एक शतक बाद ...

सेवाश्रम, सक्षम प्रशासन एवं प्रबन्धन के कारण क्रमश: विस्तृत होता गया। १९६३ में स्वामी विवेकानन्द की जन्म-शताब्दी के अवसर पर यहाँ का पहला विकास हुआ – एक सुनियोजित और उपयुक्त भवन का निर्माण, जिसमें चिकित्सा के अलग-अलग विभाग और बीमारों के लिए अस्पताल के बिस्तरों में वृद्धि। उस समय उत्तराखण्ड के संन्यासी संघ ने स्वयं विवेकानन्द की सेवा-योजना को मान्यता देने की सोची, संगमरमर से बना उनकी एक प्रतिमा सेवाश्रम परिसर में प्रतिष्ठित करके। कुछ समय पहले सेवाश्रम में पूर्ण विकसित रूप में एक आधुनिक चिकित्सा-सुविधायुक्त भवन तैयार हुआ। यह भवन विवेकानन्द की सेवा-योजना और व्यावहारिक वेदान्त के साकार विग्रह का प्रतीक बना। वास्तव में यह भवन विवेकानन्द के बताए हुए युग-धर्म का मार्ग-प्रदर्शक बना। इस भवन को स्वामी कल्याणानन्द और स्वामी निश्चयानन्द को समर्पित करना वास्तव में अत्यन्त उचित निर्णय था। यह सेवाश्रम के संस्थापक को सम्मानित करने का सही माध्यम था। इनका श्रद्धापूर्वक अन्तिम सम्मान तो साधु-समाज के द्वारा साधुओं के लिये आयोजित धार्मिक सभा में सेवाश्रम के शताब्दी महोत्सव में किया गया। लगभग सौ वर्ष पहले एक ऐसे ही आयोजित सभा में कैलाश आश्रम के महामंडलेश्वर स्वामी धनराजगिरि ने कल्याणानन्द और निश्चयानन्द को अछूत कहकर सम्बोधन करने का विरोध किया था। सबको उनकी सही योग्यता को बताया और संन्यासी-समुदाय में उनका यथोचित स्थान दिलवाया। अब सौ साल बाद उत्तराखण्ड में इन दो अछूत साधुओं की प्रशंसा करते नहीं थकते। इतना ही नहीं, साधु समुदाय उन दोनों को ज्ञानी महात्मा मानकर पूजा करते हैं। सन २००२ में सेवाश्रम का शताब्दी उत्सव सम्पन्न हुआ। मंच को बहुत सुन्दरता से सजाया गया, जिस पर श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा देवी और स्वामी विवेकानन्द के चित्रों के साथ स्वामी कल्याणानन्द एवं स्वामी निश्चयानन्द को दोनों ओर सजाकर रखा गया। मठों के अध्यक्ष, पूरे हरिद्वार, कनखल और ऋषिकेश से साधु-सम्मेलन में लगभग ८०० साधु एकत्रित हुए थे। उन दिनों मंच पर थे – कैलाश आश्रम के वर्तमान महामंडलेश्वर स्वामी निरंजनानन्द, स्वामी दिव्यानन्द और स्वामी महेश्वरानन्द - निरंजनी अखाड़ा आश्रम के अध्यक्ष, श्रीकृष्णनिवास आश्रम और संन्यास आश्रम। स्वामी शंकर भारती और स्वामी गोविन्द दास – अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद के अध्यक्ष और सचिव और निर्वाणी अखाड़ा, उदासी अखाड़ा, जूनागढ़ अखाड़ा और निर्मल अखाड़ा आश्रम के अध्यक्ष। सभा की अध्यक्षता रामकृष्ण मठ और मिशन के उपाध्यक्ष स्वामी आत्मस्थानन्द जी ने की थी। कनखल सेवाश्रम के सचिव, स्वामी नित्यशुद्धानन्द ने स्वागत भाषण दिया, जो उत्तराखण्ड साधु-समाज द्वारा मण्डलेश्वर उपाधि से सम्मानित हैं।

अखाड़ा परिषद के सचिव ने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा देवी, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी कल्याणानन्द, स्वामी निश्चयानन्द को सम्मानित कर सभी मंच-वक्ताओं का परिचय करवाया। उन्होंने हिन्दी में रामकृष्ण मठ और मिशन के प्रशंसनीय सेवा-कार्य के बारे में बताया। सभी वक्ताओं ने श्रीरामकृष्ण और स्वामी विवेकानन्द के योगदान को काफी उत्साह के साथ वर्णन किया। कैलाश आश्रम के महामंडलेश्वर ने संस्कृत भाषा में प्रवचन दिया और अन्य आश्रमाध्यक्षों ने हिन्दी में प्रवचन दिये। ○○○

युवा-जीवन में सरस्वती पूजा का महत्त्व

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

हिन्दू धर्म में माता सरस्वती साहित्य, संगीत, कला तथा विद्या की देवी के रूप में प्रतिष्ठित हैं। मत्स्य पुराण, ब्रह्मबिद् पुराण, मार्कण्डेय पुराण, स्कन्द पुराण तथा अन्य ग्रन्थों में भी देवी सरस्वती की महिमा का वर्णन किया गया है। इन धर्मग्रन्थों में देवी सरस्वती को सत्यरूपा, शारदा, वीणापाणि, वाग्देवी, भारती, प्रज्ञापारमिता, वागीश्वरी, श्वेत वस्त्रधारणी, वीणा-पुस्तकधारणी तथा हंसवाहिनी से संबोधित किया गया है। दुर्गासप्तशती में भी माँ सरस्वती के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन मिलता है। कहा जाता है कि माता की उपासना करने से मूर्ख भी विद्वान बन जाता है। माँ सरस्वती के आशीर्वाद के बिना न तो मनुष्य विद्या प्राप्त कर सकता है और न ही सफलता की सीढ़ी पर चढ़ सकता है। जो इनकी सच्चे मन और श्रद्धा से पूजा करता है, वही प्रगति के पथ पर आगे बढ़ता है।

पेड़ों पर सजे हरे पत्ते, धरती का हर कोना फूलों से सजे, देखो अपने संग बहार लाया, बसन्त आया। बसन्त का आगमन प्रकृति में नई ऊर्जा का संचार करता है। माघ मास का ५वाँ दिन बसन्त पंचमी के रूप में मनाया जाता है। बसन्त पंचमी को माँ सरस्वती का जन्म भी हुआ था। इसलिए इस दिन को बहुत शुभ माना जाता है। इस दिन माँ सरस्वती की आराधना करके नये काम और व्यवसाय आरम्भ करते हैं। वीणावादिनी ज्ञान और बुद्धि की देवी हैं। अहंकार और अज्ञानता के अन्धकार से मुक्त कर ये आनन्द, सुख और समृद्धि प्रदान करती हैं। कहते हैं कि यदि व्यक्ति के पास धन का भंडार है, तो उसे केवल उसके सम्पर्क में आनेवाले लोग ही आदर देते हैं। लेकिन यदि व्यक्ति के पास विद्या रूपी धन है, तो उसे पूरा संसार सम्मान देता है। इसलिए त्रिदेव भी माँ सरस्वती की वन्दना करते हैं। कहा जाता है, आदिकाल में विष्णु भगवान ने ब्रह्माजी को सृष्टि की रचना करने का आदेश दिया। उनके आदेश के अनुसार ब्रह्माजी ने सृष्टि की रचना की। कुछ समय पश्चात् ब्रह्माजी ने पृथ्वी पर आकर देखा, तो चारों ओर सूना पड़ा था। न कोई बोलता था और न कोई सुनता था। चारों ओर निस्तब्धता छाई हुई थी। यह देख कर वे सोच में पड़ गये और अपने कमण्डल से चारों और जल छिड़का। उस जल के प्रभाव से वृक्ष में से एक देवी प्रकट हुई, जिनके दो हाथों में वीणा और अन्य दोनों हाथों में पुस्तक और अक्षयमाला थी। वे कमल के फूल पर विराजमान थीं। उन्हें देखकर ब्रह्माजी बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उनका नाम सरस्वती रखा। उन्होंने कहा – पुत्री ! तुम इस वीणा से संसार की निस्तब्धता दूर करो। तभी माँ सरस्वती ने वीणा बजाकर नाद उत्पन्न किया और सभी प्राणियों को वाणी प्रदान की। इसलिये इस दिवस को सरस्वती दिवस के रूप में मनाया जाता है और माँ सरस्वती की पूजा की जाती है। सरस्वती विद्या, आयु तथा बुद्धि प्रदान करनेवाली देवी मानी जाती हैं। जिस घर में माँ सरस्वती की पूजा होती है, उस घर में कभी विद्या, बुद्धि की कमी नहीं होती।

पुराणों में सरस्वती को कमल के फूल पर बैठा दिखाया जाता है। कीचड़ में खिलनेवाले कमल को कीचड़ स्पर्श तक नहीं कर सकता। कमल पर विराजमान माँ सरस्वती हमें यह संदेश देना चाहती हैं कि हमें चाहे कितने भी दूषित वातावरण में रहना पड़े, परन्तु हमें स्वयं को ऐसा बनाकर रखना चाहिये कि बुराई हम पर प्रभाव न डाल सके। सनातन धर्म में माँ सरस्वती को वाणी की देवी भी कहा गया है और ऐसा कहा जाता है कि २४ घण्टे में एक बार वह व्यक्ति की जिह्वा पर आती हैं। इस दौरान बोला गया वाक्य, शब्द सच

होता है। इसलिए घर के बड़े वयस्क, वृद्ध लोग कुछ भी बुरा या अपशब्द बोलने से मना करते हैं। उनका मानना है जाने-अनजाने बोला गया शब्द सच भी हो जाता है। यह बात काल्पनिक नहीं, सच है। इसलिए किसी के लिए न तो बुरा बोलें, न सोचें। यद्यपि सारे संसार में बसन्त पंचमी के दिन सरस्वती पूजा होती है, लेकिन धार्मिक मान्यताओं के अनुसार बसन्त पंचमी के दिन से ही ब्रज में ४१ दिन तक प्रमुख मन्दिरों में होली का त्यौहार मनाया जाता है।

ऐसा माना जाता है कि किसी भी देश का भविष्य वहाँ की नयी पीढ़ी या कहें तो युवा पीढ़ी पर निर्भर करता है। बच्चे का मन कच्ची मिट्टी की तरह होता है। उसे जिस प्रकार का हम संस्कार देते हैं, उस प्रकार का उसका चरित्र-निर्माण होता है, जो जीवन भर उसके साथ रहता है। लेकिन समय के साथ-साथ उसे निखारना भी आवश्यक होता है, नहीं तो बचपन में दिया हुआ संस्कार धुंधला पड़ जाता है। युवा होने पर यही संस्कार उनके जगत-कल्याणकारी उन्नत चरित्र के निर्माण में सहायक होते हैं। विद्याप्राप्ति हेतु युवक सनातम धर्म की शाश्वत देवी माँ सरस्वती की आराधना करें। पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित होकर धर्म और दैवी आस्था से विमुख न हों। वाट्सअप, इन्टरनेट, सोशल मीडिया पर आ रही अध्ययन और नैतिक जीवन-यापन से सम्बन्धित अन्य विपरीत चरित्र-निर्माणकारी वस्तुओं की उपेक्षा करें, तभी वे अपने व्यावसायिक और नैतिक जीवन के उच्चतम लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे।

आज के बच्चे कल के युवा ही होंगे। अभिभावक अपने घरों में बच्चों को छात्र जीवन में सरस्वती पूजा का महत्त्व बतायें। घर में भी माँ सरस्वती की पूजा करें। ऐसा वातावरण देने से प्रत्येक घर से सरस्वती के वरद पुत्र उत्पन्न होंगे, जो सर्वश्रेष्ठ भारत के निर्माण में सहायक होंगे। ○○○

कविता

हिन्द के जवानों का एक सुनहरा ख्वाब है

अशोक भार्गव

युग की जड़ता के खिलाफ एक इन्कलाब है ।
हिन्द के जवानों का एक सुनहरा ख्वाब है ।।
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति, मानवीय सांस्कृतिक क्रान्ति
व्योम में हमारी पहुँच बढ़ रही है आज पर,
दूर हो रहा है घर पड़ोस का ।
आदमी को आदमी के करीब लाएगी,
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति, मानवीय सांस्कृतिक क्रान्ति
आदमी भविष्य में यन्त्र का न हो गुलाम,
मानवीय गुण बढ़ेगें काम से ।
ऐसे योग्य युक्त काम हर जगह चलाएगी,
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति, मानवीय सांस्कृतिक क्रान्ति
ले के हाथ हल-कुदाल और ज्ञान की मशाल,
आओ चलें साथ-साथ गाँव को ।
क्योंकि गाँव-गाँव से दीनता मिटाएगी,
भारतीय सांस्कृतिक क्रान्ति, मानवीय सांस्कृतिक क्रान्ति

जग में अनुपम स्वर्णिम भारत

आनन्द तिवारी 'पौराणिक'

सदा रहा जो ज्ञान साधना में रत ।
जग में अनुपम स्वर्णिम भारत ।।
उत्तुंग हिमगिरि उत्तर मुकुट घोर ।
सागर लहरें दक्षिण पांव पखारे ।।
मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर, गुरुद्वारा।
पूरब, पश्चिम, सर्वधर्म सम्भाव है प्यारा ।।
जिसके चरणों में जिज्ञासु होते नत ।
जग में अनुपम स्वर्णिम भारत ।।
राम,कृष्ण, गौतम, गाँधी के उपदेश ।
तुलसी, नानक, सूर, कबीर के प्रेम-संदेश ।
सद्भाव, शान्ति, बन्धुत्व, एकता ।
यही कामना, ध्येय, हमारा सब से नाता ।।
गौरव गाथा जिसकी गाता दिग्-दिगन्त ।
जग में अनुपम स्वर्णिम भारत ।।

युवाओं के विकास हेतु आवश्यक सद्गुण : आज्ञापालन

स्वामी ज्ञानव्रतानन्द

न्यासी और मैनेजर, रामकृष्ण मठ, बेलूड़ मठ

प्रस्तावना

स्थान बेलूड़ मठ। अभी-अभी इस मठ की स्थापना हुई है। यहीं से स्वामी विवेकानन्द ने २० जून, १८९९ को दूसरी बार पाश्चात्य के लिये प्रस्थान किया था। उसी सभा में उन्होंने अँग्रेजी में एक छोटा-सा व्याख्यान दिया था। उस व्याख्यान में स्वामीजी ने संक्षेप में आध्यात्मिक जीवन के लिए उपयोगी सभी भावों का उल्लेख किया – 'यह समझना होगा कि जैसे स्वाधीन-चिन्तन आवश्यक है, वैसे ही आज्ञा-पालन भी चाहिए। ... तुम लोगों को इन दो विरोधी गुणों का अधिकारी होना होगा। यदि अध्यक्ष नदी में कूदकर ... पकड़ने को कहे, तो पहले तुम्हें उनकी आज्ञानुसार काम करना होगा, उसके बाद उनसे कुछ पूछ सकते हो। यदि वह आदेश ठीक न हो, तब भी पहले आदेशानुसार कार्य करो, उसके बाद तर्क करो। तुमलोगों को अपने सम्प्रदाय के प्रति गहन निष्ठा रखनी होगी। यहाँ अनुशासनहीन लोगों के लिये स्थान नहीं है। यदि कोई अवज्ञा करता हो, तो उसे निर्मम होकर निकाल देना। कोई विश्वासघाती न रहे। वायु जैसे मुक्त, स्वाधीन, साथ ही लता और कुत्ते जैसे नम्र और आज्ञाकारी बनो।''

इस चर्चा में स्वामीजी ने यह कहा कि संगठित होकर कार्य करने के लिये आज्ञाकारी होना आवश्यक है। ऐसा नहीं होने से व्यक्तिगत/संस्थागत किसी भी लक्ष्य या आदर्श तक पहुँचना सम्भव नहीं है।

संघबद्ध या संगठित होकर कार्य करना

संगठित होकर कार्य करने के लिये स्वामीजी ने १ मई, १८९७ को बलराम मन्दिर में रामकृष्ण मिशन की स्थापना के समय संन्यासी और गृहस्थ भक्तों के समक्ष कहा था और प्रथम बार पाश्चात्य भ्रमण के समय लिखित बहुत-से पत्रों में उन्होंने बार-बार उल्लेख भी किया है। जैसे उन सभी लेखों में उन्होंने संगठित होकर कार्य करने पर बल दिया है, वैसे ही उस प्रणाली के अनुसार कार्य करने पर उसके गुण-दोषों का भी उल्लेख किया है। २८ मई, १८९४ को मद्रासी भक्त आलासिंगा को वे लिखते हैं – ''शिक्षित युवकों के बीच कार्य करो और उनको इकट्ठा कर एक संघ बनाओ। ... जिससे विचार और संकल्प कार्य में परिणत हो, उसका प्रयत्न करो। स्वार्थ को बिलकुल त्याग दो और कार्य करो।[१]

११ जुलाई, १८९४ को आलासिंगा को स्वामीजी लिख रहे हैं – ''संगठित होकर कार्य करने की भावना हमलोगों में बिलकुल ही नहीं है। ऐसा प्रयास करना होगा कि संगठित होकर कार्य करने की भावना बढ़े। ईर्ष्या का अभाव ही इसका एकमात्र रहस्य है। ...सदा मिल-जुलकर शान्तिपूर्वक कार्य हो सके, इस बात की चेष्टा करनी होगी।''[२] इसके ठीक पहले स्वामीजी लिखते हैं – ''झूठी बातें न घुसने पाये, इसका ध्यान रखना।'' ३० नवम्बर, १८९४ को स्वामीजी पुन: आलासिंगा को लिखते हैं – ''हमें अपनी शक्तियों का संगठन किसी सम्प्रदाय निर्माण के नहीं, किसी आध्यात्मिक सम्बन्ध में नहीं, बल्कि केवल भौतिक दृष्टि से करना है। तुम लोग एक साथ मिलकर प्रचार-कार्य में लग जाओ।''[३]

१८९४ में बेलूड़ मठ में गुरुभाइयों को लिखे पत्र में स्वामीजी लिखते हैं – ''सबको एकत्र करो। संघबद्ध हो जाओ और संगठन चाहिये।'' स्वामी ब्रह्मानन्द जी को १८९५ में लिखित

पत्र में स्वामीजी लिखते हैं – ''एक संगठित समिति की आवश्यकता है। शशि घरेलू कार्यों की व्यवस्था करे। रुपया-पैसा तथा बाजार इत्यादि का भार सान्याल सम्भाले तथा शरत् सेक्रेटरी (सचिव) बने अर्थात् पत्राचार इत्यादि करता रहे।''[४]

संगठित होकर कार्य करने में सुविधा

संगठित होने का क्या प्रयोजन है? इस सम्बन्ध में स्वामीजी ने १८९४ में अपने एक पत्र में अत्यन्त संक्षेप में मुख्य बात कह दी है। मठ के गुरु-भाइयों के प्रति वे स्वामी रामकृष्णानन्द जी को पत्र में लिखते हैं – ''संघबद्ध शब्द का अर्थ है श्रमविभाग। सभी अपना-अपना कार्य करते हैं और सब कार्य मिलकर सुन्दर होता है।'' यहाँ स्वामीजी स्पष्ट रूप से व्याख्या करते हैं, जिसे कोई भी सहजता से समझ सकता है।

संगठित होकर कार्य करने में समस्या

संघबद्ध, संगठित होकर कार्य करने से क्या समस्याएँ या त्रुटियाँ आ सकती हैं, उसका भी स्वामीजी ने २६, अक्तूबर १८९६ के पत्र में उल्लेख किया है – ''भारत में संगठित होकर हमलोग जो कार्य करते हैं, वह दोष के बोझ से पंगु हो जाता है। कार्य सच्चे अर्थों में कार्य के रूप में लेना होगा। इसमें मित्रता अथवा 'मुँह देखी' नहीं होनी चाहिये। जिस पर यह उत्तरदायित्व होगा, वह रुपये का हिसाब-किताब सब ठीक रखेगा। ऐसाकि यदि किसी को दूसरे ही क्षण भूखों मरना पड़े, तब भी एक विभाग का पैसा दूसरे विभाग में खर्च नहीं करेगा। इसे ही कहते हैं व्यावसायिक सत्यता। उसके बाद चाहिये अदम्य उत्साह। जब जो करो, उस समय के लिये उसे ही भगवान की सेवा-पूजा समझो।''[५]

यह मानो श्रीरामकृष्ण की वाणी की प्रतिध्वनि है। उन्होंने बार-बार कहा है – सत्य वचन, सत्कर्म, सत्य-पालन कलियुग की तपस्या है। केवल सत्य को पकड़े रहने से ही ईश्वरप्राप्ति सम्भव है। इसके साथ ही स्वामीजी ने आलासिंगा को १९ नवम्बर, १८९४ को लिखा था – ''मैं चाहता हूँ कि हममें किसी प्रकार की कपटता, कोई छल न रहे, कोई दुष्टता न रहे। मैं सदैव प्रभु पर निर्भर रहा हूँ, सत्य पर निर्भर रहा हूँ, जो दिन के प्रकाश की भाँति उज्ज्वल है। ... सावधान रहो ! हमलोगों में कोई असत्य प्रवेश न करे। सत्य पर दृढ़ रहो। हमलोग अवश्य ही सफल होंगे।''[६]

आलासिंगा पेरुमल

आज्ञापालन : संगठिन होकर कार्य करने का प्रमुख गुण

संगठित होकर कार्य में लगने और उसमें सफल होने के लिये जिस प्रमुख गुण की आवश्यकता होती है, वह है आज्ञा-पालन। स्वामीजी १८९५ में स्वामी अखण्डानन्द को लिखते हैं – ''संघ-जीवन में प्रथम प्रयोजन है आज्ञापालन की। नहीं तो, जब इच्छा हुई, थोड़ा कुछ किया, उसके बाद कुछ नहीं किया, इससे कुछ नहीं होता। शान्तिपूर्वक धैर्य रूप से परिश्रम और अध्यवसाय चाहिए।'' ... स्वामीजी ने उत्साहवर्धन करते हुए ११, जुलाई, १८९७ को स्वामी शुद्धानन्द जी को लिखा – ''मैं चाहता हूँ कि मेरे सब बच्चे, मैं जितना बड़ा हो सकता था, उससे सौ गुना अधिक बड़े हों। तुम लोगों में से प्रत्येक को महान शक्तिशाली बनना होगा। मैं कहता हूँ कि अवश्य ही बनना होगा। आज्ञापालन, लक्ष्य के प्रति प्रेम तथा ध्येय को क्रियान्वित करने के लिये सदा प्रस्तुत रहना, इन्हीं तीनों के विद्यमान रहने पर कोई भी तुम्हें लक्ष्य से विचलित नहीं कर सकता।''[७]

आज्ञापालन की आवश्यकता

स्वामीजी २ मई, १८९५ को आज्ञापालन के उद्देश्य के सम्बन्ध में एक भक्त को लिखते हैं – ''सभी क्षेत्रों में आज्ञापालन की शिक्षा दो। अपने धार्मिक आस्था का त्याग मत करना। गुरुजनों की, बड़े लोगों की आज्ञा के विपरीत चलने से कभी भी शक्ति का केन्द्रीकरण नहीं हो सकता। ऐसी बिखरी हुई शक्ति को केन्द्रित नहीं करने से कोई भी महान कार्य नहीं हो सकता।''

टामस ने ऐ केम्पिस ईसानुसरण ग्रन्थ में आज्ञापालन के सम्बन्ध में लिखा है – ''स्वेच्छानुसार जीवन-यापन करने की अपेक्षा गुरुजनों के अधीन उनके आज्ञाकारी होकर रहना बहुत बड़ी बात है। ... तुम जहाँ भी क्यों न जाओ, गुरुजनों के अधीन विनम्र जीवन-यापन नहीं करने से कहीं भी शान्ति नहीं पा सकोगे। 'अन्यत्र स्थान पर जाने से शान्ति पाऊँगा', ऐसी कल्पना कर जिन लोगों ने स्थान का त्याग किया है,

वे लोग प्रभावित हुए हैं।''

सब प्रकार की सफलता का मूल

स्वामीजी एक वाक्य के द्वारा बहुत जोर देकर सब प्रकार की सफलता की मूल कुंजी को ८ अगस्त, १८९६ को आलासिंगा को लिखे पत्र में इंगित करते हैं। उसी समय उन्होंने आलासिंगा को मद्रास से ब्रह्मवादिन् पत्रिका प्रकाशित करने और संचालित करने के लिए बहुत उत्साहित किया था। वे इस पत्र में आलासिंगा को लिखते हैं – ''स्मरण रखो, पवित्रता और गुरु का नि:स्वार्थ भाव से आज्ञापालन सभी सिद्धियों का, सब प्रकार की सफलता का मूल है।''

कौन आज्ञा दे सकता है?

कौन आज्ञा दे सकता है और कैसे अपना निर्माण करेंगे, इस सम्बन्ध में भी स्वामीजी ने स्वामी अखण्डानन्द जी को १३ नवम्बर, १८९५ को लिखे पत्र में स्पष्ट निर्देश दिया है – ''जो आज्ञापालन करता जानता है, वही आज्ञा देना भी जानता है। पहले आदेश पालन करना सीखो। इन सब पाश्चात्य देशों में स्वाधीनता का भाव जैसा प्रबल है, आदेश पालन करने का भाव भी वैसा ही प्रबल है। ... महान उद्यम, महान साहस, महावीर्य और सबसे पहले आज्ञापालन, ये सब गुण व्यक्तिगत या राष्ट्रीय विकास के लिये एकमात्र उपाय हैं।[८]

इस प्रसंग में एल. कोलीन ने दी सुपीरीयर स हैन्डबुक में लिखा है – ''आज्ञा-पालन किसी भी धर्म-राज्य का महत्त्वपूर्ण और विशेष गुण है। यह उन लोगों के लिये आवश्यक है, जो लोग सत्तासीन हैं। विरोधाभास रूप से आप कहेंगे, राजा का प्रमुख कर्त्तव्य शासन करना है, आज्ञा-पालन करना नहीं। ठीक शासन करने के लिये यह आवश्यक नहीं कि वह स्वयं आज्ञा-पालन करने का प्रयास करे। प्रथम दृष्ट्या यह कितना भी विरोधाभासी प्रतीत हो, वस्तुत: अनुशीलन के भाव से ही सत्ताधिकारी अपने प्रशासनिक कार्यों हेतु सुरक्षा, समर्थन और शक्ति प्राप्त करते हैं।''[९]

स्वामीजी द्वारा उपर्युक्त विवेचित निर्देश व्यक्तिगत और संगठन, सबके लिए आचरणीय है। एक संस्थान का कार्य जैसे कई लोग संघबद्ध होकर करने का प्रयास कर रहे हैं, वैसे ही एक परिवार का कार्य भी कई लोग मिलकर कर रहे हैं। दोनों स्थानों पर ही एक आदर्श है। वह आदर्श जितना उच्चतर होता है, उतना ही व्यक्ति और समाज का जीवन उन्नत होता है और उसी उच्चतर जीवन या आदर्श के लक्ष्य तक पहुँचने के लिये स्वामीजी के सभी निर्देश दीपशिखा के समान हैं। व्यक्तिगत और संघ जीवन में जितना ही स्वामीजी के निर्देशों का पालन होगा, उतना ही आदर्श तक पहुँचना सरल होगा। ○○○

सन्दर्भ सूत्र – १. विवेकानन्द पत्रावली पृष्ठ ८२ **२.** वही, पृ. ९५ **३.** वही, ३/३३८-३९ **४.** वही, पृष्ठ २५१ **५.** वही, ३७० **६.** वही, पृष्ठ १३५ **७.** वही पृष्ठ ३६६ **८.** वही पृष्ठ. २२७ **९.** द सुपीरीयर्स हैन्ड बुक, एल. कोलीन, फर्गस मर्फी द्वारा अँग्रेजी अनुवाद, पृष्ठ ४६

जिसमें सीखने की इच्छा है, वही युवा है

लंका में युद्ध करते समय भगवान श्रीराम और लक्ष्मण को मेघनाद ने जब नागपाश में बाँध दिया, तब उसे काटने के लिए गरुड़जी आए। नागपाश काटने के बाद गरुड़जी को शंका हुई कि श्रीराम भगवान कैसे हो सकते हैं? जो एक नागपाश में बँध जायें और जिन्हें मेरी आवश्यकता पड़े। गरुड़जी इस शंका को दूर करने हेतु ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी ने उन्हें शिवजी के पास भेजा। शिवजी ने कहा कि एक युवा रामभक्त कागभुशुण्डीजी हैं, जो नील पर्वत पर झील के किनारे निवास कर रहे हैं तथा कुछ युवाभक्तों के साथ राम-चरित्र का गुणगान करते हैं, वही तुम्हारी इस शंका का निवारण करेंगे। गरुड़जी ने वहाँ पहुँचकर देखा कि कुछ वृद्ध पक्षी राम-चरित्र सुन रहे हैं। उनके मन में पुनः शंका हुई। शिवजी ने तो कहा था कि कुछ युवा वहाँ राम-चरित्र का पान कर रहे हैं, परन्तु यहाँ तो सब वृद्ध हैं।

गरुड़जी ने कागभुशुण्डीजी से पूछा कि एक शंका है। शिवजी ने कहा था कि आपके पास सब युवा राम-चरित्र सुन रहे हैं, परन्तु मुझे सब यहाँ वृद्ध और मरणासन्न दिख रहे हैं। कागभुशुण्डीजी ने कहा, जिसमें कुछ जानने की इच्छा हो, पूछने की जिज्ञासा हो, सीखने की दृढ़ इच्छाशक्ति हो और पुरुषार्थ के द्वारा कुछ भी प्राप्त करने का तेज हो, वह शरीर से वृद्ध होने पर भी युवा है। कोई शरीर से तरुण है और ये सारे गुण न हों, तो वही वृद्ध है।

युवा होने का अर्थ

स्वामी संवित् सोमगिरि

यौवन एक सर्वव्यापक तत्त्व है। वह प्रत्येक प्राणी में समय आने पर अभिव्यक्त होता है। प्रत्येक वनस्पति में, यहाँ तक कि तथाकथित जड़ कहे जानेवाले पर्वत, नदी, पृथ्वी, वायु सब में अपने इस यौवन को प्रकट करनेवाली एक शक्ति होती है। उन सबमें भी यौवन प्रकट होता है। इसलिए जब तक आप लोग समझेंगे नहीं कि हम युवा हैं और यौवन एक तत्त्व है, तब तक आपको आगे जो कुछ करना है, उसमें न्यूनता आ जायेगी। यौवन एक सर्वव्यापक तत्त्व है, जो यह समय आने पर कुत्ते, गधे, मच्छर में भी प्रकट होता है। इसलिये यह समझना होगा कि युवा-तत्त्व क्या है? यौवन क्या है? तरुणाई क्या है?

एक युवा कुत्ते की चाल में भी एक लयात्मक गति होती है। एक मच्छर भी जब युवावस्था में आता है, तो उसकी भिनभिनाहट में तारतम्य होता है, एक लय होता है। उसमें भी एक राग होता है। किन्तु जब मानव में यौवन प्रकट होता है, तो उसका तो कहना ही क्या ! एक युवा को देखते ही लगना चाहिए कि वह युवा है, चाहे वह लड़का हो या लड़की। इसलिए मैं आपको निवेदन करूँगा कि यौवन को ठीक से समझिये – आज से पन्द्रह वर्ष पूर्व मैं कैसा था ! आज जब मैंने युवावस्था में पदार्पण किया है, तब मुझमें शारीरिक स्तर पर, बुद्धि के स्तर पर, इन्द्रियों के स्तर पर, मन के स्तर पर, भावना के स्तर पर क्या-क्या परिवर्तन आ रहा है !

यदि आपने अपनी इस युवावस्था को सर्वव्यापक युवा-तत्त्व से नहीं जोड़ा, तो आपके अन्दर वह व्यापक शक्ति प्रकट नहीं होगी। आपके अन्दर वह विश्व-लय प्रकट नहीं होगा, आपकी भावना के अंदर उछाल नहीं आयेगा। इसलिए आपसे निवेदन करूँगा कि युवा-तत्त्व में छिपी अनन्त शक्ति को थोड़ा समझने का प्रयास करें।

वायु और युवा

हिमाच्छादित शिखरों के पार, घाटियों को पार करती हुई, सारे प्राणियों में, वनस्पतियों में प्रविष्ट होती हुई, नदी, नालों, मैदानों को पार करती हुई, सागर के वक्षस्थल पर उछलती हुई लहरों को उत्पन्न करती हुई, यह हवा सरसराती हुई चल रही है, यह समीर चल रहा है, यह अनिल चल रहा है। युवा को समझना है, तो वायु को समझना होगा, वसन्त की वायु को, ग्रीष्म की वायु को, शरद की वायु को, वर्षा ऋतु की वायु को, बादल के साथ खेल रही वायु को, हमारे रेगिस्तान में भतूले उठाती हुई वायु को समझना होगा। अगर वायु को समझ लिया, उसको जान लिया, तो आपको पता लगेगा, युवा किसको कहते हैं। वायु को उलट लोगे, तो क्या हो जाता है? युवा हो जाता है। क्या युवा अपने-आप को वायु जैसा समझ रहा है? युवा शब्द का अर्थ होता है, जो जोड़ता है। 'युज्' धातु से युवा शब्द बना है। 'तृ' धातु से तरुण शब्द बना है। जो तैरता है, तारता है, उछलता है, पार करता है, जोड़कर रखता है, जुड़ता है, जोड़ता है उसको युवा कहते हैं। इसलिए यौवन को समझना है, तो वायु पर अपना ध्यान केन्द्रित करना।

जीवन का मधुमास-युवावस्था

यौवन को समझना है, तो सागर के तट पर चले जाना। सागर कैसे गुनगुनाता है ! लहर पर लहर बनकर उछलता हुआ, तट पर टकराकर के बूँदों के रूप में बिखरता हुआ, गुनगुनाता हुआ, गाता हुआ, अपने अन्दर एक अगाध गहराई को लिए हुए सागर है। अपने अन्दर अनन्त विस्तार लिए हुए सागर है। यौवन को समझना है तो सागर के तट पर जाकर उसका ध्यान करना। उसको सुनना। उससे बातें करना। उसके साथ गुनगुनाना। यौवन को समझने हेतु वसन्त ऋतु के साथ थोड़ा सत्संग करना। वसन्त में हर पेड़-पौधे में, हर वनस्पति में, हर प्राणी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, की एक उमड़न होती है। आप अर्बुदाचल के अरण्य में चले जाएँ, तो वहाँ हर चट्टान में से एक रस निकलता है, हर टहनी में से रस टपकता है। इसे मधुमास कहते हैं। मानव में भी यह होता है, लेकिन मानव इसे समझ नहीं पाता है। इसलिए युवा को समझना हो, तो वसन्त को समझना। वसन्त को समझ लिया, तो आपको पता लगेगा कि मैं कैसी अद्‌भुत अवस्था से गुजर रहा हूँ। युवावस्था आपके जीवन का मधुमास है।

सभी प्राणी लय में नृत्य कर रहे हैं

सम्पूर्ण सृष्टि में सबसे श्रेष्ठ योनि है, तो वह मनुष्य की योनि है। सारा ब्रह्माण्ड लय में नाच रहा है। इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन, सब-पार्टिकल्स, यह गैलेक्सी सबमें एक लय है। शेर जब झपटता है, हिरण पर तब उसके सिमटने में, दहाड़ने में, उछलने में एक लय है और डर कर जब मृग भागता है, तो उसके डरने में और सिमट कर तेजी से उछल कर भागने में भी एक लय है। सारा ब्रह्माण्ड एक लय में नाच रहा है। लय वहीं होता है, जहाँ आनन्द होता है। फूल झड़ते हैं, तो लय में। पतझड़ होती है एक लय में, सागर उछलता है एक लय में। रश्मियों की उंगली थामकर जल ऊपर चढ़ता है, बादल बनता है, गरजता है, दामिनी दमकती है, रिमझिम करता पानी बरसता है, तो उसके बरसने में लय है। झरने के चलने में एक लय है। सर्वत्र एक लय है। सारे प्राणी एक लय में नाच रहे हैं। आनन्द में एक लय होता है। **आनन्दाद्धयेव खल्विमानि भूतानि जायन्ते आनन्देन जातानि जीवन्ति आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति।। (तैत्तिरीय उपनिषद ३.६)।** आनन्द के कारण सृष्टि बन रही है। क्योंकि हम जिसको भगवान कहते हैं, वह आनन्द स्वरूप है। आनन्द ही जगत् का निमित्त कारण है, आनन्द ही जगत् का उपादान कारण है। इसलिए सारी सृष्टि में आनन्द नृत्य कर रहा है, सारी सृष्टि लय में नाच रही है, हमको अभी समझ में नहीं आ रहा है।

संस्कृत भाषा का महत्त्व

संस्कृत भाषा देवभाषा है। सारी सृष्टि में ओंकार नाद गूँज रहा है। ओंकार में से सारे स्वर प्रकट होते हैं। स्वर मिल कर व्यंजन बनते हैं और सारे स्वर और व्यंजन मिल कर मन्त्र बनते हैं। सारे ब्रह्माण्ड में वेद के मंत्र गूँज रहे हैं। **अनन्ता वै वेदाः**। वेद मनुष्यकृत् नहीं हैं। मनुष्य को दिया गया है। इसलिए सारे वेद ब्रह्माण्ड में गूँज रहे हैं। यह देवभाषा है। देव इसी भाषा में संवाद करते हैं। हमें समझना पड़ेगा कि हमारी संस्कृति कैसी अद्भुत संस्कृति है ! इसीलिए संस्कृत भाषा सभी भाषाओं की जननी है। कुछ शब्द कहूँगा – मातृ शब्द-मदर बन गया। पितृ शब्द-फादर बन गया। भ्रातृ शब्द-ब्रदर बन गया। हजारों शब्द ऐसे हैं, जो लैटिन, फ्रेंच, जर्मन एवं हमारी प्रान्तीय भाषाओं में, संस्कृत भाषा से परिवर्तित हो गए, स्थानान्तरित हो गए, बदल गए, अपभ्रंश हो गये। संस्कृत का एक शब्द प्रचलित है ऋतम्। सारा ब्रह्माण्ड एक ऋतु के द्वारा धारित है, संचालित है। ऋतु के द्वारा उत्पन्न होता है, धारित होता है और लीन हो जाता है। वह ऋतम् शब्द रिदम् बन गया। ऋतम् शब्द रिद्म बन गया। रिद्म शब्द कहता हूँ, तो अंग्रेजी शब्द है। जैसे नाच रहे हैं तो रिद्म में नाच रहे हैं। गा रहे हैं तो रिद्म में गा रहे हैं। पर हमारे ऋषियों ने रिद्म शब्द का प्रयोग – शब्द में, रूप में, रस में, गंध में, स्पर्श में, चिन्तन में, भावना में सर्वत्र एक रिद्म है इस अर्थ में किया है। जिस अर्थ में आप रिद्म समझते हैं, इससे अधिक व्यापक अर्थ में रिद्म शब्द का प्रयोग किया गया है। सारे प्राणी रिद्म में हैं, लय में हैं, केवल मनुष्य बिना रिद्म के है। वह रिद्म में कैसे आये? वे कैसे मूर्ख लोग हैं, जो कहते हैं बन्दर की पूँछ घिस गई और आदमी बन गया, जो कहते हैं पानी में कोशिका प्रकट हुई, उससे सारी सृष्टि प्रकट हुई। ऐसा मान लेने पर ईश्वर सिद्ध नहीं होगा। पुनर्जन्म सिद्ध नहीं होगा। Law of conservation of energy समाप्त हो जायेगा।

गीता कहती है (अध्याय १०, श्लोक ६) सारी सृष्टि पहले मानसिक रूप से प्रकट हुई, लौकिक सृष्टि बहुत बाद में आयी। वह ऋषियों की संतान हैं, बन्दरों की संतान नहीं। ये मनुष्य बिना रिद्म नहीं रहे। जिसने मनुष्य को बनाया, उसने जीवन के विधान को, शास्त्र के विधान को, जीवन की कला को भी हमें दे दिया, सारे ज्ञान को दे दिया। सारी अपरा-विद्या, सारी पराविद्या, ब्रह्मविद्या हमें प्रदान कर दी। इसके द्वारा हम कामनापूर्ति करेंगे, तो हम लय में रहेंगे। कोई युवा है और उसमें कामना (पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा) नहीं है, तो वह शंकराचार्य है या शुकदेव है या विवेकानन्द है। कामनापूर्ति कैसे की जाए? शास्त्र बताते हैं कि सृष्टि-चक्र गीता ३-१०-१६ के द्वारा यदि आप कामनापूर्ति करेंगे, तो आपके चित्त में तरावट आयेगी। आपके चित्त में सौष्ठव आयेगा। चित्त में शुद्धि आयेगी। चित्त में शान्ति आयेगी, पर कामनापूर्ति करना मात्र मनुष्य का तात्पर्य नहीं है। कामनापूर्ति करना हमारी संस्कृति ने लक्ष्य नहीं बनाया, यह कभी हमारा परम लक्ष्य नहीं रहा। हमने कामना को

कुचलने, दबाने, विकृत करने के लिए भी कभी नहीं कहा। कामना को लेकर स्वर्ग जाने तक अंतिम लक्ष्य नहीं था। पर यदि कामनापूर्ति करना हो, तो शास्त्र के अनुसार, विश्व-नियम के अनुसार करने का विधान है। इसके लिये दृष्टि चाहिए।

जब मैं लड़कों के स्कूल, कॉलेज में जाता हूँ, तो प्रश्न पूछता हूँ कि पुरुष-स्त्री में बड़ा कौन है? अभी आपने संकेत दिया था हमारी संस्कृति, मातृशक्ति की पूजा करने वाली संस्कृति है। जब तक आपकी दृष्टि जगत् के प्रति ठीक नहीं है, प्राणी के प्रति ठीक नहीं है, वनस्पति के प्रति ठीक नहीं है, मानव के प्रति ठीक नहीं है और मानव में स्त्री के प्रति ठीक नहीं है, तो आपकी कामनापूर्ति गलत हो जायेगी। आपका चित्त कलुषित हो जायेगा। कर्तव्यपूर्ति की तो बात बिल्कुल अलग है। इसलिए कामनापूर्ति के लिये गृहस्थ में जाते हैं और उस समय प्रण करते हैं, सप्तपदी के मंत्र बोलते हैं।

हमारा कर्तव्य, हमारी कर्तव्यपरायण-संस्कृति, ऋण-बोध को लेकर चलनेवाली संस्कृति बढ़ेगी, तो युवा-शक्ति को लेकर बढ़ेगी, युवा-शक्ति-गिरेगी, तो यह भी गिरेगी। यदि युवा संयत है, उसके जीवन का एक आदर्श है। यदि वह यौवन तत्त्व को समझता है, अपने जीवन में आयी हुई युवावस्था को समझता है, तो वह एक उछाल भरेगा, उस शक्ति का आह्वान करेगा, अपने लक्ष्य को तय करेगा।

सार बात यह है कि आपके हृदय की गहराई में वह पूर्णता छिपी हुई है, वह आनन्द छिपा हुआ है, वह ज्ञान छिपा हुआ है, वह स्वातन्त्र्य छुपा हुआ है। आपकी जिजीविषा में, जिज्ञासा में, सर्जनेच्छा में, स्वातन्त्र्य-इच्छा में, सारे बीज आपके हृदय की गहराई में छिपे हुए हैं। इन्हें आपको प्रकट करना है। इन्हें पूर्णता की ओर ले जाना है। इसलिए सर्वोत्तम प्रेरणा यह है कि मेरे जीवन में युवावस्था आयी है तो मैं अब इस विश्व को बनानेवाले के साथ में, विश्व-नियम को समझकर उसके साथ में क्रीड़ा कर सकता हूँ, दौड़ सकता हूँ, नाच सकता हूँ। युवा ही धर्मशील हो सकता है। इसलिए बन्धुओ ! युवावस्था आपके जीवन का सुन्दरतम समय है। आपके जीवन का सबसे खतरनाक समय भी है। यदि आपने जीवन की दृष्टि ठीक नहीं की, अपने जगत् के प्रति, अपने आपके प्रति, जगदीश्वर के प्रति, संस्कृति के प्रति, धर्म के प्रति, सुख व सौन्दर्य-आनन्द के प्रति, जीव-जगत्, ईश्वर, नारी, पर्यावरण आदि के प्रति आपकी अवधारणा स्पष्ट नहीं है, जीवन, मृत्यु, धर्म, पूर्णता के प्रति आपकी दृष्टि सूक्ष्म व पूर्ण नहीं है, तो आपके अन्दर चिर-यौवन प्रकट नहीं होगा। चिर-यौवन प्रकट होने के लिए मनुष्य का जीवन और मनुष्य जीवन में श्रेष्ठ जीवन, युवा का है। इसलिए हमारी संस्कृति कहती है, हमको यह दुर्लभ मनुष्य का जीवन मिला है। ये ऋण हैं हमारे ऊपर – देव-ऋण, ऋषि-ऋण, पितृ-ऋण, मनुष्य-ऋण और भूत-ऋण। मनन करना जाकर इस पर। इसके अन्तर्गत आपका देश, आपकी भाषा, आपकी संस्कृति, पूरा पर्यावरण, पूरी मानवता आ जाती है।

स्वयं को सच्चाई से स्वीकार करो

We are ecofriendly ये नारे चल रहे हैं। हम तो आदर और कृतज्ञतापूर्वक पर्यावरण को अपनाते हैं। पर्यावरण बहुत बड़ा विद्यालय है। जैसे हमारा अन्त:करण बहुत बड़ा विद्यालय है, उसी प्रकार पर्यावरण एक विद्यालय है। जब हम शिक्षा-दर्शन की बात करते हैं, तो गुरु एक सर्वव्यापक तत्त्व है। एकलव्य को ज्ञान मिट्टी की मूर्ति से प्राप्त हुआ था, अपने अन्दर से प्राप्त हुआ था या द्रोणाचार्य ने उसे दिया था, जाकर चिन्तन करना। इसलिए ज्ञान के क्षेत्र में बैठकर हम घण्टों चिन्तन करते हैं। जो तन्त्र हम पर लाद दिया गया है, इसको सहन करने की आवश्यकता कहाँ है? इसको हम सहसा उठा करके फेंक भी नहीं सकते। वह समय भी आयेगा, जब इसको उठा कर फेंक दिया जायेगा। आप क्या कर रहे हैं? एक संगठन की इकाई बन कर क्या कर रहे हैं और व्यक्तिगत रूप से अपने घर में क्या कर रहे हैं? क्या आपकी दिनचर्या ठीक है? क्या आप व्यसनों से मुक्त हैं? क्या आपने अपने जीवन के लक्ष्य को निश्चित कर लिया है? इसलिए हमारी संस्कृति कहती है, स्वयं को सच्चाई से स्वीकार करो और सच्चाई से स्वीकार करके आगे बढ़ने के लिए छलांग लगाओ। हमारे यहाँ कहा गया है कि **'सा विद्या या विमुक्तये'।** इसको बहुत सुना होगा, किन्तु क्या कभी चिन्तन किया? विद्या वह होती है, जो आपको मुक्त कर देती है, पूर्ण बना देती है। हमारी संस्कृति इससे आगे बढ़कर कहती है – **'या या विद्या, सा सा विमुक्तये'** – जो-जो विद्या है, वह आपको मुक्त कर देगी। यह किसके द्वारा सम्भव होगा? जब आपकी जवानी की दृष्टि ठीक होगी। चाहे आप लोहार का काम करें, चाहे जूते सीने का काम करें, चाहे हल चलायें या आप अध्यापक बनें, पर आप उस पूर्णता को, उस आनन्द को प्राप्त कर सकते हैं, जो एक पृथ्वी का सम्राट समस्त भोगों से प्राप्त करता है,

उससे कहीं अधिक आनन्द आप सत्कर्म व स्वधर्म के द्वारा ईश्वर की अर्चना करके प्राप्त कर सकते हैं। यह परिपूर्ण जीवन-दर्शन है। इसलिए कलाम साहब ने कहा Ignite the mind – मन को प्रज्वलित करो। लेकिन सावधान रहना। मन को इतना Ignite मत कर देना कि इसकी पूर्ति करते समय बाधा आये और बाधा पार करने में असफल होने पर विषाद में चले जाएँ। युवा कभी विषाद में नहीं जा सकता। यदि उसके पास यह जीवन-दर्शन है, तो सूखी रोटी खाकर, चने चबाकर अपने अन्दर जो उमड़-घुमड़कर आनन्द प्रकट हो रहा है, उसको बाँट सकता है। युवा वह है, जो सबको प्यार कर सकता है। उसकी बाँहों में इतनी ताकत है कि सारी समष्टि को अपनी बाँहों में समा सकता है। इसलिए अपने यौवन को समझ लो, अपने कर्तव्य-बोध को समझ लो। वह भाई ही क्या जो अपने सामने ही अपनी बहन पर कुदृष्टि डालने वाले को चुपचाप देखता रहे। वह मित्र ही क्या, जिसके रहते मित्र की बहन पर कोई कुदृष्टि डाल दे। हमारी माँ के प्रति कुदृष्टि डाल दे और हम चुप रहें ! आज तो हमारी भारतमाता को नोचने के लिए चारों ओर आसुरी शक्तियाँ काम कर रही हैं, वैश्विक, पैशाचिक, अपसांस्कृतिक शक्तियाँ हमारे धर्म पर आक्रमण कर रही हैं और हमारा खून नहीं खौल रहा है। इसका अर्थ यह है कि आपने अपनी शक्ति का आह्वान नहीं किया है। यदि आप में यौवन है और हनुमान को आदर्श माना है तो ओलम्पिक खेलों में गोल्ड मेडल की झड़ी लग जानी चाहिए। हर छलांग में गोल्ड मैडल, कराटे में गोल्ड मैडल, फुटबॉल में गोल्ड मैडल। ऐसा क्यों नहीं होता? क्योंकि हमारी सोच, दृष्टि, साधना, उपासना सब एकांगी हो गयी है। हनुमान के पास बैठकर युवा झुनझुने बजा रहे हैं। हर हनुमान मन्दिर में अखाड़े का, कर्राटे का, संस्कृति शिक्षण का, संगीत-विद्या सीखने का स्थान होना चाहिए। ऐसे अपने इष्ट से जुड़कर, महापुरुष से जुड़कर, अपने आदर्श से जुड़कर, अपने शास्त्र और संस्कृति से जुड़कर अपना विकास करें। आपके ऊपर एक दायित्व है, उसका ठीक से निर्वाह करें। ❍❍❍

सनातन संदेश जनवरी २०२० के अंक से साभार

कविता

वीर विवेकानन्द विश्वगुरु

डॉ. ओमप्रकाश वर्मा

वीर विवेकानन्द विश्वगुरु, तुम ही सच्चितसुख-आधार ।
तुम वीरेश्वर तुम शिवशंकर, तुम ही ज्ञान-भक्ति-आगार ।।
बोधरूप तुम नित्य निरंजन, विमल भक्ति तुममें साकार ।
मोह निशा को दूर भगाकर, जीवन में करते उजियार ।।
जगतताप से दुखी जनों का, हरते हो प्रभु दुख का भार ।
करुणाविगलित हृदयवान तुम, सदा निरत तुम प्रेम-प्रसार ।।
तुम ही ज्ञानसूर्य हो भगवन, आये हो तुम जग-उद्धार ।
अपनी ज्ञानप्रभा से प्रभु तुम, हरो सकल जग का अँधियार ।।

कविता

इस महान देश को नया बनाओ रे

बालकवि बैरागी

नौजवान आओ रे ! नौजवान गाओ रे !
लो कदम मिलाओ रे ! लो कदम बढ़ाओ रे !!
ऐ वतन के नौजवान, इस चमन के बागवान,
एक साथ बढ़ चलो, मुश्किलों से लड़ चलो,
इस महान देश को नया बनाओ रे !
नौजवान आओ रे ! नौजवान गाओ रे !
धर्म की दुहाइयाँ, प्रान्त की जुदाइयाँ,
भाषा की लड़ाइयाँ, पाट दो ए खाइयाँ,
एक माँ के लाल एक निशाँ उठाओ रे !
नौजवान आओ रे ! नौजवान गाओ रे !
एक बनो, नेक बनो, खुद की भाग्य रेख बनो,
सद्गुणों के तुम हो लाल, तुमसे यह जगत निहाल,
शान्ति के लिए जहाँ को तुम जगाओ रे !
नौजवान आओ रे ! नौजवान गाओ रे !
माँ निहारती तुम्हें, माँ पुकारती तुम्हें,
श्रम के गीत गाते जाओ, हँसते मुस्कुराते जाओ,
कोटि कंठ एकता के गान गाओ रे !
नौजवान आओ रे ! नौजवान गाओ रे !

बदलते परिदृश्य में युवाओं का चरित्र-निर्माण

डॉ. कल्पना मिश्रा, सहायक प्राध्यापक हिन्दी

शासकीय दूधाधारी बजरंग महिला महाविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

युवा राष्ट्र की शक्ति है और युवाओं के चरित्र से ही राष्ट्र के चरित्र का गठन होता है। वृद्ध राष्ट्र के अतीत के निर्माता रहे हैं और बच्चे देश के भविष्य के सर्जक होंगे, पर युवा हमारा आज है और ये ही विश्व में भारत का परचम लहराएँगे। चरित्र शब्द का अर्थ बहुत व्यापक है। यह केवल हमारे आन्तरिक व्यक्तित्व ही नहीं, हमारे चिन्तन, दर्शन, विचार और व्यवहार का प्रतीक है। अत: युवा जैसा सोचेंगे और प्रयास करेंगे, वैसा ही उनका चरित्र निर्मित होगा। अतीत में इस देश में स्वामी विवेकानन्द जैसे युवाओं ने पूरे विश्व में भारत के ज्ञान और चिन्तन को फैलाया। इसके लिए कठिन तपस्या और सतत प्रयास की आवश्यकता होती है। हर राष्ट्र अपने नागरिकों से पहचाना जाता है, जैसेकि जापान के लोग अनुशासित हैं और यही छवि जापान की भी है। पाश्चात्य के लोग भौतिकतावादी हैं और यही हम अमेरिका और यूरोप के बारे में भी सोचते हैं। भारत अपने अध्यात्म, शान्ति और ज्ञान के लिए प्रसिद्ध रहा है।

प्रत्येक विचार से चरित्र-निर्माण

आज के युवा भी हर क्षेत्र में नए कीर्तिमान गढ़ रहे हैं, चाहे वह खेल हो, ज्ञान-विज्ञान हो या मनोरंजन का क्षेत्र। आज के युवा पुरानी पीढ़ी से कहीं अधिक वैज्ञानिक सोच और तकनीकी ज्ञान रखते हैं। ये देश के लिए जितना लाभकर है, उतना ही यदि सजग न रहा जाये, तो हानिकर भी है। प्रत्येक अनुभव और परिस्थिति को मात्र विज्ञान के सहारे समझा और सुलझाया नहीं जा सकता, इसका ये अर्थ कदापि नहीं है कि हम अवैज्ञानिकता का दामन थाम लें। इसी तरह केवल तकनीकी ज्ञान से हम मानवता के लिए नए आदर्श नहीं खड़े कर सकते और तब हमें आवश्यकता होती है दया, प्रेम, करुणा, सत्य, नैतिकता और व्यावहारिकता की और इन्हीं सब मानवीय मूल्यों से गठित होता है हमारा चरित्र। एक महान चरित्र का निर्माण, अच्छे-अच्छे विचारों से होता है। अत: हमारा हर कार्य विचारपूर्ण होना चाहिए।

स्वस्थ तन में ही स्वस्थ मन बसता है। आजकल जब हम शारीरिक क्रिया-कलाप कम कर रहे हैं और मोबाइल और कम्प्यूटर के सामने अधिक समय व्यतीत कर रहे हैं, ऐसे में हमारा शरीर बहुत शीघ्र रोगों की चपेट में आ रहा है। युवा शीघ्र ही वृद्ध जैसे हो रहे हैं। उनकी दृष्टि जल्दी खराब हो रही है और अल्पायु में ही सबको चश्में चढ़ रहे हैं। भारत को डाइबिटिज की राजधानी कहा जाने लगा है, PCOS महिलाओं की एक सामान्य समस्या हो गई है और अधिकांश युवा मोटापे से ग्रस्त हो रहे हैं, ऐसी ही कई बीमारियाँ हैं। डराना मेरा उद्देश्य नहीं है, बल्कि यह बताना चाहती हूँ कि जब हमारा तन ही स्वस्थ नहीं रहेगा, तो हमारा मन कैसे हमारे नियन्त्रण में रहेगा। सोशल मीडिया में जिस मात्रा में अश्लीलता और व्यर्थ की चीजें परोसी जा रही हैं, इससे युवा मन से भी रुग्ण हो रहे हैं। भारत में ब्रह्मचर्य आश्रम की स्थापना की गई थी, जिसमें केवल अध्ययन, कौशल विकास और नैतिक मूल्य विकसित किये जाते थे। बाद में गृहस्थ आश्रम में पहुँचने पर वह गृहस्थी की सभी आवश्यक बातें जान जाता था। अब ये सभी आश्रम लगभग खंडित हो चुके हैं, जो एक चिन्तनीय विषय है।

हमारे सत्कर्म ही हमारे यश का कारण बनते हैं। अब्राहम लिंकन ने कहा है – चरित्र वृक्ष है और प्रतिष्ठा उसकी छाया। अत: सदैव चरित्र को प्राथमिकता देनी चाहिए, शेष वस्तुएँ गौण हैं।

मनुष्य का चरित्र वह वस्त्र है, जो विचारों के धागों से बनता है। जेम्स एलन का यह कथन हमें चेतावनी देता है कि हमेशा अपने विचारों के धागों को सुलझाकर रखना चाहिए।

जीवन का लक्ष्य अवश्य बनाएँ

स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं को चरित्र-निर्माण की ओर प्रेरित करते हुए कहा है कि प्रत्येक मनुष्य जन्म से ही दैवीय गुणों से परिपूर्ण होता है। ये गुण सत्य, निष्ठा, समर्पण, साहस एवं विश्वास से जाग्रत होते हैं। इनको अपने आचरण में लाने से व्यक्ति महान एवं चरित्रवान बन सकता है। मनुष्य को महान बनने के लिए संदेह, ईर्ष्या एवं द्वेष छोड़ना होगा। स्वामीजी के अनुसार युवा किसी भी देश की सबसे बहुमूल्य सम्पत्ति होता है। उन्होंने युवाओं को अनन्त ऊर्जा का स्रोत बताया है। उन्होंने कहा है कि अगर युवाओं की उन्नत ऊर्जा को सही दिशा प्रदान कर दी जाए तो राष्ट्र के विकास को नए आयाम मिल सकते हैं। स्वामीजी कहा करते थे कि जिसके जीवन में ध्येय नहीं है, जिसके जीवन का कोई लक्ष्य नहीं है, उसका जीवन व्यर्थ है। लेकिन हमें एक बात का ध्यान रखना चाहिए कि हमारे लक्ष्य एवं कार्यों के पीछे शुभ उद्देश्य होना चाहिए।

चरित्र-निर्माण के पाँच सूत्र

स्वामी विवेकानन्दजी ने युवा वर्ग को चरित्र निर्माण के ५ सूत्र दिए – आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, आत्मज्ञान, आत्मसंयम और आत्मत्याग। उपर्युक्त ५ तत्त्वों के अनुशीलन से व्यक्ति स्वयं के व्यक्तित्व तथा देश और समाज का पुनर्निर्माण कर सकता है। जिसने निश्चय कर लिया, उसके लिए केवल करना शेष रह जाता है।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा था कि जीवन में एक ही लक्ष्य साधो और दिन-रात उस लक्ष्य के बारे में सोचो और फिर उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए जुट जाओ। हमें किसी भी परिस्थिति में अपने लक्ष्य से भटकना नहीं चाहिए।

युवाओं से मेरा आग्रह है कि आप ही भारत हैं और भारत की ओर सारा संसार बड़ी आशा से देख रहा है। अत: स्वयं का तनिक मूल्यांकन कीजिये, किसी भेड़चाल का हिस्सा मत बनिए बल्कि **'अप्प दीपो भव'** की तर्ज पर अपना मार्ग स्वयं आलोकित कीजिये।

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष जैसे चारों पुरुषार्थ को हमने समान महत्त्व दिया था, पर अब केवल और केवल अर्थोपार्जन को ही हमने जीवन का उद्देश्य बना लिया है। समाज में ज्ञानियों को कम और धनिकों को अधिक सम्मान दिया जा रहा है और आज युवाओं ने इसे ही अपना उद्देश्य बना लिया है। मनुस्मृति में कहा गया है कि –

वृत्त यत्नेन संरक्षेत् चित्तमायाति याति च।
अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्तस्तु हतो हतः।।

अर्थात् चरित्र की प्रयत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए, धन तो आता-जाता रहता है। धन के नष्ट हो जाने से व्यक्ति नष्ट नहीं होता, पर चरित्र के नष्ट हो जाने से वह मरे हुए के समान है।

चरित्र निर्माण का अर्थ है, स्वयं को अनुशासित, सुसंगठित और व्यवस्थित बनाना। परन्तु मैं इसमें एक और बिन्दु जोड़ना चाहूँगी कि इसमें लक्ष्य की पवित्रता भी होनी चाहिए।

मैं स्पष्ट करना चाहूँगी कि सभी युवा ऐसे नहीं हैं, बल्कि कुछ युवा तो आज भी समाज सेवा और राष्ट्रप्रेम हेतु समर्पित हैं। इनमें हमारे राष्ट्र के वीर सैनिकों का नाम अवश्य लिया जाना चाहिए, जो वीरतापूर्वक सभी सुखों का त्याग करके अनुशासित रहते हुए देश की रक्षा कर रहे हैं। वास्तव में देश का हर युवा बहुमूल्य है। चाहे वह जो भी काम कर रहा हो, उसका हर कार्य राष्ट्र-निर्माण में सहभागी है। किन्तु कुछ युवा दिग्भ्रमित और कुछ उद्देश्यहीन भी हैं। कुछ हैं, जो बहुत अध्ययन के बाद भी मूल्यों से दूर हैं। हमारे जीवन-मूल्य ही हमें श्रेष्ठ मानव बनाते हैं। आज का युवा शीघ्र क्रोधित हो जाता है। क्रोधित होकर हम वातावरण और परिस्थिति को और बिगाड़ देते हैं। यदि हम शान्तचित्त होकर समाधान खोजें, तो हर समस्या का समाधान मिल सकता है।

एक अच्छी बात जो आजकल युवाओं में देखने मिलती है, वह है उनका शारीरिक स्वास्थ्य – फिटनेस के प्रति जागरुकता। किन्तु जब पता चलता है कि उनका स्वास्थ्य और सुगठित सुडौल काया केवल दिखाने के लिए है और कई प्रकार के पाउडर और हेल्थ ड्रिंक से अन्दर उनकी शारीरिक संरचना खराब हो रही है और इसका असर उनके जीवन पर पड़ रहा है, तो बड़ी निराशा होती है। योग और

व्यायाम से शरीर को सुडौल बनाने में कोई हानि नहीं है, पर यदि ये एक सनक बन जाए और घातक हो जाए, तब अवश्य इसे रोक देना चाहिए। ऐसे ही कुछ क्षेत्रों में युवाओं के द्वारा नशीले पदार्थ के व्यसन की खबर पढ़कर मन व्याकुल हो जाता है, युवाओं को तो जिज्ञासु और ज्ञानपिपासु होना चाहिए, उन्हें अपने राष्ट्र के आदर्शों का अनुगमन करना चाहिए और भक्ति और कर्त्तव्य का नशा करना चाहिए।

युवा स्वयं से पूछें

नए आविष्कार की ओर उन्मुख होना स्वागतेय है, पर अपने प्राचीन ज्ञान से मुँह फेरना क्या सही है? क्या पाश्चात्य का अन्धानुकरण सही है? क्या भारतीय भोजन की बजाय फास्टफूड खाकर बीमार होना सही है? क्या तीव्र गति से गाड़ियाँ दौड़ाकर दुर्घटना का शिकार होना उचित है? क्या शास्त्रीय संगीत को त्यागकर डीजे की धुन पर लोगों की हृदयगति बढ़ाना हितकर है? क्या केवल डिग्रियाँ प्राप्त करना हमारा उद्देश्य है या हमें ज्ञान भी चाहिए? अन्य बहुत से प्रश्न हैं, जो मैं निवेदन करूँगी कि युवा स्वयं से उसका उत्तर पूछें।

मनोरंजन का हमारा अधिकार है, पर मन कैसा रंजन करे, ये हमारे नियन्त्रण में होना चाहिए। अध्यात्म और धार्मिक उन्माद में अन्तर है, इसे समझना होगा। सबको सम्मान मिले, सभी का हित हो, सभी सुखपूर्वक निवास करें, ऐसी भावना सच्चरित्रता का प्रमाण है। कई वाद तो आज विवाद का कारण बन गए हैं और युवाओं को बरगलाकर राष्ट्र के विकास में बाधा उत्पन्न कर रहे हैं, हमें अपने विवेकानुसार सत्य और अहिंसा का मार्ग चुनना चाहिए, विवेक का निर्माण, विवेक का जागरण चरित्र-निर्माण के समानान्तर होता है। ○○○

नियमित व्यायाम के बिना शरीर कभी ठीक नहीं रहता है। पहला लाभ है स्वास्थ्य।

हममें से निन्नानबे प्रतिशत लोग ठीक से साँस भी नहीं ले पाते हैं। हम अपने फेफड़ों को पर्याप्त फुलाते नहीं है।... नियमित श्वास लेने से शरीर शुद्ध हो जाता है।

प्रथम पुष्टिकर उत्तम भोजन से शरीर को बलिष्ठ करना होगा, तभी तो मन का बल बढ़ेगा। मन तो शरीर का ही सूक्ष्म अंश है।

– स्वामी विवेकानन्द

कविता

युवा संन्यासी विवेकानन्द

सुमित ओरछा

जब शस्य श्यामला वसुन्धरा का गौरवज्ञान शशांकित था।
दुनिया के मानचित्र पर जब पश्चिम का वैभव अंकित था।।
हम देश महज पाखण्डों के यह तब दुनिया को लगता था।
हम अन्धभक्त हैं पंडों के यह तब दुनिया को लगता था ।।
वे कहते थे कि भारत में है तर्क युक्त कोई ज्ञान नहीं ।
हम सब मूरख अज्ञानी हैं कोई धर्म नहीं विज्ञान नहीं ।।
तत्समय हुआ सम्मेलन फिर सब धर्मों की परिपाटी का ।
जिसमें पहुँचा एक युवा संत भी इस भारत की माटी का ।।
जिसके कुछ शब्दों को सुनकर सभा समूची मौन हुई ।
सब मान गए उस ज्ञानी से तो सबकी बुद्धि गौण हुई ।।
सब धर्मों को आदर देते वो बोले मधुरिम वाणी में ।
भारत है उच्च हिमालय में भारत गंगा के पानी में।।
भारत का चिन्तन कहता है कि सारा विश्व हमारा है ।
भारत ने ही तो दुनिया की हर संस्कृति को स्वीकारा है ।।
अतिपुरातन शाश्वत जग में, इसी देश की गाथा है ।
सभी श्रेष्ठ हैं धर्म देश, पर माँ बस भारत माता है ।।
एक शून्य में क्या विराटता यह उन्होंने सिद्ध किया ।
इसी बात ने उनके सन्मुख दुनिया को करबद्ध किया ।।
उस धर्म सभा में सबने था विस्तार बताया धर्मों का।
उस राष्ट्र संत ने भारत को आधार बताया धर्मों का ।।
हम जीत गए थे धर्म सभा पर नहीं किसी की हार हुई ।
उस दिन तो सारी दुनिया में भारत माँ की जयकार हुई।।
भारत की यशोपताका के नवगीत बने नव छंद बने ।
वे युवा संत संन्यासी थे दुनिया के विवेकानन्द बने ।।
लक्ष्य बनाकर साहस से हम सबको बढ़ना सिखलाया ।
विघ्नों से या बाधाओं से हिम्मत से लड़ना सिखलाया ।।
वे कहते थे कि निर्धन की सेवा ही कर्म हमारा हो ।
इस शस्य श्यामला भारत की सेवा ही धर्म हमारा हो ।।
हममें अतुलित बल साहस है हम हर मंजिल को पाएँगे ।
भारत माता की जय करने हम व्योम व्योम में छाएँगे ।।
वे अन्धकार से लड़ने को युवकों के मन का द्वन्द बने ।।
वे युवा संत संन्यासी थे दुनिया के विवेकानन्द बने ।।

युवावस्था : साधना की सर्वश्रेष्ठ अवस्था

स्वामी ब्रह्मेशानन्द

रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

युवावस्था बड़ी महत्त्वपूर्ण अवस्था है। यही वह अवस्था है, जब व्यक्ति अपने जीवन के निर्धारित लक्ष्य की ओर दृढ़ संकल्प और पुरुषार्थ के साथ अग्रसर होता है। कठोपनिषद में उल्लिखित नचिकेता के जीवन की घटना सर्वविदित है। नचिकेता ने किशोरावस्था में यमराज से महत्त्वपूर्ण वरदान प्राप्त किये थे और विषयों के प्रति आकर्षित न होकर आत्मज्ञान का वरण किया था। यही वह अवस्था है, जब बालक बाल्यावस्था को समाप्त कर यौवन की देहली पर खड़ा होता है। अब वह बालवत् मूढ़ नहीं होता, उसकी बुद्धि का प्रथम विकास हो चुका होता है तथा यौवन की उच्छृंखलता का आगमन नहीं हुआ होता है। उसका मन तरोताजा, पवित्र, तेजपूर्ण और सजग होता है। व्यक्ति के जीवन का यह अन्तरिम काल, जब वह बाल्यावस्था को त्याग कर यौवन के पूर्ण विकास की ओर अग्रसर होता है, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होता है। अधिकांश लोगों की जीवन की दिशा इसी काल में निर्धारित हो जाती है। नवीनता का इच्छुक एवं जिज्ञासु, विकासोन्मुख मन, इस वय में भली या बुरी, सांसारिक अथवा आध्यात्मिक जिस दिशा में मुड़ता है, वही उसके जीवन की दिशा बन जाती है। यही वह आयु है, जब व्यक्ति पहली बार, स्वतन्त्र चिन्तन करना प्रारम्भ करता है। आध्यात्मिक दृष्टि से तो यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है ही। सौभाग्य से यदि इस आयु में किसी युवक को सत्संग प्राप्त हो जाये, तो उसके उत्तम चरित्रवान होने में कोई संशय नहीं रहता।

यह उम्र खतरनाक भी है। बलवान इन्द्रियाँ बाह्य प्रलोभनों के कारण मन को अधोगामी भी इसी कोमल-अवस्था में कर डालती हैं। कुसंग न जाने कितने प्रतिभावान् युवकों को इसी उम्र में नष्ट कर डालता है। अत: सभी माता-पिताओं का यह कर्त्तव्य है कि इस उम्र में अपनी सन्तानों को सही मार्ग-दर्शन एवं सत्संग प्रदान करने का प्रयत्न करें तथा इस बात का विशेष ध्यान रखें कि वे कुसंग में न पड़ जायें।

यमराज और नचिकेता की कहानी के अतिरिक्त प्रत्यक्षत: भी हम महापुरुषों एवं आचार्यों के जीवन में पूर्वोक्त सत्य के प्रमाण स्वरूप अनेक दृष्टान्त पाते हैं। श्रीरामकृष्ण के पास युवा व वृद्ध दोनों ही प्रकार के जिज्ञासु आते थे, लेकिन उन्होंने अपने अंतरंगों के रूप में ऐसे युवकों को ही चुना, जिनकी उम्र १४ से १८ वर्ष के बीच थी। श्रीरामकृष्ण कहते थे कि इस कम आयु में मन बिखरा नहीं होता। वह सांसारिक आकर्षणों एवं दायित्वों आदि के द्वारा विक्षिप्त नहीं हुआ होता है। सांसारिक लोगों का मन बिखरे हुए सरसों के दानों की तरह होता है, जिनको इकट्ठा करना अत्यन्त कठिन होता है। विवाह होने पर सारा मन पति या पत्नी में चला जाता है। सन्तान होने पर वह सन्तान में जाकर और बँट जाता है। फिर ईश्वर में लगाने के लिये बचता ही कितना है? यही कारण है कि सभी आचार्य कम आयु में ही साधना का आरम्भ करने का सुझाव देते हैं। एक बार कौमार अवस्था के कोमल मन पर यदि शुभ चिन्तन और शुभ आचरण की छाप पड़ जाये, तो वह फिर स्थायी हो जाती है। शुभ आदतों का निर्माण कम उम्र में बहुत आसान होता है। उम्र बढ़ने के साथ-साथ यह कार्य कठिन-से-कठिनतर होता जाता है। स्वामी ब्रह्मानन्द जी का कथन है कि तीस वर्ष की उम्र तक जितनी साधना करनी हो; कर लेनी चाहिए, उसके बाद यह सम्भव नहीं है। अगर तीस वर्ष की आयु तक साधना समाप्त करने की बात स्वीकार की जाये, तो यह युक्ति तो यही है कि उसका प्रारम्भ कौमारावस्था में ही कर देना चाहिए। खेल-कूद के क्षेत्र में भी प्राय: यह देखा जाता है कि खिलाड़ी ३०-३५ वर्ष तक पहुँचते-पहुँचते अपनी क्षमता खोने लगता है। भले ही मानसिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में ऐसी बात न हो, पर यह तो सत्य ही है कि कौमारावस्था ही साधना की सर्वश्रेष्ठ उम्र है। ○○○

युवकों की प्रेरिका : भगिनी निवेदिता

स्वामी तन्निष्ठानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

फोन न. ९४२०८५३२२२ <tannishthananda@gmail.com>

भारतवर्ष की युवाशक्ति को भ्रमित होते देखकर सन् १९८५ में भारत सरकार को ऐसा लगा कि हमारे युवकों के सामने सच्चा आदर्श नहीं हैं। ऐसा चरित्र जिसे देखकर, पढ़कर या जिसके चरित्र का अनुसरण कर युवक अपने लिये योग्य मार्ग का चयन कर जीवन में पथ निश्चित कर सकें, इसका अभाव प्रतीत होता है। स्वामी विवेकानन्द को छोड़ और किसका जीवन युवकों के लिए आदर्श हो सकता है? तब यह निर्णय लिया गया कि स्वामी विवेकानन्द का जन्म अंग्रेजी कैलेण्डर के अनुसार १२ जनवरी, १८६३ को हुआ था। अत: इस दिवस को 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में सम्पूर्ण भारत में मनाया जायेगा। तब से केवल रामकृष्ण संघ के देश-विदेश की शाखाओं में ही नहीं, अपितु सारे विश्व में १२ जनवरी को राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में मनाया जाता है। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम तथा भारत के पुनरुत्थान में स्वामी विवेकानन्द का अत्यधिक योगदान है। अधिकांश स्वतन्त्रता सेनानी स्वामी विवेकानन्द के विचारों से प्रभावित होकर भारत माता की स्वतन्त्रता के लिए अपने-अपने ढंग से कार्य कर रहे थे। स्वामी विवेकानन्द ने एक बार अपने पाश्चात्य शिष्या कुमारी जोसेफाईन मॅक्लिऑड से कहा था, 'भारत माता से प्रेम करो!' स्वामीजी ने भगिनी निवेदिता से कहा था, 'पहले भारत, फिर भारत और अन्त में भी भारत। भारत माता के प्रेम में डूब जाओ!' स्वामीजी ने एक बार यह भी कहा था, 'मैं ही घनीभूत भारत हूँ।'

स्वतन्त्रता सेनानी बिपिनचन्द्र पाल ने कहा था, 'मुझे संदेह है कि क्या कोई भारतीय भारत माता से वैसा प्रेम करता है, जैसा भगिनी निवेदिता करती !' महान कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने निवेदिता के भारत माता के प्रति आत्म-समर्पण तथा सेवाओं के लिए उन्हें 'लोकमाता' कहा था। आयरलैण्ड की कुमारी मार्गरिट एलिजाबेथ नोबल स्वामी विवेकानन्द के विचारों से प्रेरित हो भारतमाता की सेवा के लिए भारत पधारीं और स्वामीजी ने उन्हें भारतमाता के चरणों में 'समर्पित' कर 'निवेदिता' इस नाम से विश्व विख्यात किया। निवेदिता ने भारतमाता को अपनी कर्मभूमि बनाया। स्वामीजी की महासमाधि के उपरान्त भारतमाता के पुनरुत्थान हेतु निवेदिता ने स्वामीजी का कार्य अपने कंधों पर लिया। भारतीयों के मन में राष्ट्रवाद की ज्वाला को प्रज्वलित करने में निवेदिता ने बहुत बड़ी भूमिका निभाई।

स्वामीजी के 'मनुष्य-निर्माण' की भावधारा को निवेदिता ने 'राष्ट्र-निर्माण' से जोड़ अपना कार्य आरम्भ किया। उन्होंने भारत के नर-नारियों से आह्वान किया कि वे मातृभूमि के प्रति अपने अटूट प्रेम को 'परम कर्तव्य' समझें और उसकी रक्षा हेतु दायित्व लें तथा किसी भी बलिदान के लिए तैयार रहें। भारत की एकता निवेदिता के लिए सर्वोपरि थी। उन्होंने भारतवासियों से आह्वान किया कि **'भारत एक था, एक है और वह एक ही रहेगा' इस मन्त्र का सदैव सच्चे मन से जप करें और राष्ट्रवाद की भावना सुदृढ करें।**

निवेदिता वैसे तो अपने देश में शिक्षाविद् रहीं और उन्होंने नवीन शिक्षा पद्धति को अंगीकार किया था। भारत पधारने पर उन्होंने कलकत्ता के पुराने रीति-रिवाजों से जर्जर बागबाजार मुहल्ले में बालिकाओं के लिए उसी शिक्षा पद्धति पर आधारित पाठशाला प्रारम्भ की। निवेदिता के लिए शिक्षा एक

शक्तिशाली साधन थी। उन्होंने छात्रों को पारम्परिक शिक्षा के साथ-साथ हस्तशिल्प और व्यावसायिक प्रशिक्षण देना प्रारम्भ किया, ताकि छात्र अपने घर से ही अपनी आजीविका कमाने में सक्षम हो सकें। उन्होंने वयस्क और युवा विधवाओं को शिक्षा और कौशल विकास के क्षेत्र में प्रोत्साहित किया। युवा विधवाएँ अपना घर सम्भालकर दोपहर में उपर्युक्त प्रशिक्षण पा सकें, ऐसी लचीली व्यवस्था उन्होंने बनाई। भारतीय परिस्थिति के अनुसार उन्होंने कौशल और हस्तशिल्प का चयन कर उन्हें प्रशिक्षित किया। निवेदिता के दिमाग में पुराने भारतीय उद्योगों के पुनरुत्थान करने के साथ-साथ उद्योग तथा शिक्षा का सम्बन्ध और अधिक गहरा करने की योजना आकार ले रही थी, जिसे उन्होंने प्रत्यक्ष रूप में लाया। वे भारतीय मूल्यों और परम्पराओं पर आधारित सच्ची राष्ट्रीय शिक्षा की समर्थक थीं। वे चाहती थीं कि हमारे छात्र भारतवर्ष के सच्चे बेटे और बेटियाँ हो सकें।

४ जुलाई, १९०२ के दिन स्वामीजी महासमाधि में लीन हुए। उसके बाद निवेदिता अपना शोक दूर कर गुरु प्रदत्त कार्य करने हेतु बाहर निकल पड़ीं। १९ जुलाई, १९०२ को निवेदिता कलकत्ता से जैसोर रवाना हुईं। वहाँ स्वामीजी को श्रद्धांजलि अर्पित करने हेतु एक विशेष सभा में उन्होंने लोगों को सम्बोधित किया। विशेषकर युवकों में देशप्रेम की भावना जागृत कर देश के लिए कार्य करने को प्रेरित किया।

भारत के कोने-कोने में जाकर वहाँ की सामाजिक स्थिति का प्रत्यक्ष अवलोकन करने की इच्छा से भारत के विभिन्न भागों का दौरा करने हेतु २२ सितम्बर, १९०२ को उन्होंने नागपुर होते हुए मुम्बई प्रस्थान किया। २६ सितम्बर, १९०२ को मुम्बई के 'गेयटी थिएटर' में उन्होंने अपना पहला भाषण दिया। उसके बाद दो दिनों तक वही उन्होंने व्याख्यान दे लोगों को प्रेरित किया। करीब एक हजार लोग उनके भाषण सुनने आते थे। अन्तिम भाषण जो 'स्टुडेंट ब्रदरहुड' संस्था द्वारा आयोजित था, जो विशेष उल्लेखनीय है। उनका भाषण बहुत स्फूर्तिदायक, सारगर्भित तथा विचारोत्तेजक था। खासकर विद्यार्थियों को उनका भाषण बहुत अधिक पसन्द आया, जिन्हें उसने अधिक से अधिक समय तक सम्बोधित किया था। उस भाषण में उन्होंने विद्यार्थियों को बताया – **विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य का पालन करना श्रेष्ठ है। यह एकमेव ऐसा साधन है, जो आध्यात्मिक शक्ति तथा आत्मबल की उन्नति में सहायक है।** एक व्याख्यान में निवेदिता ने स्त्रियों को आह्वान किया – भारतीय साहित्य एक समृद्ध साहित्य है, अत: उन्हें पश्चिमी साहित्य की अपेक्षा भारतीय साहित्य का गहन अध्ययन कर अपने घरेलू जीवन में सादगी तथा गम्भीरता पर ही दृढ़ विश्वास रखना चाहिये।

उन्होंने कहा – ''...आज का यह शुभ दिन माँ दुर्गा और शस्त्रों के पूजन का दिन है। ऐसे में हम माँ दुर्गा, उनके शस्त्रों और वाणी को कैसे भूल सकते हैं? बंगाल में आज भी जिनकी 'बुरगी' के नाम से पहचान है, ऐसे मराठा राजा भोसला के इस राजधानी में पराक्रम की कुछ झाकियाँ देखने को मिलेगीं, ऐसी मुझे आशा थी।'' निवेदिता के व्याख्यान को आयोजक, शिक्षकवृन्द और छात्रों ने शान्तिपूर्वक सुना। उनकी बातें उपस्थित सभी जनों के हृदय को स्पर्श कर गई। उन्होंने कहा, ''कुश्ती, तलवारबाजी जैसे पुरुषों के कुछ खेल कल देख सकूँ, ऐसी मेरी इच्छा है।'' निवेदिता के अच्छे, ओजस्वी, आवेशपूर्ण और देशाभिमान से परिपूर्ण भाषण सुनकर सभी लोग सन्तुष्ट होकर वापस लौट गए।

इस कार्यक्रम के अन्त में भगिनी निवेदिता ने कहा, ''हमलोग आजकल उच्च बौद्धिक शिक्षा के लिए कुछ अधिक ही आग्रही हो गये हैं। महाविद्यालयों से प्रतिवर्ष अनेक छात्र उपाधि प्राप्त करते हैं। परन्तु उनका शरीर इतना दुर्बल होता है कि वे अपनी और अपनी माँ-बहनों की रक्षा तक नहीं कर सकते। ऐसे शक्तिहीन, दुर्बल मनुष्यों से समाज को क्या लाभ? विदेशियों की नौकरी कर अपने ही स्वदेशवासियों पर शासन करनेवालों से अधिक **आज हमें क्रान्तिकारी स्वदेशाभिमानी नवयुवकों की आवश्यकता है। ऐसे नवयुवक ही इस देश का कल्याण कर सकते हैं।** विदेशी सरकार की नौकरी करके हम उनका शासन यहाँ कायम कर रहे हैं, इस बात से हम सभी को घृणा होनी चाहिये।'' निवेदिता नागपुर से भण्डारा, वर्धा, अमरावती इत्यादि मराठों के विभिन्न शहरों में गयीं और अपने ओजस्वी जोशपूर्ण व्याख्यानों द्वारा स्वामी विवेकानन्द की वाणी का प्रचार-प्रसार करती रहीं। उन्होंने अपने व्याख्यानों के माध्यम से युवाओं को भारत की स्वतन्त्रता के लिए लड़ने के लिए प्रेरित किया।

भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में उनकी सक्रिय भूमिका सन् १९०२ के अन्त से १९११ के मध्य तक रही। इतने कम कालावधि में राष्ट्रीय जागरण के कार्य में उनका महान और अद्वितीय योगदान प्रशंसनीय है। भारत के विकास में

उनका योगदान प्रत्येक क्षेत्र में था, चाहे वह राजनीतिक, सामाजिक या बौद्धिक हो। अपने कार्यों के द्वारा उन्होंने भारतीय जनता को पुनर्जाग्रत करने और भारत को विश्व में एक श्रेष्ठ प्रतिनिधि बनाने का प्रयास किया।

निवेदिता के लेखन में सदैव 'पारिवारिक आदर्श' से 'राष्ट्रीय आदर्श' तक उठने की बात बार-बार लिखी गयी है। केवल पारिवारिक चिन्तन न कर राष्ट्र चिन्तन का आदर्श वे अपने लेखन में सदैव प्रस्तुत करती थीं। वे चाहती थीं कि देशवासी, विशेष रूप से युवा, इस आदर्श को स्वीकार करते हुए भारत के लिए बलिदान, भारत के लिए भक्ति और भारत के लिए ही शिक्षा ग्रहण करना है, इन बातों को अंगीकार करें तथा बचपन से ही बच्चे समग्र रूप से राष्ट्रीय एकता की भावना को आत्मसात् करें।

अवनीन्द्रनाथ टैगोर, आनन्द कुमारस्वामी और ई.बी. हैवेल के साथ-साथ निवेदिता को बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट को आकार देने के लिए जाना जाता है। कला क्षेत्र में मानो उन्होंने नवचेतना का जागरण कराया था। इन युवकों को साथ में लेकर निवेदिता ने कला के क्षेत्र में भारत के पौराणिक विषयों को उजागर किया था। प्लेग की महामारी के समय निवेदिता ने सफाई का कार्य स्वयं कर भारतीय युवकों के सामने एक आदर्श प्रस्तुत किया कि किस प्रकार भारत माता की सेवा की जा सकती है। उन्होंने युवकों को साथ लेकर मुहल्लों की सफाई, घर-घर जाकर इस कार्य के लिए चन्दा इकट्ठा करना, लोगों में इस रोग के प्रति जागृति लाने के लिए परिपत्रक बाँटना तथा रोगियों की सेवा-शुश्रूषा करना, जैसे कार्य बड़ी कुशलता से किया। निवेदिता फल और दूध का सेवन कर ही अपना जीवन यापन करती थीं। उसमें से भी एक भाग रोगियों को देकर उन्होंने महान त्याग का एक आदर्श युवकों के सामने प्रस्तुत किया था।

२० जनवरी, १९०४ को निवेदिता स्वामी सदानन्द और ब्रह्मचारी अमूल्य (स्वामी शंकरानन्द) के साथ बिहार के पटना गयी। वहाँ महिलाओं के लिए उन्होंने एक व्याख्यान दिया, जिसे सुनकर महिलाएँ प्रभावित हुईं। इन चार दिनों के निवास में निवेदिता ने कई सार्वजनिक व्याख्यान दिये तथा युवकों से अनौपचारिक चर्चा भी की। २२ जनवरी, १९०४ को पटना के 'हिन्दू ब्वायेज एसोसिएशन' इस संस्था का स्थापना दिवस तथा सरस्वती-पूजा उत्सव मनाया गया। अँग्लो संस्कृत स्कूल का सभागृह युवकों से खचाखच भरा हुआ था। युवकों को सम्बोधित करते हुए निवेदिता ने कहा, 'युवकों को सदैव ऐसा विचार करना चाहिए कि भारतमाता को युवकों से क्या अपेक्षा है?' युवकों के शारीरिक प्रशिक्षण पर उन्होंने जोर देते हुए कहा, 'पौरुषत्व ही जीवन का सार है ! भारतमाता का कल्याण ही युवकों के जीवन का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए। यह उद्देश्य केवल विद्याव्यसन से या तर्कनिष्ठ लेख लिखकर या प्रभावी व्याख्यान देकर साध्य होनेवाला नही है। आप में से कई लोग इस कार्य के लिए सक्षम हैं। सम्पूर्ण भारत तुम्हारा ही है और तुम्हारे इस देश को तुम्हारी आवश्यकता है। ज्ञान, शक्ति, समृद्धि तथा आनन्द प्राप्त करना, यही तुम्हारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। संघर्ष या युद्ध के लिए जब भारतमाता पुकारेगी, तब आप को तैयार रहना चाहिए।' इस व्याख्यान ने युवकों को बहुत प्रेरित किया। 'बेहार हेराल्र्ड' नामक पत्रिका ने इस व्याख्यान की खबर प्रकाशित करते हुए कहा, 'निवेदिता के इस अद्भुत व्याख्यान ने युवकों में इतनी चेतना जागृत की कि आलसी से आलसी मनुष्य भी देश-कार्य के लिए उद्यत होगा।' अगले दिन उन्होंने 'भारत की शिक्षा विषयक समस्या' विषय पर व्याख्यान देते हुए कहा, 'भारत की शिक्षा विषयक समस्या जरा अधिक ही जटिल है। सरकार पर निर्भर न रहते हुए युवकों को अपना मार्ग स्वयं ढूँढ़ना चाहिए। उन्होंने छात्रों को भारत की स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लक्ष्य की याद दिलाई। एकता ही बल है और उसकी प्राप्ति के लिए भारत माता के सभी सुपुत्रों को जातिधर्म का विचार त्यागकर एकजुट होना चाहिए।' वे अपने प्रत्येक व्याख्यान के माध्यम से राष्ट्रीयत्व की भावना जागृत करने का प्रयास करती थीं। उनकी वाणी का प्रत्येक शब्द भारत माता के प्रति अगाध प्रेम से परिपूर्ण रहता था। उन्होंने भारतीयों में राष्ट्रीय भावना जागृत करने का उपाय सोचा। वहाँ से वे राजगीर, नालन्दा, बोधगया, वाराणसी, लखनऊ होते हुए कलकत्ता पहुँची।

१९०२ के पश्चात् राष्ट्रकार्य के लिए देश की युवाशक्ति को संगठित करना तथा उसे मार्गदर्शन देने के लिए नवीन मार्ग खोजना, ऐसी आवश्यकता का बोध हुआ। तदनुसार कुछ युवा संगठनों का गठन हुआ। जैसेकि 'दी यंग मेन्स हिन्दू यूनियन कमिटी', 'दी गीता सोसायटी', 'दी डॉन सोसायटी', 'दी अनुशीलन समिति' तथा 'दी विवेकानन्द सोसायटी'। नवीन सामाजिक तथा आध्यात्मिक जागृति युग पर निवेदिता की श्रद्धा होने के कारण उन्होंने तत्काल ही

इन समितियों से सम्बन्ध स्थापित कर लिए। जब, जहाँ भी उन्हें निमन्त्रित किया जाता, वे वहाँ अवश्य जातीं तथा हिन्दू-धर्म, गीता-व्याख्या या स्वामी विवेकानन्द के कार्यों पर भाषण देतीं। उनके भाषण स्फूर्तिदायक तथा नवयुवकों की चेतना को जागृत कराने वाले होते। उन्होंने भारत की समस्याओं पर इतने लम्बे समय तक गहन विचार किया था कि अब उनके विचार परिपक्व और शक्तिशाली हो गये थे, जिससे वे युवकों के लिए एक नये कार्य क्षितिज का उदय कर रहे थे। उनका व्यक्तित्व युवाशक्ति के लिए एक ज्वलन्त प्रेरणा बन गया था। 'देश' और 'राष्ट्रीयता' इन शब्दों का वे इतनी बार उपयोग करतीं, बार-बार दोहरातीं मानो मन्त्रों का जाप कर रही हों। ये शब्द उनके लिए मन्त्र के समान पवित्र बन गये थे। 'राष्ट्रीय जागृति' उनका विशेष शब्द-प्रयोग था।

निवेदिता युवकों को क्रीड़ा, स्पर्धा, व्याख्यान स्पर्धा तथा सस्वर पाठ आदि की प्रतियोगिताओं को आयोजित करने हेतु प्रोत्साहित करतीं तथा किसी विशेष अवसर पर वह विजयी विद्यार्थियों को 'विवेकानन्द पदक' भी प्रदान करतीं। मार्ग-दर्शन, स्फूर्ति तथा प्रेरणा पाने के लिए असंख्य युवकों की भीड़ उनके आसपास हमेशा लगी रहती। वे युवा-वर्ग की 'गुरु' बन गयी थीं। इन समितियों द्वारा युवा-वर्ग को शारीरिक शिक्षा का प्रशिक्षण देने हेतु व्यायामशालाओं का संचालन किया जाता। समय-समय पर क्रीड़ा स्पर्धाओं का आयोजन भी किया जाता। संगोष्ठियों का आयोजन किया जाता। वहाँ महान व्यक्तियों के जीवन-चरित्रों, उनके कार्यों या उनकी शिक्षाओं के बारे में पढ़ा जाता या बताया जाता। विभिन्न देशों के स्वतन्त्रता संग्रामों का इतिहास, राजनीतिशास्त्र तथा अर्थशास्त्र का भी अध्ययन किया जाता। प्रत्येक रविवार को धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा की कक्षायें आयोजित की जातीं, जहाँ रामायण, महाभारत, चण्डी-कथा तथा स्वामीजी के कार्यों से युवावर्ग को परिचित कराया जाता। ये समितियाँ युवकों के शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास के लिए क्रमश: प्रयत्न कर रही थीं।

लॉर्ड कर्जन के बंगाल विभाजन तथा उनकी भारत विरोधी नीतियों के विरुद्ध स्वयं निवेदिता ने जोर-शोर से भाग तो लिया ही पर उन्होंने युवा शक्ति को भी कर्जन के विरुद्ध भड़काया। अपनी प्रभावी लेखनी के द्वारा उन्होंने छात्रों को जाग्रत किया।

कलकत्ता के युवकों में स्वामीजी की भावधारा का प्रचार-प्रसार करने हेतु निवेदिता कार्य कर रहीं थी। मठ के साधुओं से परिचय करने हेतु वे उन युवकों को मठ में लाया करतीं। तब उत्साही युवकों की सहायता से गैर-राजनैतिक संस्था की स्थापना करने की इच्छा स्वामी ब्रह्मानन्द एवं स्वामी सारदानन्द जी को हुई। २३ अगस्त, १९०२ को स्वामी सारदानन्द, स्वामी शुद्धानन्द एवं भगिनी निवेदिता की प्रेरणा से कलकत्ता के युवकों ने 'विवेकानन्द सोसायटी' नामक संस्था की स्थापना की। इस संस्था की स्थापना निवेदिता एवं तत्कालीन छात्रों ने एक साथ कलकत्ता के कॉलेज स्ट्रीट स्थित अलबर्ट हाल की सभा में की। स्वामी विवेकानन्द जी के जीवन तथा साहित्य का अनुशीलन कर तदनुसार अपना जीवन व्यतीत करना इस संस्था का उद्देश्य था। स्वामीजी की कविताएँ इस संस्था ने प्रथमत: 'वीरवाणी' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित की थीं। संस्था के आयोजकों ने स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी सारदानन्द तथा स्वामी तुरीयानन्द से इसकी प्रेरणा प्राप्त की। इस संस्था के शीघ्र ही तीस सदस्य हो गये। स्वामी सारदानन्द ने एक समिति की स्थापना की और वे स्वयं वहाँ नियमित रूप से भगवद्गीता की कक्षा लेने लगे, इन प्रवचनों का आगे चलकर 'गीतातत्त्व' नामक पुस्तक के रूप में प्रकाशन हुआ। इस संस्था में नियमित रूप से श्रीरामकृष्ण, विवेकानन्द, वेदान्त तथा अन्य आध्यात्मिक विषयों पर स्वामी ब्रह्मानन्द, स्वामी सारदानन्द एवं भगिनी निवेदिता क्लास लेने लगे। छोटा-सा पुस्तकालय, विद्यार्थीगृह तथा समाज-सेवा जैसे कार्य भी यह संस्था करने लगी। इस कार्य के लिए निवेदिता सहायता करती थी। स्वामी सारदानन्द ने ११ अप्रैल, १९०४ को एक पत्र में लिखा था, "... इस कार्य के लिए धन का अभाव है। यह कार्य किसी तरह स्थायी रूप से चल सके, इसके लिये हम प्रयास कर रहे हैं। भगिनी निवेदिता भी इस कार्य में मुझे यथासम्भव सहायता कर रही हैं।" भारत में सर्वप्रथम १९०९ में इस संस्था ने ही सर्वधर्म-परिषद का आयोजन किया था, जिसमें भारत के अनेक धर्मों के प्रतिनिधि उपस्थित हुए थे। इस संस्था के राजकीय सम्बन्धों के कारण अंग्रेज सरकार की तीक्ष्ण दृष्टि इस संस्था पर होने के कारण संस्था के कार्यों की गति धीमी हो गयी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भगिनी निवेदिता किस प्रकार हर क्षेत्र में युवकों को प्रोत्साहित कर नवचेतना जगा रही थीं और युवकों को नया मार्ग दिखाकर उनमें भारत प्रेम

जाग्रत कर रही थीं। स्वामी विवेकानन्द के नव-भारत के पुनरुत्थान के स्वप्न को पूरा करने में उन्होंने अपना सर्वस्व बलिदान किया था। उन्होंने तन-मन-धन से भारत माता के भविष्य रूपी इन युवकों को जगाने के लिए आत्मबलिदान तक कर दिया था।

हम यदि हिमालय की गोद में दार्जिलिंग के सुरम्य पहाड़ों में भ्रमण करने जायें, तो हमें रेलवे स्टेशन के पास एक हिन्दू श्मशान-भूमि दिखेगी। दृष्टि पड़ेगी एक समाधी पर जहाँ गम्भीर, शान्त, प्रशान्त वातावरण, स्निग्ध मधुर वायु और पक्षिओं का कलरव सुनाई देगा। इससे मानो प्रकृति अपने अस्तित्व का बोध कराती है। हम आकृष्ट होते हैं वहाँ स्थित समाधि की ओर, जिसके फलक पर लिखा है – 'जिसने अपना सर्वस्व भारतमाता को समर्पित किया, वह भगिनी निवेदिता यहाँ चिर निद्रा में विराजमान हैं।' निवेदिता शब्द का अर्थ है, जिसने समर्पित किया हो या जो स्वयं समर्पित हुई हो ! निवेदिता का समर्पण देख महान कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा था, ''भारतीय जनसाधारण के प्रति निवेदिता का हृदय द्रवित होते जिस किसी ने देखा है, वह यह निश्चित समझ पायेगा कि हम अपना समय, सम्पत्ति और जीवन देशवासियों को देकर भी अपना हृदय देशवासियों को नहीं दे सके हैं।''

भगिनी निवेदिता ने अपने समर्पित जीवन के माध्यम से भारतीय युवकों को दिखा दिया कि भारतीय संस्कृति तथा परम्परा, भारतीय जीवन शैली, समृद्ध भारतीय विरासत, भारतीय कला और इतिहास कितना महान है। उन्होंने युवकों का ध्यान इस ऐतिहासिक महान धरोहर की ओर आकर्षित और इस ओर लौटने के लिए सफलतापूर्वक प्रेरित किया।

भगिनि निवेदिता द्वारा युवाओं का आह्वान

* अतीत में भारतीय युवाओं के लिए स्वदेश ही धर्म रहा है, जहाँ जन्मदात्री माँ उन्हें महान कार्य करने हेतु प्रेरित करती थीं, जहाँ रंगमंच उनकी उपलब्धियों का बखान करता था।

* हम ऐसे युवा चाहते हैं, जो तकनीकी क्षेत्र में प्रशिक्षण के बाद प्रेरित होकर स्वयं को व्यक्त कर सकें तथा सशक्त बना सकें, जिससे वे पूर्णता का अनुभव कर सकें।

* आजकल विश्वविद्यालय केवल एक संगठन नहीं बल्कि विचार और आशा के स्रोत हैं। हमारे युवा भारतीय कला का अध्ययन अच्छी भावना से करें और भारत की कला-जगत का पुनरुत्थान करें। यदि युवा अपने कला-चेतना को ठीक से समझकर अध्ययन करें, तो वह चेतना पुनर्जीवित हो उठेगी। चेतना से ही जीवन उत्पन्न होता है, परन्तु राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत किये बिना मृत्यु के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता।

* युवकों को अपने देश तथा उसकी आवश्यकताओं को जान लेना चाहिए। इसके द्वारा ही वे अपने निर्णय, अपनी इच्छाएँ और अपनी चयनशक्ति को संशोधित कर सकते हैं। ज्ञान से हृदय विकसित होता है और विचार करने की स्पष्टता आती है। 'जागो ! जागो !' मुक्त रहो और कार्य करो। नि:स्वार्थता आपके कर्म का मार्गदर्शन करे और प्रेम आपकी इच्छाशक्ति को प्रेरित करे, ताकि कोई भी बलिदान व्यर्थ न हो और हर आन्दोलन आगे बढ़ता रहे।

* युवाओं का कर्तव्य है संतुलित आहार, अच्छी नींद और खूब खेलना। ताजी हवा पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। ...युवकों को खेल में प्रचंड ऊर्जा का परिचय देना चाहिए। ...स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ मनोवृत्ति का विकास होता है। युवाओं के चेहरे पर निराशा देखकर मुझे दुख होता है। ...मैं आपको नीरस देखने के बजाय आपको कुश्ती, मुक्केबाजी, तलवारबाजी करते हुए देखना चाहती हूँ। हम बलवान व्यक्तित्व चाहते हैं।

* लड़ो, लड़ो, फिर से लड़ो, लेकिन क्षुद्रता और विद्वेष से नहीं। संघर्ष के दौर से हमेशा मुस्कुराते हुए बाहर आओ। महानायक कभी अकेला नहीं रहता। उसके साथ हमेशा निष्ठावान साथियों का एक दल होता है। महानायक अपने कार्य का कभी भी अभिमान नहीं करता। वह नहीं जानता कि दुष्ट स्वभाव या कायरता या आलस्य क्या है।

* युवकों के सामने उनके राष्ट्र का सच्चा इतिहास रखकर उनमें राष्ट्रीय चेतना जगायी जा सकती है।

* आधुनिक छात्र को यह जानने और समझने की आवश्यकता है कि जिसके पास अपनी कोई सांस्कृतिक धरोहर नहीं होती, उसका कोई भविष्य भी नहीं होता।

○○○

युवाओं को प्रेरित करनेवाली सुभाषचन्द्र बोस की वाणी

युवक और युवतियों का कोई भी आन्दोलन आवश्यक नहीं कि युवा-आन्दोलन ही हो। यह निश्चय ही एक रचनात्मक आन्दोलन है, जिसका हमारे लिये नये जगत का निर्माण करना है।

यदि तुम जीवन चाहते हो, तो तुम्हें जीवन देना होगा।

जनसेवा के लिये सांसारिक इच्छाओं का त्याग प्रथम प्रयोजन है।

तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।

वस्तुत: मुझे अतीतकालीन सभी विश्व-सभ्यताओं को आत्मसात् करना होगा।

मुझे स्वयं का अध्ययन करना होगा – भारत और भारत के बाहर स्थित अपने चारों ओर के विश्व का अध्ययन करना होगा और इसके लिए विदेश यात्राएँ आवश्यक हैं।

मुझे भविष्य का देवदूत बनना होगा। मुझे उन्नति के नियमों को खोजना होगा, दोनों सभ्यताओं को मनोवृत्तियों को समझना होगा और उससे भावी लक्ष्य और मानवता की उन्नति को निश्चित करना होगा। इसके लिए केवल जीवन-दर्शन ही मेरी सहायता करेगा।

इस आदर्श को एक राष्ट्र के माध्यम से प्राप्त करना होगा और इसका प्रारम्भ भारत से करना होगा।

यदि कोई आदर्श है, तो उसे प्राप्त किया जा सकता है – मेरा विश्वास है।

क्यों करूँ, यह तर्क मत करो, करो और मरो।

मैं एक दिन अंग्रजों को उनके जीवन के भयंकरतम युद्ध के सामने खड़ा करने में सफल होऊँगा।

संघर्ष करो, संघर्ष करो, यही मेरा गत दस वर्षों से आदर्श था। अभी भी कह रहा हूँ, संघर्ष करो।

'मैंने इस को बात समझा है कि मनुष्य होने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता होती है – १. अपने भूतकाल का मूर्तरूप, २. वर्तमान की उपलब्धि, ३. भविष्य का देवदूत।'

जीवन में कुछ मूल आदर्शों की उपलब्धि करने हेतु किस तरह नाना पथों से गुजरते हुए जाना पड़ता है – इस बात को समझाने के लिये सुभाष ने कहा था – 'अपने स्वयं के जीवन में कर्मों का समन्वय करने के लिए किसी एक दर्शन का सहारा लेकर अपनी जीवन गठन करो।

विनाश और निर्माण करो, जीवन का विकास सतत् विनाश एवं निर्माण के मध्य ही होता है। शून्य से कुछ भी प्रकट नहीं हो जाता। मनुष्य निम्न सत्य से उच्चतर सत्य की ओर अग्रसर होता है। हमें अनिश्चितताओं के बीच होते हुए ही जाना होता है। इन सबसे ही जीवन में पूर्णता आती है।

हमारे पास सबकुछ है, परन्तु जो वस्तु नहीं है वह सभी बाधाओं का अतिक्रमण करके सभी विपदाओं को तुच्छ बनाकर एक उच्च आदर्श के पीछे अपने सम्पूर्ण जीवन को लगा देना।

उद्देश्य के प्रति दृढ़ता हमारे पास नहीं है। यह बात अंग्रेजों में है। इसीलिए अंग्रेज इतने बड़े हो सके और हम हीनता को प्राप्त हुए। हम अपने हृदय से अपने देश से प्यार नहीं करते, स्वदेशवासियों से प्रेम नहीं करते, इसीलिए हम लोग गृह-विवाद करते रहते हैं, इसीलिए हममें से मीर जाफर और उमीचन्द का जन्म होता है। अब भी उनकी वंशवृद्धि हो रह है। यदि हम अपने देश से प्रेम करते हैं, तो आत्म-बलितदान की क्षमता अर्जित करना होगा, हमारे चरित्र में अविराम और अक्लान्त परिश्रम की, उद्देश्य प्रति दृढ़ता की क्षमता लौट आयेगी। उद्देश्य के प्रति दृढ़ता और नैतिक शक्ति, ये दोनों हम कहाँ पाएँगे? वन-जंगल में युग-युगान्तर तक तपस्या करने के उपरान्त भी प्राप्त नहीं होगा। इसे हम जीवन में निष्काम कर्म करते हुए और अविराम संग्राम में लिप्त होकर ही पाएँगे। ○○○

राष्ट्र-निर्माता युवाओं की शिक्षा कैसी हो

प्रो. (डॉ.) शैलेन्द्र कुमार सिंह

पूर्व कुलपति, शहीद महेन्द्र कर्मा विश्वविद्यालय, बस्तर, जगदलपुर

स्वामी विवेकानन्द देश के युवकों को शिक्षित करने के लिए सदैव देशवासियों को प्रेरित करते रहे और स्वयं प्रत्यनशील रहे। ज्ञान मानव-शरीर का आभूषण है। किसी देश के उत्तरोत्तर विकास हेतु शिक्षा का विकास होना बहुत आवश्यक है। अगर विकसित देशों की सम्पन्नता पर एक दृष्टि डाली जाये, तो यह बात पूरी तरह से स्पष्ट हो जाती है कि इसमें उनकी शिक्षा-योजना का बहुत बड़ा हाथ है। हमारे देश की जनसंख्या लगभग १४० करोड़ है। इसमें युवाओं की जनसंख्या ७० प्रतिशत से अधिक है। अगर इनकी सम्पन्नता के रास्ते पर वर्तमान समय में समुचित ध्यान नहीं दिया गया, तो आनेवाले समय में देश को कैसी असन्तोष की भयावह स्थिति का सामना करना पड़ सकता है, ऐसा सोच कर सिहरन होता है। इस समस्या का त्वरित समाधान निकालना आवश्यक है।

एक समयबद्ध योजना का किसी कार्य पर क्या असर पड़ता है, इसे एक उदाहरण से जाना जा सकता है। हमेशा यह बात आम रूप से कही जाती है कि यदि हम जलवायु को स्वस्थ रखना चाहते हैं, पर्यावरण को शुद्ध रखना चाह रहे हैं, मानसून को नियन्त्रित करना चाह रहे हैं, तो हमें प्रति वर्ष अधिक से अधिक पौधे लगाना चाहिए। लेकिन इस कार्य को एक योजना के रूप में ले लिया जाये और आपके स्कूल/कॉलेज के छात्र-छात्रों की संख्या ५०० है और हर छात्र को एक पौधा लगाना है, तो यह कार्य एक वर्ष में ही समाप्त हो जायेगा और स्कूल/कॉलेज की छात्र शक्ति का उपयोग अगले वर्ष क्षेत्र के दूसरे भाग में किया जा सकता है।

अगर एक जिले की जनसंख्या द्वारा यह किया जाये, तब क्या होगा और अगर १४० करोड़ की जनसंख्या द्वारा यह कार्य किया जाये, तब क्या होगा? जो कार्य पौधारोपण के रूप में पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है, वह देश की मानव-शक्ति २ से ३ वर्ष में पूर्ण कर सकती है। लेकिन मित्रो, हमारा कार्य केवल पौधा लगाना ही नहीं है, बल्कि उसे संरक्षित कर वृक्ष भी बनाना है। हम यह कर सकते हैं कि स्कूल/कॉलेज में अनुशासन बनाते हुए प्रतिवर्ष लगे हुए पौधों को अगले वर्ष उसी कक्षा के छात्रों को उन पौधों को संरक्षित करने हेतु सौंप दें। हाँ, यह भी हम कर सकते हैं कि जिन छात्रों ने एक पौधे को वृक्ष बनने में योगदान दिया है, उसका नाम सहित फोटो भी लगायें। यह भी कर सकते हैं कि स्कूल/कॉलेज की वार्षिक विवरणिका पुस्तक में इन तथ्यों का उल्लेख करें।

आइये ! हम इस योजना को शिक्षा की ओर ले चलें। कॉलेज शिक्षा या व्यावसायिक शिक्षा को स्कूल-शिक्षा से देखने की आवश्यकता है। हमारे देश में उच्च शिक्षा की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। उच्च शिक्षा में बच्चे स्कूली शिक्षा से होकर जाते हैं। अगर स्कूली शिक्षा की स्थिति अच्छी नहीं होगी, तो उच्च शिक्षा के गुणवत्ता-उन्मुख होने के बारे में सोचना ठीक नहीं होगा।

स्कूली शिक्षा हेतु जो छात्र-छात्रायें हमें मिलते हैं, उन्हें खराब नहीं कहा जा सकता, लेकिन प्रारम्भिक शिक्षा हेतु जो वातावरण हम उन्हें देते हैं, वह उचित नहीं होता। सरकारी एवं प्रायवेट स्कूल में अन्तर साफ दिखता है।

एक स्कूल के अच्छा होने के लिये उसके शिक्षण कक्ष का समय के अनुसार अच्छी तरह से सुसज्जित होना बहुत आवश्यक है। हमारे अधिकांशत: स्कूल/कॉलेज समय के अनुसार पूर्णतया सुसज्जित नहीं हैं। अगर शिक्षण कक्ष वातावरण के अनुसार पूर्णतया सुसज्जित है, लेकिन शिक्षक शिक्षण में अच्छे नहीं हैं, तो छात्रों के प्रदर्शन पर असर पड़ेगा। ज्ञातव्य हो कि एक प्राध्यापक को कक्षा में पढ़ाने हेतु निर्देश दिये जा सकते हैं, लेकिन उसे कक्षा में अच्छा पढ़ाने हेतु बाध्य नहीं किया जा सकता। अत: यह बात भी मायने रखती है कि शिक्षक में छात्रों को अच्छी शिक्षा दान करने की ललक भी होनी चाहिए।

शिक्षक का शिक्षण वह अगरबत्ती है, जो अपने शिक्षण के बल पर अपने शिष्यों के बीच में जीवनभर महकता रहता है और उसके शिक्षण के सुगन्ध या दुर्गन्ध को छात्र अपने जीवन में समाज के प्रत्येक मिलनेवाले व्यक्ति को बाँटता रहता है। शिक्षक को इस बात को समझना चाहिए। अच्छा शिक्षक विषय के ज्ञान को इस रूप में छात्र को देना चाहता है कि उस विषय का सरल ज्ञान छात्र में समाहित हो जाये और उस ज्ञान को और अच्छा करने की जिज्ञासा उसमें जाग्रत हो जाये।

मेरे समय में उदयप्रताप इन्टर मिडियेट कॉलेज, वाराणसी में एक श्रीवास्तवजी भौतिकशास्त्र के अध्यापक थे। उनकी कक्षा में पढ़ने हेतु गणित ग्रुप के छात्र बॉयोलाजी ग्रुप के कक्षा में चले जाते थे। उनके ६० की कक्षा में १०० छात्र बैठते थे। आज भी उन्हें मैं याद करता हूँ। वे केवल कक्षा में पढ़ाते नहीं थे, बल्कि अपना अधिकतम छात्रों को देने को उद्यत रहते थे। क्या अभिभावक के रूप में हम स्कूल/कॉलेज/विश्वविद्यालय में ऐसे शिक्षक की इच्छा नहीं रखते? यहाँ विचारणीय बात यह है कि कुछ शिक्षक ही क्यों उँगली पर गिनने योग्य हैं? सभी शिक्षक अच्छे क्यों नहीं हो जाते?

कम शिक्षक से एक विषय के अधिक पेपर का शिक्षण कार्य कैसे किया जा सकता है। शिक्षण भार के निर्धारित मापदण्द के अनुसार शिक्षकों की संख्या बढ़ाई जानी चाहिए। उच्च शिक्षा हो या स्कूल शिक्षा हो, हर शिक्षक हर विषय का शिक्षण करने के लिए अच्छा नहीं होता। यह निश्चित करना प्रबन्धन का दायित्व है कि विशेषज्ञता के अनुसार शिक्षक का चयन करें। अगर कुछ शिक्षक अधिक भी रखना हो, तो कोताही न करें। अगर किसी स्कूल-कॉलेज में शिक्षकों की संख्या कम है, तो इसका सतत निरीक्षण किया जाना चाहिए। ज्ञातव्य हो कि प्रायवेट एवं सरकारी स्कूल-कॉलेज के शुल्क में अन्तर है और छात्र आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण सरकारी स्कूल में प्रवेश लेने हेतु विवश हैं, यह धरातल की सच्चाई है, इसे नकारा नहीं जा सकता है।

जनता जानती है कि सम्पन्नता का सरल (शार्टकट) मार्ग शिक्षा से होकर जाता है। हर नागरिक अपने बच्चे को अच्छी शिक्षा देना चाहता है। जावेद कार-मेकनिक है। वह अपने बच्चे को अच्छी शिक्षा देकर अपनी पीढ़ी को सुधारना चाहता है, लेकिन वह अपने बच्चे को कान्वेंट स्कूल में नहीं पढ़ा सकता। क्योंकि उतना अधिक स्कूल-फीस देने में वह असमर्थ है।

शिक्षक राष्ट्र की रीढ़ की हड्डी है। यह खराब हो गयी, तो राष्ट्र को सुधारना कठिन है। हमारे राष्ट्र का उच्चकोटि का होना आवश्यक है। हमारा राष्ट्र कैसा होना चाहिए? यहाँ के वासियों में निम्न भावना होनी चाहिए –

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत्।।

बहुत से राष्ट्र हमारे भारत की ओर विनम्र भाव से देख रहे हैं। उन्हें पॉलीटेक्नीक से निकले छात्रों या कुशल छात्रों की (प्लम्बर, इलेक्ट्रीशयन, मकान बनानेवाले इत्यादि) आवश्यकता है। बहुतों को इंजीनियर की आवश्यकता है, जो उनके पुल, रेल, मेट्रो रेल, बन्दरगाह बनाने का कार्य कर सकें। आनेवाले समय में भारत रेल, दवा, हवाई जहाज, कार इत्यादि का आर्डर लेने में समर्थ हो जायेगा। अपने देश का भविष्य अगर आप सकारात्मक देखना चाहते हैं, तो वह बहुत उज्ज्वल है।

गंगोत्री से जब गंगा का जल निकलता है, तो वह स्वच्छ रहता है, लेकिन मैदानी भाग में आने पर वह कई जगह दूषित होता है। अन्त में समुद्र में मिलते समय स्वच्छ रहता है। मानव शरीर भी जन्म के समय बिल्कुल स्वच्छ रहता है, वातावरण एवं परिस्थितियों के अनुसार स्वच्छ या दूषित होता है, लेकिन मानव शरीर का कम्प्यूटर मस्तिष्क जिससे शरीर संचालित होता है, प्रारम्भ में बिल्कुल रिक्त ही होता है। इसको फॉरमेट कर जैसा साफ्टवेयर इसमें डाला जाता है, वैसा ही वह काम करता है।

केन्द्रीय सरकार एवं राज्य सरकार के प्राथमिक दायित्व में आता है कि राष्ट्र के नागरिकों की अच्छी शिक्षा की व्यवस्था की जाये। राष्ट्र जल, सड़क एवं बिजली, राशन, शौचालय इत्यादि की व्यवस्था अपनी क्षमता के अनुसार भरपूर रूप से कर रहा है, लेकिन इन व्यवस्थाओं को प्राप्त

करनेवाले समाज के नागरिक अपने परिवार के बच्चों की अच्छी शिक्षा व्यवस्था हेतु सरकार की ओर देख रहे हैं। यह नहीं भूलना चाहिए कि आजादी के ७० वर्ष बाद इन युवाओं की संख्या कुल जनसंख्या से ७० प्रतिशत है। अत: उपर्युक्त के अलावा वर्तमान में स्कूली शिक्षा से उच्च शिक्षा हमारी प्राथमिकता में होनी चाहिए।

उच्च शिक्षा का मार्ग प्राथमिक शिक्षा से होकर जाता है। इस शिक्षा में आमूल चूल परिवर्तन कर हम उच्च शिक्षा हेतु अच्छे छात्रों की व्यवस्था कर सकते हैं। आरम्भ में छात्र को नहीं मालूम रहता कि उसे कैसी शिक्षा चाहिए, लेकिन उसे स्कूल तैयार कर सकता है। ऐसी शिक्षा की व्यवस्था हो कि स्कूल के अलावा अतिरिक्त शिक्षक का प्रयोजन शिक्षाकर्मी के रूप में न पड़े, अतिरिक्त कोचिंग की आवश्यकता न पड़े। क्या ऐसा वातावरण बनाया जा सकता है? हाँ, बनाया जा सकता है। इसे स्कूल के शिक्षक एवं प्राचार्य मिलकर बना सकते हैं।

प्राय: यह देखा जाता है कि स्कूल-कॉलेज खोलने की घोषणा पहले की जाती है और इसका निर्माण बाद में किया जाता है। एक स्कूल-कॉलेज, विश्वविद्यालय को पूरे वेग से कार्य करने में कई वर्ष लग जाते हैं। क्या यह क्षेत्र के विकास को अवरुद्ध नहीं करता। क्या आर्थिक रूप से कमजोर छात्र को अपने क्षेत्र से बाहर जाकर स्कूली शिक्षा/उच्च शिक्षा लेना सम्भव है? शायद नहीं। एक क्षेत्र के विश्वविद्यालय में आवश्यकता के अनुसार सभी विषय के विभाग खोलने में वर्षों लग जाते हैं।

मानव-कल्याण हेतु शिक्षा का विकास त्वरित किया जाना चाहिए। क्या यह सम्भव है कि शिक्षा विभाग एक रोड मैप बनानेवाला विभाग सृजित करे और रोड मैप के अनुसार पूरे राज्य के पूरे क्षेत्र में कितने स्कूल/कॉलेज एवं विश्वविद्यालय होंगे, उनको सृजित करे, साथ में बजट के साथ इसकी मीनिटिरिंग करें और जिस दिन इस स्कूल/कॉलेज/विश्वविद्यालय को खोलें, उसी दिन से पूरे वेग से काम कराये। क्या ऐसी कल्पना की जा सकती है? हाँ, की जा सकती है। जिस देश में युवाओं की संख्या ७० प्रतिशत से अधिक हो, वे प्रतीक्षा नहीं कर सकते।

विकास के समय को क्या कम किया जा सकता है? हाँ किया जा सकता है। आज की जनसंख्या अपनी समस्या का तत्काल समाधान चाहती है। हम यह कहकर हाथ नहीं खड़ा कर सकते कि सभी शिक्षितों को रोजगार देना सरकार का कार्य नहीं है। क्या हम पानी, बिजली, सड़क, राशन, स्वास्थ्य के बारे में ऐसा कह सकते हैं? देश के नारियों की प्रसाधन-व्यवस्था हम ७० वर्ष बाद भी नहीं कर पाये हैं, तो इसमें दोष योजना का है।

कोविड के पहले छात्र एवं शिक्षकों के बीच में ऑनलाइन शिक्षण व्यवस्था नहीं थी। लेकिन कोविड काल में दोनों इस शिक्षा हेतु मजबूरी में तैयार हो गये। यह इस बात को दर्शाता है कि जो ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था विडियो कान्फ्रेसिंग हम कई वर्षों के बाद प्राप्त करते, हम ने तत्काल प्राप्त कर लिया। क्या ऐसी सोच अन्य कार्यों हेतु भी विकसित की जा सकती है? की जा सकती है, क्योंकि इसकी ऊर्जा हममें विद्यमान है। लेकिन ऐसी योजना बनते नहीं दिखती।

नये स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय खोलने के स्थान पर सभी स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों को अच्छा बनाने की आवश्यकता है। अगर आज के युग में स्कूल/कॉलेज/विश्वविद्यालय अपने वातावरण को डीजिटिल करने में असमर्थ हैं, तो इसमें गलती किसकी है? क्या इसके लिये केन्द्रीकृत प्रयास की आवश्यकता नहीं है?

बहुत से कार्यों को करने में बाधायें हैं। यदि स्कूल/कॉलेज/विश्वविद्यालय भी कुछ करने जाता है, तो बहुत-सी बाधायें आती हैं। इन सबके लिये एक संयुक्त केन्द्र बनना चाहिए और समस्याएँ आने पर इसे ही समाधान करना चाहिए।

नई शिक्षा नीति बहुत अच्छी है। इसमें भारत की भाषाओं पर जोर दिया गया है। इसे सामान्य रूप से लागू करने का

हमें प्रयास करना चाहिये।

यह बात सत्य है कि एक ही प्रयास में सतत रूप से छात्र स्नातक नहीं कर पाता है। इसके लिए नयी शिक्षा नीति में बी.ए./बी.एस.सी./बी.कॉम प्रथम वर्ष (स्नातक सर्टिफिकेट), द्वितीय वर्ष (स्नातक डिप्लोमा), तृतीय वर्ष (स्नातक डिग्री), चतुर्थ वर्ष (स्नातक रिसर्च) एवं पंचम वर्ष (पोस्ट ग्रेजुएट) में डिग्री का होना एक अच्छी नीति है। इसमें गरीब छात्रों को, जो एक प्रयास में डिग्री कोर्स नहीं करना चाहते हैं, या पोस्ट ग्रेजुएट नहीं करना चाहते हैं, उनके लिए इस नीति से लाभ होगा।

प्रत्येक विषय में अलग से रोजगारपरक सर्टीफिकेट कोर्स एवं डिप्लोमा कोर्स खुलना चाहिए और विश्वविद्यालय के अलावा कहीं और से मान्यता लेने की जरूरत नहीं होनी चाहिए। इनको पढ़ाने के लिये अतिरिक्त मानदेय की व्यव्यस्था होनी चाहिए।

आज के दिनांक में कोर्स की फीस वहन करना हर परिवार के लिये सम्भव नहीं है। लेकिन अगर कोई छात्र अध्ययन करना चाहता है और आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण अध्ययन से वंचित हो जाता है, तो यह बात राज्य के लिए सोचने की बात है। हर राज्य में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि हर छात्र को अपनी योग्यता के अनुसार शिक्षा मिल सके।

एक नये विश्वविद्यालय में नियमित छात्रों की सीट १०,५५० है और प्राइवेट छात्रों की संख्या ६०,००० है, तो यह दर्शाता है कि नियमित सीट के कम होने के कारण छात्र प्राइवेट से शिक्षा लेने को विवश हैं। हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि अधिकांश छात्र नियमित शिक्षा ले सकें। हम एक ही कॉलेज/विश्वविद्यालय में नियमित छात्रों की संख्या बढ़ा सकते हैं, लेकिन इस हेतु हमें सुबह एवं दिन/दोपहर की पॉली में कॉलेज/विश्वविद्यालय को खोलने के लिए कॉलेज/विश्वविद्यालय को अनुमति देनी होगी एवं अध्यापकों की संख्या बढ़ानी होगी, जो आर्थिक रूप से कमजोर राज्य हेतु कैसे सम्भव है, इस पर सोचना होगा।

हर समस्या का समाधान परिवार में निहित है। जैसे हम परिवार की समस्याओं का समाधान करते हैं, वैसे ही समाज एवं राष्ट्र की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है, विलम्ब केवल नीति बनाने की है।

मानव शरीर का आभूषण ज्ञान है। ज्ञान को संवर्धित करने से समाज एवं राष्ट्र शक्तिशाली होता है। उच्च ज्ञान हमेशा राष्ट्र को उन्नत बनता है। किसी राष्ट्र के सबल, शक्तिशाली होने में केवल पीढ़ी का हाथ नहीं होता है। यह कई पीढ़ियों के सतत प्रयास का फल होता है। सभी राज्यों में इस बात की होड़ होनी चाहिए कि उनके प्रदेश की शिक्षा की नीति सबसे अच्छी है और इस नीति को अपनाने से हमारे यहाँ के छात्रों को रोजगार मिल रहा है। कोई भी राज्य अपनी जनसंख्या के एक निश्चित भाग को ही नौकरी दे पाता है। जिन्होंने अपना रोजगार खोल लिया है, क्या वह रोजगार नहीं है? स्व-रोजगार को भी बढ़ावा देना चाहिए।

मैंने देखा है कि कपड़े की फैक्ट्री से कपड़ा लाकर, फुटकर में कई दुकानदार कपड़े बेचते हैं। दुकान होने पर वे कई फैक्ट्री का माल एक छत के नीचे बेचते हैं। सरकार से समझौते के तहत फैक्ट्री अपनी दुकान बनाकर, कई शहरों में अपनी दुकान खोलकर कई लोगों को रोजगार दे सकती है। शर्त यह हो सकती है कि लाभ का एक भाग सरकार को देकर एक निश्चित समय में दुकान अपने नाम कर सकती है। सरकार को एक विभाग बनाकर इस पर ध्यान देना चाहिए। उदाहरण के लिए भारत सरकार की शौचालय-योजना को लिया जा सकता है। भारत सरकार के अटल आवास-योजना को भी लिया जा सकता है। भारत सरकार के 'हर घर नल योजना' को भी लिया जा सकता है।

अगर आप ईमानदारी से कार्य करना चाहते हैं, तो मानव-कल्याण के लिये सीमा आकाश है। आप कहीं से भी प्रारम्भ कर सकते हैं। ○○○

कार्य अवश्य अच्छा है, पर वह भी तो विचार या चिन्तन से उत्पन्न होता है। शरीर के माध्यम से शक्ति की जो छोटी-छोटी अभिव्यक्तियाँ होती हैं, उन्हीं को कार्य कहते हैं। बिना विचार या चिन्तन के कोई कार्य नहीं हो सकता। अतः मस्तिष्क को ऊँचे-ऊँचे विचारों, ऊँचे-ऊँचे आदर्शों से भर लो और उनको दिन-रात मन के सम्मुख रखो; ऐसा होने पर इन्हीं विचारों से बड़े-बड़े कार्य होंगे।

केवल सत्कार्य करते रहो, सर्वदा पवित्र चिन्तन करो, असत् संस्कार रोकने का यही एक उपाय है।

– स्वामी विवेकानन्द

बनो और बनाओ – यही हमारा मूलमंत्र रहे

स्वामी नित्यज्ञानानन्द

सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल

युनान के प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात ने एक दिन अपने शिष्यों से पूछा – तुम लोग भविष्य में क्या बनना चाहते हो? किसी ने कहा – मैं चिकित्सक बनना चाहता हूँ, तो किसी ने कहा – मैं अभियन्ता बनना चाहता हूँ। इसी तरह किसी ने कहा – मैं राजनेता बनना चाहता हूँ, तो किसी ने कहा – मैं धर्मयाजक बनना चाहता हूँ, इत्यादि-इत्यादि। अन्त में, एक बुद्धिमान शिष्य खड़ा होता है और कहता है – मैं मनुष्य बनना चाहता हूँ। हमारी स्थिति भी इसी तरह है; हम डाक्टर, इन्जीनियर, वकील, राजनेता आदि तो बनना चाहते हैं, लेकिन विरले ही मनुष्य बनना चाहते हैं।

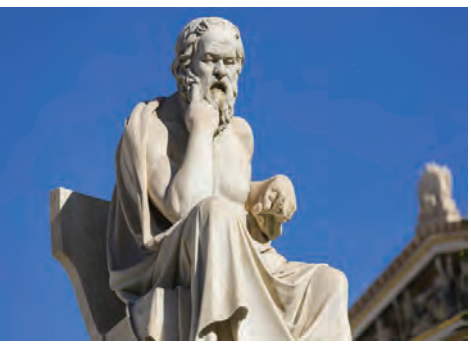

मनुष्य परिवार, समाज, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व की ईकाई होता है। यदि मनुष्य सही होता है, तो परिवार, समाज, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व सही होता है, सही मार्ग पर चलता है, शान्ति और समृद्धि को प्राप्त करता है। इसके विपरीत यदि मनुष्य सही नहीं हो, तो सम्पूर्ण विश्व की अधोगति, अवनति होती है। कन्फूशियस के अनुसार – 'जिसमें मनुष्यत्व नहीं है, वह न तो अधिक काल तक निर्धनता को सहन कर सकता है और न ही सम्पन्नता को पचा सकता है'। निर्धन्ता उसे पशु में परिणत कर देती है और सम्पन्नता बर्बर बना देती है। अतएव मनुष्य ही सबका केन्द्र बिन्दु है और मनुष्य-निर्माण ही सबसे पहली आवश्यकता है। इसीलिए स्वामी विवेकानन्दजी कहा करते थे – 'मनुष्य निर्माण करना ही मेरा जीवनोद्देश्य है'। वे कहा करते थे – 'मनुष्य, केवल मनुष्यों की आवश्यकता है; बाकी सब अपने आप ठीक हो जायेगा। किन्तु आवश्यकता है वीर्यवान, श्रद्धावान, निष्ठावान और तेजस्वी नवयुवकों की।'

अब प्रश्न है : क्या हम मनुष्य नहीं हैं? इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि हम शारीरिक आकृति से तो मनुष्य अवश्य हैं, परन्तु हमारे अन्दर जब तक मानवीय विचार, मानवीय गुण, मानवीय संस्कार एवं मानवीय आचरण नहीं हैं, तब तक सही अर्थों में हम मनुष्य नहीं हैं। इन मानवीय विचारों, मानवीय गुणों, मानवीय संस्कारों एवं मानवीय आचरणों को अपने अन्दर लाना ही सही अर्थ में मनुष्य बनना है और इसी का नाम चरित्र-गठन है। अतएव मनुष्य बनने का सरल सूत्र है; अपने स्वयं के चरित्र का निर्माण एवं दूसरों को भी वैसा ही करने में सहायता प्रदान। स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में 'बनो और बनाओ' ही मनुष्य निर्माण का सरलतम सूत्र है।

स्वामी विवेकानन्दजी के अनुसार – 'किसी भी व्यक्ति के संस्कारों की समष्टि, उसकी सभी मानसिक वृत्तियों का संकलन ही उसका चरित्र है। अपने विचारों के द्वारा ही हमारा निर्माण हुआ है। हमारा प्रत्येक कार्य, प्रत्येक गतिविधि, प्रत्येक विचार मन पर एक संस्कार छोड़ जाता है। प्रत्येक व्यक्ति का चरित्र इन संस्कारों की समष्टि से निर्धारित होता है। यदि अच्छे संस्कारों का प्राबल्य हो, तो चरित्र अच्छा हो जाता है और बुरे संस्कारों से वह बुरा हो जाता है।' अतएव, कोई मनुष्य अच्छे विचार रखे और सत्कर्म करता रहे, तो उसका मन अच्छे संस्कारों से भर जायेगा तथा इन संस्कारों के प्रभाव से वह आगे भी सदा सत्कर्म करता रहेगा। इस प्रकार वह अच्छा मनुष्य बन जायेगा।

एक शिशु का चरित्र उसकी गर्भावस्था में ही गठित होने लगता है। जाने या अनजाने ही, माता-पिता अपने विचारों एवं कार्यों से शिशु का चरित्र गठन करते हैं। प्रारम्भ में निष्चेष्ट रूप से ही शिशु में उनके अच्छे-बुरे सारे आचरण संक्रमित हो जाते हैं, उसमें विचार या प्रतिरोध करने की क्षमता नहीं होती। जब बालक सचेतन रूप से निरीक्षण

करना सीखता है, तो वह अपने माता-पिता को देखकर उनका अनुकरण करते हुए, स्वयं के चरित्र का निर्माण आरम्भ कर देता है। अतएव एक बालक बड़े होकर किस प्रकार का चरित्र प्रकट करेगा, यह कुछ सीमा तक उसके माता-पिता पर निर्भर करता है। महापुरुषों के आदर्श चरित्र प्राय: माता-पिता से ही उत्पन्न हुआ करते हैं।

बालकों के चरित्र निर्माण में माता-पिता के बाद शिक्षकों का ही स्थान है। इसीलिए प्राचीन भारत में शिक्षादान का उत्तरदायित्व आदर्श चरित्रवाले ऋषियों के ऊपर ही न्यस्त था। आदर्श शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं – 'जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें, मनुष्य बन सकें, चरित्र गठन कर सकें और विचारों का सामंजस्य कर सकें, वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है।'

माता-पिता एवं शिक्षक के अतिरिक्त सामाजिक परिवेश का भी बालक के ऊपर सशक्त प्रभाव होता है। माता-पिता एवं शिक्षक के द्वारा यदि बालक के सच्चरित्र का निर्माण किया गया हो, तो सामाजिक परिवेश के प्रभाव को रचनात्मक ढंग से सम्भाला जा सकता है।

चरित्र-निर्माण में संयम एवं सद्गुणों के विकास का अत्यधिक महत्त्व है। गीता के १६ वें एवं १७ वें अध्याय में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से सत्य, अहिंसा, अक्रोध, दया, क्षमा, पवित्रता, ब्रह्मचर्य आदि ऐसे दिव्यगुणों की बात बताते हैं, जो मनुष्य के सच्चरित्र का निर्माण करते हैं। चरित्र के निर्माण में श्रद्धा, विवेक, धैर्य एवं उत्साह की अति उपयोगिता है, इसके बिना हम सफल नहीं हो सकते। धैर्य एवं संयम के साथ हमें अपने अन्दर सद्गुणों का विकास करना होगा, उन्हें अभ्यास में परिणत करना होगा। चरित्र निर्माण हेतु सुनियोजित एवं संयमित जीवन अति आवश्यक है। 'जीवन का नियमन जीवन से भी मूल्यवान है, क्योंकि नियमन के द्वारा ही (जीवन का) मूल्य प्राप्त होता है' – तिरुवल्लुवर की प्रसिद्ध उक्ति है। अतएव सदा के लिए अपने चरित्र-निर्माण रूपी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु कार्य में जुट जाना चाहिए।

कभी-कभी यह पूछा जाता है कि हम अपने चरित्र का सुधार कैसे करें। इसके उत्तर में स्वामी विवेकानन्द जी कहते हैं – 'असत् अभ्यास का एकमात्र प्रतिकार है : सत् अभ्यास। हमारे मन में जितने असत् अभ्यास संस्कारबद्ध हो गये हैं, उन्हें सत् अभ्यास के द्वारा नष्ट करना होगा। केवल सत्कर्म करते रहो, सर्वदा पवित्र चिन्तन करो, असत् अभ्यास रोकने का बस यही उपाय है। ऐसा कभी मत कहो कि अमुक व्यक्ति के सुधार की कोई आशा नहीं; क्योंकि वह तो केवल कुछ असत् अभ्यासों का प्रदर्शन मात्र कर रहा है और ये असत् अभ्यास नये सत् अभ्यासों के द्वारा दूर किये जा सकते हैं। चरित्र पुन:-पुन: अभ्यास की समष्टि मात्र है और इस प्रकार पुन:-पुन: अभ्यास के द्वारा चरित्र का सुधार भी किया जा सकता है।' इस प्रकार हम अपनी पुरानी बुरी आदतों, बुरी प्रवृत्तियों, बुरे संस्कारों के स्थान पर अच्छी आदतों, अच्छी प्रवृत्तियों, अच्छे संस्कारों को उत्पन्न कर अपने चरित्र का सुधार कर सकते हैं, एक अच्छे चरित्र का निर्माण कर सकते हैं। हमें बिना किसी भय अथवा निराशा के इस संघर्ष का सामना करते हुए आगे बढ़ना होगा। हमारे अपने पुराने बुरे संस्कार इसका कठोर प्रतिरोध करेंगे। परन्तु यदि हमें पूर्ण विश्वास है कि अच्छे चरित्र के बिना हमारा जीवन निरर्थक है, तो हम अवश्य सफल होंगे।

अच्छे चरित्र का निर्माण करनेवाले सत्कर्मों एवं सद्गुणों को ही हमारे शास्त्रों में धर्म की संज्ञा दी गयी है। यदि हमारे अन्दर ये सद्गुण न रहें और हम सत्कर्म न करें, तो हममें और पशु में कोई अन्तर नहीं रह जायेगा। हमारा जीवन अपने लिए एवं समाज के लिए अभिशाप बनकर रह जायेगा। अतएव विश्व के प्रत्येक विचारवान व्यक्ति को चरित्र निर्माण पर ध्यान देना होगा तथा तथा यथासम्भव दूसरों को भी वैसा ही करने में सहायता प्रदान करना होगा ताकि हम अपने लिए, परिवार के लिए, समाज के लिए, देश के लिए एवं पूरे विश्व के लिए वरदान बनकर जियें; हमारा जीवन सफल और सार्थक हो। इसीलिए स्वामी विवेकानन्द कहते हैं – 'बनो और बनाओ' – यही हमारा मंत्र रहे। ○○○

युवाओं में विलक्षण सम्भवनाएँ और उनकी चुनौतियाँ

स्वामी आत्मश्रद्धानन्द

सचिव, रामकृष्ण मिशन आश्रम, कानपुर

विलक्षण सम्भावनाएँ

युवावस्था अद्‌भुत सम्भावनाओं का समय है। यह अवस्था मनुष्य के जीवन पर विस्मयकारी एवं दूरगामी प्रभाव डालती है। प्राय: जीवनपर्यन्त ही मनुष्य पर विभिन्न प्रभाव पड़ते रहते हैं, परन्तु युवावस्था में मनुष्य जो कुछ अनुभव प्राप्त करता है, वह उसके चरित्र पर इतना गहन प्रभाव डालता है कि या तो वह शेष जीवन सुखद अनुभवों के आनन्द में बीताता है या द्वंद्वों से संघर्ष करते हुए।

युवावस्था अच्छे-बुरे सभी प्रकार का प्रयोग का समय है। मनुष्य अगर युवावस्था में प्रयोग नहीं करेगा, तो कब करेगा? युवावस्था में ही मानव शरीर एवं मन अपने उच्चतम शिखर पर होते हैं। जीवन के हर प्रयोग में शक्ति, साहस और दृढ़ इच्छा की आवश्यकता होती है। यह आवश्यक है कि मनुष्य की इन्द्रियाँ सुविकसित हों, बुद्धि प्रखर हो और उसमें संकटों से संघर्ष करने का साहस हो। प्रत्येक युवा को यह अवसर मिलता है कि वह प्रयोग करे और उनसे सीखे।

युवा मानवीय सम्भावनाओं का प्रतीक है। तैत्तिरीय उपनिषद सुखों के विभिन्न स्तरों का चित्रण करते हुए युवाओं को सज्जन, शिक्षित, आशावादी, सुदृढ़ और सर्वाधिक ऊर्जावान के रूप में सम्बोधित करता है – **युवा स्यात्साधुयुवाध्यायक आशिष्ठो, द्रढिष्ठो बलिष्ठस्तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्य पूर्णा स्यात्।** अगर सम्पूर्ण धरा धन से भरी हुई हो, तब भी यह मानवीय आनन्द का अंश मात्र होगा। पूर्ण युवावस्था ही वह अवस्था है, जो समग्र मानवता प्राप्त करना और संजोये रखना चाहती है। परन्तु ऐसी पूर्ण युवावस्था भी आनन्द का एक अंश है, इसके अलावा भी इससे उच्चतर अंश आनन्द की अवस्थाएँ हैं। उपनिषद इससे आगे आनन्द के विभिन्न स्तरों का वर्णन करते हैं, जिसका अंश है संरक्षित शक्तिशाली, गुण एवं वैभवसम्पन्न युवा। इस गौरव को गरिमापूर्वक स्वीकार करते हुए, प्रत्येक युवा को यह समझना चाहिए कि केवल युवा होना ही आनन्द का एक प्रकार नहीं है, उपनिषद इसके अतिरिक्त भी आनन्द के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख करते हैं – मनुष्य-गन्धर्व, देव-गन्धर्व, कर्म-देव, इन्द्र एवं अन्य अन्तरिक्ष प्राणियों का आनन्द। ये आन्तरिक्ष जीव सत्ता है या काल्पनिक, यह विषय महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि इन सभी उच्चतर आनन्द को मापने का मापक मानव युवा है।

युवा-प्रकृति

सभी जानते हैं, युवावस्था परिवर्तनशील है। युवावस्था जीवन में पुन: नहीं आती है। हम एक ही बार युवा होते हैं। आयु का बढ़ना जीवन का एक भाग है। यह सामान्य व्यावहारिक बुद्धि की बात है कि यदि हम मनुष्य अपने शैशव काल, पराश्रित अवस्था को छोड़कर युवा हुये हैं, तो यह युवावस्था भी निरन्तर नहीं रहेगी। जीवन की विभिन्न अवस्थाएँ हैं, युवावस्था उनमें से एक है। यदि हम चित्र का एक भाग देखें, तो वह कभी ठीक नहीं हो सकता। मान लीजिए, आप एक पिनहोल कैमरे की मदद से या फिर अपनी अंगुलियों को वृत्ताकार कर आँखों के समक्ष ऊपर रख एक बिल्ली को देखें, तो इस बाधित दृष्टिकोण से आप बिल्ली की केवल मूँछें या पूँछ ही देख सकेंगे। सीमित दृष्टि सीमित सत्य को अभिव्यक्त करती है। कुछ ऐसा ही उन लोगों के साथ है, जिनकी यह धारणा है कि युवा अवस्था चिर स्थायी है। ऐसा कदापि नहीं है।

वह मनुष्य जिसका विवेक जागृत है, इस सत्य को शीघ्र और स्पष्ट रूप से समझेगा तथा अपनी युवावस्था के वर्षों को सार्थक बनाने में सक्षम होगा। कठोपनिषद् इस सत्य का विवेचन युवा नचिकेता के उदाहरण से करता है। कथानुसार नचिकेता अपनी किशोरावस्था में अपने पिता द्वारा जीर्ण गायों

का दान दिये जाने पर प्रश्नचिह्न लगाता है। अन्य बड़े लोगों वयस्कों की भाँति ही युवा द्वारा प्रश्न किये जाने पर पिता ने अपना संयम खो दिया और उसे यमराज के पास जाने को कहा, क्योंकि नचिकेता भी स्वयं को दान देने के लिये कह रहा था। क्योंकि वह भी अपने पिता की 'सम्पत्ति' था। आज्ञाकारी नचिकेता ने पिता की आज्ञा का पालन किया, परन्तु उसे तीन दिनों तक यमराज की प्रतीक्षा करनी पड़ी। यमराज ने नचिकेता को हुए इस कष्ट के लिए क्षमा माँगी और उसे तीन वर माँगने को कहा। पहले वर के रूप में उसने यमराज से कृपाकर अपने पिता की क्रोधाग्नि को शान्त करने को कहा और दूसरे वर के रूप में एक विशिष्ट यज्ञ की विधि का ज्ञान प्राप्त किया।

उसका तीसरा वर एक प्रश्न के रूप में था। नचिकेता आत्मा के सत्य को जानना चाहता था। यमराज उत्तम गुरु होने के कारण पहले यह जानना चाहते थे कि उनका शिष्य ज्ञान प्राप्त करने का अधिकारी है अथवा नहीं। अत: यम ने झिड़कते हुए पूछा ''इतने उलझे हुए प्रश्न क्यों पूछते हो? इनसे स्वयं को परेशान करने की आवश्यकता नहीं है। जाओ और आनन्दपूर्वक जीवन का उपभोग करो। तब नचिकेता ने अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उत्तर दिया ''आप मुझे आनन्दपूर्वक उपभोग करने को कहते हैं, पर क्या यह आनन्द स्थायी है? इन्द्रियाँ जो भोग का साधन हैं, वे समय के साथ क्षीण होती जाती हैं। निरपवाद रूप से सभी प्राणियों का जीवन अल्पकालिक है, दीर्घ से दीर्घ जीवन भी चिरकालिक नहीं है। अत: हमें इन अस्थायी सुखों के उपभोग की अपेक्षा, उस शाश्वत सत्य को प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए। अत: नचिकेता ने यमराज द्वारा प्रदान किये जा रहे नृत्य, गायन, वाहन जैसे भोगों से युक्त दीर्घायु जीवन को अस्वीकार कर दिया। उस युवा बालक में ऐसा साहस और विवेक था !

यमराज को नचिकेता के समक्ष झुकना पड़ा। इसके पश्चात् उपनिषद में यमराज के द्वारा सरल व्याख्या की गई है कि मनुष्य को जीवन कैसे व्यतीत करना चाहिए, जिससे वह सदा के लिए अमर हो सके।

यमराज द्वारा दिए गए प्रलोभनों को ठुकराकर नचिकेता ने जिस अनुकरणीय साहस का परिचय दिया है, वह विरला ही है। अधिकांशत: युवा यमराज के प्रलोभनों से आकर्षित हो जायेंगे। वे यमराज की बात से सहमत होंगे, जब वह कहते हैं कि ''जीवन का आनन्द लो, इन अतीन्द्रिय सत्य के बारे में व्यर्थ चिन्तन मत करो''। अधिकांशत: युवा कहेंगे 'हाँ' आप सत्य कहते हैं। इस प्रकार अधिकांश युवा यमराज के छलावे में फँसकर उस परम सत्ता को जानने का दुर्लभ अवसर खो देते हैं। इस प्रकार वे जीवन की अन्धकारमयी गलियों में खो जाते हैं।

एक स्वर्णिम काल

युवावस्था बहुमूल्य है। यह मानव जीवन का सर्वश्रेष्ठ काल है। जिस प्रकार बीज बोने का सबसे उचित समय वर्षा ऋतु के ठीक पहले है अथवा किसी भी धातु को सही आकार तभी दिया जाता है, जब वह गर्म और लचीला हो, उसी प्रकार युवावस्था ही जीवन में परिवर्तन लाने का सर्वश्रेष्ठ काल है। यह काल है नवाकार प्रदान करने का, बीजारोपण का। श्रीरामकृष्ण युवाओं की तुलना कच्ची ईंट से करते हैं। वे कहते थे मिट्टी की ईंट के भट्टी में पकने से पहले उस पर कोई भी छाप डाली जा सकती है, परन्तु भट्टी में पकने के बाद, उसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता। वस्तुत: ऐसी है युवावस्था, परन्तु दुर्भाग्यवश वस्तुत: अधिकांशत: युवा एवम् उनके अभिभावक इस सत्य को नहीं समझते। युवाओं का इन सत्य को न समझना समझा जा सकता है। उनके पास अनुभव की कमी होती है। इस सत्य की अनुभूति के लिए जिस मानसिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है, उनमें इसका अभाव है। प्राय: कई मंचों पर यह उक्ति दोहराई जाती है कि युवा ही हमारी आशा हैं, परन्तु यह आशा दिग्भ्रमित एवं अप्रशिक्षित युवा से नहीं है। आशा है सुप्रशिक्षित, परिश्रमी एवं ईमानदार युवा से। शेष सभी भय और विनाश की ओर अग्रसर हैं। एक हिंसक, अप्रशिक्षित, अयोग्य, अहंकारी युवा से क्या आशा की जा सकती है !

इसके अतिरिक्त बहुत-से अधिकांश अभिभावक भी इस सत्य से अनिभिज्ञ हैं। इसीलिये स्वार्थी, भोग-लोलुप एवं अदूरदर्शी नर-नारियों द्वारा युवाओं का जीवन एक उच्चतर जीवन से वंचित रखा जाता है। आज टीवी पर जो दिखाया जा रहा है, रेडियो और सीडी पर जो गाने सुने जा रहे हैं या सामान्य ज्ञान के नाम पर मैग्जीन और अखबारों में जो पढ़ा जा रहा है, क्या एक जिम्मेदार अभिभावक ऐसे स्तरहीन एवं घृणित विषय-वस्तु को युवाओं के कच्चे मन को प्रभावित होने की अनुमति दे सकता है? निसन्देह युवाओं की अपेक्षा नीति-निर्माताओं, युवाओं के प्रशिक्षकों एवं अभिभावकों को

सही मार्गदर्शन देने की आवश्यकता है। सभी बुराइयों के लिये युवावर्ग को दोषी ठहराना अनुचित है। बाकी लोगों को भी युवाओं के समक्ष स्तरहीन आदर्श प्रस्तुत करने के लिए स्वयं को उत्तरदायी मानना होगा।

इस अन्धकारमय एवं कटु सत्य को जानने के पश्चात् भी इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि युवा ही भविष्य का वरण करेंगे, ठीक उसी प्रकार जैसे उनके अभिभावकों-पूर्वजों ने इस वर्तमान का किया था। भविष्य युवाओं के हाथ में है, युवाओं के पास इसका विकल्प नहीं है। भविष्य युवाओं के हाथ में है फिर चाहे तो लक्ष्य के प्रति सचेत युवा हो या दिग्भ्रमित युवा। कोई सरकार या समाज इस अवश्यम्भावी को रोक नहीं सकती। यह कालचक्र का सर्वविदित नियम है।

दिग्भ्रमित युवा एक विस्फोटक 'टाइम बम' है। हम भले ही उसके होने की उपेक्षा करें, परन्तु उसे नकार नहीं सकते। जैसे-जैसे घड़ी की सूई आगे बढ़ रही है, हम हिंसा, अस्थिरता और अवसाद की दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। आज के युवा ही कल के अभिभावक हैं। अभिभावक आसमान से प्रकट नहीं होते, वर्तमान युवा ही अभिभावक बनते हैं।

श्रेष्ठता, महानता की अभिलाषा

युवाओं और अभिभावकों के मध्य के इस गतिरोध के अतिरिक्त एक और बात है। उपलब्धियों और महानता को प्राप्त करने की जो ललक युवाओं में होती है, वह किसी दूसरे में नहीं होती। महान नर-नारियों से युवा सर्वत्र अत्यधिक प्रेम करते हैं। अधिकांशत: युवा लोकप्रिय व्यक्तित्वों के प्रति अधिक आकर्षित होते हैं, चाहे वह लोकप्रिय व्यक्ति अधम ही क्यों न हो। युवा हृदय में महान बनने की अभिलाषा सर्वदा विद्यमान रहती है। वे अपनी अनुभवहीनता और सरलता के कारण भले ही लोकप्रियता और महानता में भेद न कर पाएँ, परन्तु उत्कृष्टता के लिए उनकी खोज सत्य और निश्छल होती है।

युवा हमेशा सर्वोत्कृष्ट दक्षता की कल्पना करता है। वह अपने जीवन में एक निर्दोष सर्वोत्तम मित्र, सर्वोत्तम शिक्षक, जीवन का सर्वोत्तम दर्शन, सर्वोत्तम नौकरी, सर्वोत्तम जीवनकला की कल्पना करता है। सर्वोत्तम की यह परिकल्पना उसे विभिन्न सामाजिक, राजनैतिक एवं धार्मिक आन्दोलनों में प्रवृति करती है। इस बात की पुष्टि सहज ही देखी जा सकती है। श्रेष्ठता की इस परिकल्पना के अनेकों अन्वषेक हैं, चाहे युवा अवस्था में अपने प्राण गँवाने को गौरव समझनेवाला आतंकी हो या दिव्य प्रेरणा से प्रेरित आध्यात्मिक साधक, जो आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए सर्वस्व त्याग कर देता है।

कोई भी महान क्रान्ति तभी गतिशील और सफल होती है, जब युवा उस आदर्श से प्रेरित होकर उसमें अपना योगदान देता है। चाहे वह भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन हो, दक्षिण अफ्रीका का रंग-भेद आन्दोलन या विश्व के विभिन्न भागों के अनेक आदर्शवादी अभियान हों, युवाओं का उससे जुड़ना ही उन्हें गति प्रदान करता है, सफल बनाता है। एक शताब्दी पूर्व श्रीरामकृष्ण ने भी कुछ ऐसा ही किया। उनके आकर्षक व्यक्तित्व एवं आध्यात्मिक तेज से प्रेरित होकर युवाओं का एक समूह उनके पास एकत्रित हुआ और श्रीरामकृष्ण भावधारा का श्रीगणेश हुआ। युवा और उनकी सहभागिता ही सबकी कुंजी है।

श्रेष्ठता का आदर्श

युवा श्रेष्ठता के अनुसन्धान के मार्ग में विभिन्न प्रयोग करता है, आकलन, प्रयत्न-त्रुटि-विधि (सफलता प्राप्ति तक अनवरत प्रयत्न) में फँस जाता है। युवाओं का स्वभावत: जिज्ञासु मन, जब अपने आसपास के आडम्बर को देखता है एवं प्रचलित मीडिया के माध्यम से प्रसारित क्रान्तिकारी विचारों से प्रभावित होता है, तब वह एक विचित्र मानव रूप में परिणत हो जाता है। उसे सहज ही दिग्भ्रमित किये जाने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं। मीडिया एवं अन्य सामाजिक शक्तियाँ भी युवाओं को ही लक्ष्य बनाती हैं। सम्पूर्ण विज्ञापन उद्योग, उपभोग की वस्तुओं के प्रचार के लिये, युवाओं पर ही केन्द्रीभूत हैं। उनका पूरा उद्योग युवाओं पर निर्भर है। युवा होना आधुनिकता, शक्ति और मनोरंजन का पर्याय बन चुका है।

युवा उस चौराहे पर खड़ा है, जहाँ उसे यह निर्णय लेना है कि वह किस पथ का चयन करे, जिस ओर अधिकांश लोग जा रहे हैं उसका या उस विशेष पथ का जिस पर कम लोग या विरले ही अग्रसर होते हैं। प्रत्येक युवा में एक भावी नेता या इंजीनियर, भावी चिकित्सक, वैज्ञानिक, खिलाड़ी, अर्थशास्त्री, संत या पापी निवास करता है। जिस बात पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, वह है उस युवा में अन्तर्निहित महानता की अभिव्यक्ति की ओर, जो धीरे-धीरे उसमें विलीन होती जा रही है। प्रत्येक युवा या तो समाज

के लिये एक अभिशाप हो सकता है या वरदान। इस तथ्य को अतिशीघ्र समझने की आवश्यकता है।

अनेकों उदाहरण

स्वामीजी का युवाओं के प्रति अमोघ प्रेम इस तथ्य को दर्शाता है कि वे उन्हें भली-भाँति समझते थे। उन्होंने कहा है मेरा विश्वास युवाशक्ति में है, आधुनिक पीढ़ी में है। युवाओं में इतिहास रचने की क्षमता है। ऊर्जावान आशावादी युवा उस कार्य को सम्भव कर सकता है, जो कार्य थके और वृद्धों के लिये असम्भव है। इस तथ्य की पुष्टि हेतु अनेकों उदाहरण विद्यमान हैं। **आदिशंकराचार्य** जो एक श्रेष्ठ अद्वैतवादी थे, जिन्होंने बौद्धिक एवं आध्यात्मिकता के शिखर को अपनी किशोरावस्था में ही प्राप्त कर लिया था। उनका देहान्त ३२ वर्ष की अल्पायु में ही हो गया था। **स्वामी विवेकानन्द** ने शिकागो के विश्व धर्म-सम्मेलन में ऐतिहासिक व्याख्यान, लगातार प्रवचन-यात्राएँ, रामकृष्ण मठ एवं मिशन की स्थापना, जैसे सभी महत्त्वपूर्ण कार्य अपने यौवनकाल में ही सम्पन्न किये थे। प्रसिद्ध हिन्दूशास्त्र श्रीमद्भागवत के आचार्य श्रीशुकदेवजी भी युवा संन्यासी ही थे, जिनको अद्वितीय चरित्र और विवेक ने उन्हें इतना समर्थ बनाया कि वे विद्वानों की सभा में परम सत्य की विवेचना कर सके। शिवजी के किशोर भक्त मार्कण्डेय, उपनिषदों के आत्मज्ञान के युवा जिज्ञासु श्वेतकेतु, महाभारत के युवा भीष्म, जिन्होंने अपने ब्रह्मचर्य और आत्मसंयम के बल पर असंख्य हृदयों में स्थान पाया, हिन्दू शास्त्रों में प्रचलित चार कुमार युवा संन्यासी, भारतीय संस्कृति में ऐसे अनेकों युवाओं के दृष्टान्त हैं, जिनके जीवन में महानता एवं उत्कृष्टता परिलक्षित होती है। गुरु के सम्मान में एक प्रचलित श्लोक में कहा गया है।

चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धशिष्या गुरुर्युवा।
गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिस्यास्तु छिन्नसंशयाः।।

उस वट वृक्ष के नीचे एक विचित्र दृश्य है। एक युवा गुरु वयस्क शिष्यों से घिरा हुआ बैठा हुआ है। गुरु मौन है, तथापि शिष्यों के सभी संशयों का निराकरण हो रहा है। अतः युवा होना बुद्धिमत्ता और महानता में बाधक नहीं है।

युवा शक्ति का दिशा निर्देशन

युवा व्यक्तिगत और सामूहिक शक्ति है। परन्तु इस शक्ति का उचित उपयोग अनिवार्य है। परमाणु शक्ति यदि वश में न हो, तो एक सम्पूर्ण राष्ट्र को विध्वंस कर सकती है। परन्तु यदि इसी शक्ति को संयमित किया जाए, तो सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए ऊर्जास्रोत बन सकती है। हेनरी इमरसन कॉस्डिक कहते हैं – ''कोई भी घोड़ा, यदि वश में न हो, तो वह कहीं नहीं पहुँचता है। बिना बन्द हुये भाप या गैस किसी वस्तु को गतिशील नहीं कर सकती। कोई भी जल-प्रपात सुरंग से गुजरे बिना प्रकाश और ऊर्जाशक्ति में परिवर्तित नहीं होता। कोई भी जीवन केन्द्रित, समर्पित और अनुशासित हुये बिना महान नहीं होता।''

युवा शक्ति का सही उपयोग कैसे हो? उसे एक दिशा प्रदान करनी चाहिए और युवा को उस दिशा में प्रेरित करने हेतु उसकी आवश्यकता एवं महानता से अवगत कराना चाहिए। यह युवाओं एवं वरिष्ठ लोगों का पावन कर्तव्य है कि वह युवा शक्ति को अपने तथा दूसरों के हित के लिये प्रेरित करे।

अभिभावकों को चाहिए कि वे युवाओं की त्रुटियों और गलत दृष्टकोण को देखते हुए भी अपने अनुभव और धैर्य के माध्यम से उनकी सहायता करें। दूसरी ओर युवाओं को भी महानता और उत्कृष्टता के पथ पर अग्रसर होने के लिये वरिष्ठ लोगों से सीखने को तत्पर रहना चाहिए।

युवाओं के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती उनका अपना अन्तर्मन है। मनुष्य हिमालय के शिखर तक पहुँच सकता है, आग के गोले में कूद सकता है, सँकरी लम्बी गुफा रेंगकर पार कर सकता है या वह सभी दरिद्रों को धनवान बनाने का अचानक रातभर में क्रान्ति लाने की कल्पना कर सकता है और महान नयी सामाजिक व्यवस्था का निर्माण कर सकता है। या कोई ऐसी आदर्शवादी संरचना स्थापित हो, जिससे सबकी आवश्यकताओं और अपेक्षाओं की पूर्ति

हो, युवावर्ग इन सबको और इससे भी अधिक करने की क्षमता रखता है। परन्तु सबसे अधिक आवश्यकता है युवाओं के चरित्र-निर्माण की, क्योंकि एक सुगठित, उज्ज्वल महान व्यक्तित्व ही सबसे अमूल्य एवं प्रभावी साधन है, जिससे

उपर्युक्त सभी कार्य सम्भव हो सकते हैं एवं सफलता की निरन्तरता बनाये रखने में भी सहायक हैं। अध्यात्मिकता से परिपूर्ण व्यक्तित्व ही महान जीवन का, महान चरित्र एवं समाज का बीज है।

चरित्र निर्माण

वेदान्त के मतानुसार मानव चरित्र का आधार वह दिव्यता है, जिसे शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्ति नहीं किया जा सकता, परन्तु उसकी अनुभूति और अभिव्यक्ति जीवन में की जा सकती है। इस दिव्यता का स्वभाव सत् – शाश्वत सत्ता, चित् – चैतन्य, ज्ञान और आनन्द है।

व्यवहारिक दृष्टिकोण से, इस अन्तर्निहित दिव्यता की अभिव्यक्ति के लिए अपने विचारों का ध्यान रखना आवश्यक है। विचार ही कर्म में परिणत होते हैं। प्रत्येक युवा को यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए – कोई गोपनीय रहस्य हमारे जीवन को संचालित नहीं करता है, इसे हमारे अच्छे या बुरे विचार परिचालित करते हैं। चरित्र निर्माण का अर्थ है इस बात का ध्यान रखना कि हमारे विचार कैसे हैं।

कभी-कभी हम अपने विचारों को समझने में सक्षम होते हैं, परन्तु कभी हम विचारों की गति को मापने में असमर्थ हो जाते हैं। पानी की टंकी के तल के समान बहुत से विचार हमारे मन की नीचली सतहों में ठहर जाते हैं और हम इसका अनुभव नहीं कर पाते। ऐसे विचार हमारी विचारधारा बन जाते हैं, जिन्हें 'संस्कार' कहा जाता है। यदि किसी के संस्कार अच्छे एवं महान हैं, तो उसका आन्तरिक एवं बाह्य जीवन सुव्यवस्थित एवं सुरक्षित होगा। परन्तु यदि बुरे संस्कारों का प्राबल्य है, तो जीवन असहनीय एवं कष्टकर हो जाता है। अत: मनुष्य को अपने विचारों का ध्यान रखना चाहिए। विचार अति महत्त्वपूर्ण है।

विचार मन का पोषण करते हैं, सकारात्मक एवं पवित्र विचार मन का पोषण और उसे सशक्त बनाते हैं। नकारात्मक विचार अपने स्वभाव के अनुसार हमें शिथिल करते हैं तथा पीड़ा एवं कष्ट प्रदान करते हैं। महान विचार, चिन्तन जीवन को महान बनाते हैं। यह सम्भव नहीं है कि मनुष्य का चिन्तन निकृष्ट हो और वह महान बनने की कामना भी करे।

व्यक्ति के विचार को विकसित करने के लिये महत्त्वपूर्ण है 'श्रद्धा' का विकास। श्रद्धा शब्द स्वयं में बहुत गहन है। इसका अर्थ केवल आस्था तक ही सीमित नहीं है। व्युत्पत्ति के अनुसार इसका अर्थ है सत्य को धारण (श्रत् - सत्य, धारणा-धारण करना) की क्षमता। सत्य को वही प्राप्त कर सकता है, जिसमें ज्ञान की जिज्ञासा है और इस पथ पर आने वाले अवरोधों के समक्ष खड़े होने का बल है। श्रद्धा अर्थात् विश्वास, इच्छा एवं बल का समन्वय। जिसके पास श्रद्धा है, उसके पास सर्वस्व है। गीता का सन्देश है – **श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्** – जो श्रद्धावान् है, वह ज्ञान को प्राप्त करता है।

चरित्र का निर्माण हमारे विचारों और भावनाओं के एकाकी अभयारण्य में नहीं होता, अपितु समाज के साथ हमारे वास्तविक व्यवहार से भी होता है। समाज हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, परन्तु उसके प्रति हमसे उत्तरदायित्वों के निर्वहण की अपेक्षा रखता है। इसके लिये आवश्यकता है, हम परस्पर मैत्री भावना का विकास करें।

वर्तमान एवं भविष्य के युवाओं के समक्ष अगर कोई सच्चा आदर्श है, तो वह है आत्म-परिवर्तन और परहित का। चाहे जितनी भी कठिनाईयाँ हो, प्रत्येक युवा, चाहे वह किसी भी आयु, योग्यता अथवा समाज से आता हो, उसके समक्ष यही सबसे बड़ी चुनौती है।

युवाओं के समक्ष दो प्रमुख बाधाएँ हैं, आत्मविश्वास का अभाव, आत्मश्रद्धा का अभाव एवं आडम्बर। हमारे विश्वास की अनेक परीक्षायें होती हैं – हमें हतोत्साहित किया जाता है, हमारी उपेक्षा एवं निन्दा की जाती है। इस अन्धकारमय पथ को युवा केवल विश्वास रूपी प्रकाश की सहायता से ही पार कर सकता है। यदि कोई इसमें सफल हो जाता है, तो आडम्बर और बेईमानी रूपी बाधा, चुनौती भरी दृष्टि से उसकी ओर देख रही होती है। यदि वह इस चुनौती का सामना करने के लिए तैयार नहीं है, तो सम्भवत: इस जाल में फँसकर दिग्भ्रमित हो जाएगा। आडम्बर रूपी दैत्य मनुष्य को भीरु बना देता है और वह अपनी इस कायरता, लक्ष्यहीनता और मूढ़ता को सही उचित प्रमाणित करने के लिये कारणों का अवलम्बन लेने का प्रयास करता है।

अवसाद रूपी भय जो युवाओं को बारम्बार त्रस्त करता है, उसकी विवेचना भी आवश्यक है। अवसाद है क्या? जब नकारात्मक विचारों का समूह दृढ़ भावना रूपी गोद से जुड़ जाता है, तब परिणाम स्वरूप अवसाद उत्पन्न होता है। प्रत्येक युवा को यह समझ लेना चाहिए कि अवसाद रूपी

जाल को तोड़ना आवश्यक भी है और सम्भव भी। क्योंकि मनुष्य के दिव्य स्वरूप को कोई भी बाँध नहीं सकता। हमें गहन चिन्तन, ध्यान और प्रार्थना से अपने दिव्य स्वरूप को अभिव्यक्त करना होगा।

एक विशिष्ट चुनौती

युवावस्था ही वह समय है, जब हमें स्वयं का सामना करना है, अपने कच्चे अपरिष्कृत अन्तर्जगत को उच्च विचार और महान संस्कार रूपी स्वर्ण में परिणत करना है। चाहे कोई भी आयु हो, हमारे हृदय के अन्तस्तल में ऊर्जावान, दृढ़इच्छायुक्त एवं सकारात्मक युवा निवास करता है। श्रीरामकृष्ण अपने युवा भक्तों के विषय में कहा करते थे – ''तुम जानते हो, मैं इन बालकों से इतना प्रेम क्यों करता हूँ, क्योंकि इनका मन अभी तक काम-कांचन से दूषित नहीं हुआ है। अगर हम दूध को ऐसे बर्तन में रखें, जिसका प्रयोग दही बनाने के लिए नहीं किया गया है, तो दूध ताजा रहता है।'' यही शाश्वत युवा का रहस्य है।

अवसाद और आत्महत्याओं की बढ़ती संख्या तथा युवाओं में बढ़ती अशान्ति का भाव इस ओर संकेत कर रहे हैं कि युवाओं की समस्याओं का समाधान ईमानदारी और स्नेहपूर्ण ढंग से अतिशीघ्र करना होगा। युवा एक अमोघ शक्ति का स्रोत है, इस बात की महत्ता विश्व पटल पर तब प्राप्त हुई, जब संयुक्त राष्ट्र ने १९८५ को विश्व युवा वर्ष घोषित किया। इस वर्ष भारत सरकार ने स्वामी विवेकानन्द के जन्म दिवस १२ जनवरी को 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में घोषित किया। अच्छे उद्देश्य से की गई इन प्रेरक घोषणाओं के पश्चात् भी युवाओं के लिए बहुत कुछ करना शेष है।

निष्कर्ष यह है कि युवावस्था जीवन का बसन्त-काल है। इस मंजरी आने की ऋतु में, प्रत्येक युवा अपनी सम्भावनाओं से अवगत हो, उसे निष्ठा, विश्वास और कठिन परिश्रम से संयमित करे और और आत्म-परिवर्तन तथा सेवा के आदर्श को प्राप्त करे। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. तैत्तिरीय-उपनिषद, ८/१ **२.** दक्षिणामूर्ति-स्तोत्र

युवकों कलयुग से बचो

आजकल एक साधारण-सी बात सुनने को मिलती है कि कलयुग आ गया है। एक वृद्ध व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति से कह रहे थे कि कलयुग आ गया है, तो उस सज्जन ने हँसते हुए कहा कि आपके पास कलयुग तो बहुत विलम्ब से पहुँचा। भगवान श्रीकृष्ण की मृत्यु के बाद से ही कलयुग का आरम्भ हो गया था।

कलयुग-कलयुग हम सभी बोलते रहते हैं, लेकिन कलयुग कहाँ रहता है? उसकी पहचान क्या है? उससे कैसे बचा जाए?

श्रीमद्भागवतम् में प्रसंग आता है कि जब श्रीकृष्ण भगवान अपनी नरलीला समाप्त किए, तब से कलयुग आरम्भ हुआ। राजा परीक्षित से जब पृथ्वी माता ने अपनी दुर्वस्था को बताया तो परीक्षितजी ने कलियुग को मृत्यु दण्ड देने का निश्चय किया। कलियुग ने राजा का शरणागत होकर कहा कि मुझे मत मारिए। मुझे रहने के लिए केवल पाँच स्थान दीजिए, मैं केवल इन्हीं पाँच स्थान में रहूँगा, इनको छोड़कर मैं अन्यत्र कहीं भी नहीं रहूँगा। राजा परीक्षित कलियुग से सहमत हो गये।

कलियुग का रहने का स्थान – कलियुग ने राजा से इन पाँच स्थलों में रहने का अनुनय किया – (१) राजनीति (२) द्युतक्रीड़ा (जुआ या लॉटरी) (३) मद्यपान (४) स्वर्ण (५) वैश्यालय (रेडलाइट एरिया)।

युवकों यदि आपको कलियुग रूपी महाराक्षस से बचना है, तो विशेषकर इन पाँच स्थानों से बचने का प्रयास करें और अपने युवा होने का, अपने युवावस्था का, अपने तरुणाई का आनन्द लीजिए और सनातन भारत को विश्वपटल पर विश्वगुरु के रूप में प्रतिष्ठित कीजिए। ○○○

युवा-चेतना के विकास में सहायक पत्रकारिता के गुण

नम्रता वर्मा

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सूचना से मानव समाज सशक्त होता है। देश-काल-समाज के एक नवीनतम, सत्य, तथ्यपरक, विविध घटनाक्रमों को प्रस्तुत करना पत्रकारिता का आधारभूत कार्य है। पर पत्रकारिता केवल सूचना देना ही नहीं है। यह उससे कहीं अधिक है। पत्रकारिता के पास कलम की शक्ति है। इसी से क्रान्ति और रूपान्तरण के विशद अध्याय लिखे गए हैं।

विश्व के सामाजिक-राजनीतिक सुधार-आन्दोलनों से लेकर भारत के स्वाधीनता संग्राम तक एवं स्वतन्त्र भारत में सुधारों से लेकर वर्तमान-रशिया-यूक्रेन युद्ध के संकटग्रस्त क्षेत्र में रिपोर्टिंग करने तक, पत्रकारिता का योगदान महनीय है। कुछ बिन्दु ऐसे हैं, जिनके कारण ही पत्रकारिता का यह कार्य सम्पन्न हो पाता है।

निर्भीकता, सत्यनिष्ठा, दृढ़ता, तत्परता जैसे मूल्य के बल पर ही पत्रकार ऐसा जटिल कार्य कर पाता है। यह गुण जीवन के अन्यान्य क्षेत्रों में भी सफलता के लिए अपरिहार्य है। युवावस्था में पत्रकारिता के जिन मूल्यों के अवलम्बन से सुदृढ़ जीवन का मार्ग प्रशस्त हो सकेगा, आइये उस ओर दृष्टि डालते हैं।

निर्भय हो मन

उत्कृष्ट पत्रकारिता के लिए निर्भीकता आवश्यक है। पत्रकारिता व्यक्ति को बिना किसी भय के तथ्यों के साथ विषय को जनसामान्य के सम्मुख रखने की शिक्षा देती है। पत्रकारिता के इस महत्त्वपूर्ण गुण को युवा पीढ़ी को अवश्य व्यवहृत करना चाहिए। कई बार पत्रकार को युद्धग्रस्त, आपदाग्रस्त, विभीषिका एवं उन्मादग्रस्त क्षेत्रों में समाचार हेतु जाना पड़ता है। ऐसे में निर्भीक पत्रकार ही यह कार्य करने में सफल होते हैं। जिस प्रकार भयरहित, दबावों से मुक्त पत्रकार इस व्यवसाय की विश्वसनीयता को पुष्ट करते हैं, उसी प्रकार निर्भीक युवा ही वैयक्तिक-सामाजिक-राष्ट्रीय जीवन की जटिल परिस्थितियों का सामना करने में सक्षम हो पाते हैं।

वैचारिक संकीर्णता से मुक्ति

सच्ची पत्रकारिता पूर्वाग्रह से मुक्त करती है। तटस्थ और वस्तुपरक पत्रकारिता के लिये वैचारिक संकीर्णताओं से बाहर निकलना पड़ता है। पत्रकार एकांगी होकर किसी विषय पर समाचार नहीं लिखता, बल्कि घटना के सभी पक्षों को सामने रखता है। पत्रकारिता से युवा यह सीख सकते हैं कि धारणाओं और वैचारिकी को किनारे रखकर, उन्मुक्तता से किस भाँति विचार किया जाए। यह विचार-कार्य निरी कल्पना नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष वास्तविक तथ्यों को सम्मुख रखकर पूर्ण होती है।

तत्परता एवं एकाग्रता की आवश्यकता

पत्रकारिता के जगत में 'तेजी' का विशेष महत्त्व है। मुद्रित, इलेक्ट्रॉनिक अथवा डिजिटल इन सभी माध्यमों में यह आवश्यक है कि समाचार शीघ्रातिशीघ्र पहुँचे। एक पत्रकार को तत्पर होना पड़ता है। विविध माध्यमों से पुष्टिगत सूचना मिलते ही खबर लिखनी या बनानी पड़ती है। ऐसे में तत्परता के अभाव में कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। तत्परता, अधीरता में भी नहीं बदलनी चाहिए। इससे समाचार लेखन अथवा प्रस्तुतिकरण में त्रुटि होने की आशंका होती है। अत: एकाग्रता का होना आवश्यक है। एकाग्र मन से कार्य शीघ्र पूर्ण होता है। युवावस्था उत्साह से परिपूर्ण होती ही है। युवाओं में तत्परता भी होती है। वे किसी कार्य को शीघ्रता से करने हेतु उद्यत हो जाते हैं, पत्रकार की भाँति यदि वे तत्परता के साथ एकाग्रता का भी समावेश कर लें, तो उनकी कार्यकुशलता में निश्चित ही अभिवृद्धि होगी।

हो सत्यनिष्ठा, दृढ़ता एवं उत्तरदायित्व-बोध

पत्रकारिता का उत्तरदायित्व है जन-सामान्य को देश-काल-समाज के नवीन-रुचिपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक समाचार प्रदान करना। यह समाचार मिथ्या अथवा भ्रामक नहीं होने चाहिए। वे तथ्याधारित सत्य सूचनाएँ होनी चाहिए। सच उजागर करने के लिए पत्रकार को सत्य के प्रति आग्रही होना

पड़ता है। समाचार की सत्यता के प्रति उसकी निष्ठा होती है। कई बार पत्रकारीय जीवन में इस प्रकार के समाचार प्रस्तुत करने पर प्रलोभन अथवा भय के माध्यम से पत्रकार को प्रभावित किया जाता है। ऐसे में दृढ़ता का गुण ही पत्रकार को बचाए रखता है। जनता के प्रति उत्तरदायित्व का बोध, दृढ़ता एवं सत्यनिष्ठा का ये पत्रकारीय गुण प्रत्येक व्यक्ति को कर्तव्यपालन में सहायता प्रदान करते हैं। युवावस्था से ही यदि इन गुणों को आचरण में लाया जाए, तो भविष्य में किसी भी व्यवसाय में जाने पर भी हम उत्कृष्ट व्यवसायी मूल्य स्थापित कर सकेंगे।

जिज्ञासु, परिश्रमी एवं अध्ययनशील

पत्रकारिता छह ककारों का उत्तर देती है। ये हैं – ''क्या, कब, कहाँ, कौन, क्यों एवं कैसे।'' समाचार में इन्हीं प्रश्नों का उत्तर होता है। पत्रकार को स्वभाव से जिज्ञासु होना पड़ता है। तभी उसके मन में प्रश्न उठते हैं। प्रश्न करना पत्रकार का अधिकार एवं कर्तव्य, दोनों है। इन प्रश्नों के उत्तर के लिए, सूचनाओं की तलीय गहराई तक जाने के लिए उसे परिश्रम भी करना पड़ता है। समाज, राजनीति, दर्शन, विज्ञान, धर्म, रक्षा, खेल, वाणिज्य, संस्कृति, अन्तरिक्ष इत्यादि सभी क्षेत्रों की आधारभूत जानकारी पत्रकार को होती है। यह जानकारी निरन्तर अध्ययन से ही प्राप्त होती है। अत: पत्रकारिता युवाओं को जिज्ञासु, परिश्रमी एवं अध्ययनशील होने के लिए भी प्रेरित करती है। इन बिन्दुओं को व्यवहार में लाकर युवा ज्ञान के क्षेत्र में अधिक प्रगति कर सकेंगे।

उक्त वर्णित बिन्दु ऐसे हैं, जो पत्रकारिता के लिए तो अपरिहार्य हैं ही, लेकिन इसे आचरण में डालकर युवा-चेतना भी निश्चित रूप से प्रखर, परिष्कृत एवं उज्ज्वल हो सकेगी।

युवाओं के सर्वसंवर्धन हेत प्रतिबद्ध पत्रकारिता

पत्रकारीय गुणों को धारण कर जहाँ युवा लाभान्वित होते हैं, वहीं पत्रकारिता भी विभिन्न रीति से युवाओं के लिए सहायक होती है। पत्रकारिता युवाओं को सूचनासम्पन्न बनाती है। शैक्षिक जगत के विभिन्न अवसरों एवं प्रवेश परीक्षा की सूचना हेतु अखबार में पृष्ठ निर्धारित होते हैं। सप्ताह के निर्धारित दिन इस पृष्ठ पर स्नातक-परास्नातक, चिकित्सा, विज्ञान इत्यादि संकाय में अध्ययन हेतु प्रवेश-परीक्षा एवं प्रक्रिया से सम्बन्धित सभी सूचनाएँ दी जाती हैं।

वहीं शैक्षिक जगत के विषय-विशेषज्ञों के आलेख के माध्यम से युवा छात्रों को कैरियर सम्बन्धी अनेक प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं। मुद्रित माध्यम में प्रत्येक अखबार एवं पत्रिका शैक्षिक सूचनाओं से जुड़े इस 'एजुकेशनबीट' पर विशेष ध्यान केन्द्रित करती है। शिक्षा जगत की चुनौतियों एवं शुल्क वृद्धि जैसे मसलों पर भी मुद्रित पत्रकारिता, जिम्मेदार निकायों से सवाल करती है। अखबारों के साथ-साथ डिजिटल माध्यम भी शिक्षा जगत के विभिन्न सूचनाओं को वीडियो-फॉर्मेट में रोचक एवं तथ्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करते हैं। 'एजुकेशन तक' 'जागरण जोश' 'शिक्षा' 'अमर उजाला', 'नवभारत' एवं 'नई दुनिया' 'हरिभूमि' जैसे विविध समाचार पत्र हैं, जिनमें से कुछ के डिजिटल चैनल पर युवाओं से जुड़ी सूचनाएँ नियमित प्रकाशित एवं प्रसारित होती हैं। इसके साथ-साथ रोजगार से सम्बद्ध आवश्यक सूचनाएँ, रिक्त पदों की सूचना भी अखबार में दी जाती है। आजकल डिजिटल चैनल आगामी दिवसों में आनेवाले सभी महत्त्वपूर्ण परीक्षाओं और अवसरों से सम्बन्धित समग्र कंटेंट बनाते हैं, जिससे एक ही स्थान पर युवाओं को सभी जानकारी मिल जाती है।

चिकित्सा एवं अनुसन्धान जगत में हो रहे नवीन अनुप्रयोगों के विषय में अखबार युवा चेतना को समृद्ध करता है। सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिवर्तनों के विषय में विस्तृत जानकारी देकर ज्ञान का विकास करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। खेल-पृष्ठ युवाओं के लिए विशेष आकर्षण होते हैं। क्रिकेट-फुटबॉल-हॉकी-शतंरज जैसे मैचों का रोचक वर्णन समाचार पत्रों में होता है। प्रेरक खिलाड़ियों के जीवन-संघर्ष पर आधारित लेखों एवं साक्षात्कार से युवा अतिशय प्रेरित एवं प्रभावित होते हैं।

एक ओर जहाँ पत्रकारिता सूचना प्रदान करने का सशक्त माध्यम है, वहीं सूचना की अधिकता से भ्रामक एवं गलत सूचनाएँ भी प्रसारित होती हैं। पत्रकारिता में इसे 'फेक न्यूज़' कहा जाता है। ऐसी भ्रामक सूचनाओं का खण्डन एवं सत्य-तथ्य का प्रतिपादन भी पत्रकारिता करती है, जिससे गलत सूचनाओं के कारण होनेवाली मानसिक, आर्थिक और सामाजिक क्षति को रोका जा सके।

देश-विदेश में घट रही समस्त समसामयिक सूचनाएँ पत्रकारिता के माध्यम से ही प्राप्त होती हैं। प्रत्येक आयाम का समाचार पत्रकारिता में निहित होता है। युवा, विवेक एवं आवश्यकता अनुरूप समाचारों के पाठक-दर्शक अथवा श्रोता के रूप में जुड़ते हैं।

इस प्रकार पत्रकारिता युवाओं के सर्वांगीण विकास में सहायता करती है। ○○○

पूर्वोत्तर आदिवासियों की झोपड़ियों से निकल रहा नया भारत

स्वामी नित्यपूर्णानन्द
पूर्व प्राचार्य, रामकृष्ण मिशन स्कूल, नरोत्तमनगर,
रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल

रामकृष्ण मिशन, नरोत्तमनगर, अरुणाचल प्रदेश बेलूड़ मठ का एक केन्द्र है, जो इस वर्ष २०२१-२२ में अपना स्वर्ण जयन्ती मना चुका है। प्राकृतिक वनों से घिरा यह केन्द्र लगभग ३ किलोमीटर में फैला है।

मैंने पहली बार एक ऐसा केन्द्र देखा, जिसकी कोई बाउंड्रीवाल (Boundary wall) अर्थात् चहारदीवारी नहीं थी, क्योंकि यह असम्भव है। हाथियों, जंगली जीव-जन्तुओं, कोबरा साँपों से भरा अरुणाचली आदिवासी छात्रों तथा अध्यापकों एवं अन्य लगभग ८०० कर्मचारियों वाला यह आश्रम सदा से भगवान श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा देवी एवं स्वामी विवेकानन्द जी की कृपा से बिना किसी शहरी सुविधा के भी अपना जीवन सुरक्षित तथा सफल बनाए रखे हुए है।

नरोत्तमनगर यह नोक्ते जाति के एक वैष्णव संत के नाम से ही रखा गया है तथा इसी अरुणाचल प्रदेश में नामसाई जिले में हिन्दुओं का एक प्रसिद्ध तीर्थस्थल परशुराम कुण्ड है, जो कि नरोत्तमनगर से लगभग १०० किलोमीटर दूरी पर स्थित है।

वर्ष १९९९ के अन्त तथा वर्ष २००० के प्रारम्भ में, मेरे २ वर्ष ब्रह्मचारी प्रशिक्षण केन्द्र में बिताने के बाद, रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन, मुख्यालय बेलूड़ मठ से मुझे इस नरोत्तम नगर केन्द्र जाने का आदेश हुआ। जैसे ही मेरे केन्द्र नरोत्तमनगर की घोषणा हुई, तुरन्त ही मेरे मन में स्वामी विवेकानन्द जी की वाणी स्मरण हो आई थी "Let new India arise from hills and mountains and forests..." – नया भारत निकल पड़े, पहाड़ों, पर्वतों और जंगलों से। इसी वाणी को आधार बनाकर मैंने लगभग २० वर्षों तक उत्तरपूर्व में इस केन्द्र में व्यतीत किया।

उत्तर पूर्व अरुणाचल प्रदेश प्राकृतिक रूप से सुंदर तथा २६ बड़ी जनजातियों को विभिन्न कला तथा संस्कृति से परिपूर्ण किए हुए है। यह प्रदेश medicinal plants अर्थात् औषधियों का स्वर्ग कहा जाता है तथा यह तीरप जिला में म्यामार से लगभग १०० किलोमीटर दूरी पर है। यह क्षेत्र कुनैन अर्थात् Anti malaria पौधों से भरा है।

ऐसी प्राकृतिक सुन्दरता के बीच रामकृष्ण मिशन के इस केन्द्र की स्थापना सन् १९७१ में एक शिक्षालय के रूप में हुई थी। इसके स्कूल भवन की नींव राष्ट्रपति श्री वी. वी. गिरी जी द्वारा रखी गई तथा विद्यालय का उद्घाटन माननीय श्री प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के द्वारा १९७८ में हुआ था।

इस जिले में नोक्ते तथा वांचू जाति का मुख्य निवास है। इसके साथ ही, इस विद्यालय में अरुणाचल की सभी जातियों के छात्रों को कक्षा १ से १२वीं तक छात्रावास के साथ विद्यालय में प्रवेश दिया जाता है।

यहाँ कार्य करना बहुत कठिन होता है, क्योंकि यह शहरों से लगभग ५० किलोमीटर दूर प्राकृतिक जंगल में है। इसीलिए हमें सदैव यहाँ के सन्तों, अध्यापकों और अन्य कर्मचारियों के योगदान को कभी नहीं भूलना चाहिए।

रामकृष्ण मिशन की अन्य सेवाएँ आदिवासी गाँवों में भी की जाती हैं।

मैंने वर्ष १९९९ से वर्ष २०१७ के बीच वहाँ के अभिभावकों में प्राचीन से नये पहनावे तथा विचारों में परिवर्तित होते देखा। गाँव में २००३-२००४ से परिवर्तन होते देखा। विशेष रूप से आदिवासियों को आधुनिक मेडिकल सुविधाओं के लिए प्रयास करते तथा अपनी सन्तानों के शैक्षिक विकास के प्रति चिन्तित होते हुए भी देखा। आदिवासी छात्रों तथा अभिभावकों को मैंने जीवन के मूल्यों को उनके स्वाभाविक सरलता से निभाते देखा।

इसके साथ ही विशेष आश्चर्य देखा कि एक छोटा-सा ५ साल का छात्र भी जंगल की औषधियों, पत्तियों तथा उनके गुणों आदि का ज्ञान रखता था तथा कौन-सा मेंढक या अन्य जन्तु जहरीला होता है, यह ज्ञान उसके लिए बहुत ही सामान्य था। इन सभी प्राकृतिक गुणों के साथ-साथ, यहाँ के आदिवासी छात्रों ने खेल तथा कला में अत्यधिक विलक्षण योग्यता प्राप्त की है।

अन्त में यह बताना चाहता हूँ कि मैंने अपने जीवन में पहली बार प्राकृतिक वन में रहने का लाभ उठाया। मैंने यह पाया कि प्रकृति किस प्रकार से प्राकृतिक वन को तथा अन्य जीव-जन्तुओं को एक संतुलन में रखती है। प्रकृति के एक-दूसरे के पूरक जैव-विविधता के सुन्दर रूप को भी देखा। यह भी देखा कि कैसे पूरी सर्दियों में हाथियों की शरारत रहती है, क्योंकि इस विस्तृत स्थान में हाथियों का वास है।

इन सभी विषमताओं के साथ भी मैंने यह अनुभव किया कि कैसे भगवान सभी की रक्षा करते हैं। इसके बहुत-से उदाहरण रहे हैं। मैं अपने दो मुख्य उदाहरण बताता हूँ। वह कोबरा साँप से भरपूर होने के बाद भी कभी कोई क्षति होते मैंने नहीं देखा। यह भी आश्चर्य होता है कि जंगल में मात्र आठ-नौ फुट चौड़ी सड़कों के दोनों किनारों पर औसतन ६० से ८० फीट के लम्बे-लम्बे वृक्ष होने पर भी कभी भी किसी वाहन या व्यक्ति पर गिरने की दुर्घटना नहीं सुनी, जबकि प्रतिदिन ही लभगभ ३० से ४० किलोमीटर जंगल के रास्ते में पेड़ गिरते ही रहते हैं।

अरुणाचल में प्रथम शिक्षा केन्द्र आलो के साथ नरोत्तम नगर के छात्रों की भी अरुणाचल में महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है तथा इसके साथ ही साथ रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन मुख्यालय बेलूड़ मठ के एक अन्य अस्पताल केन्द्र ईटानगर में भी चिकित्सकों के रूप में एक अच्छा योगदान रहता है।

विशेषत: नरोत्तम नगर जहाँ मैंने १७ वर्ष सेवा दी, वहाँ सीबीएसई कक्षा १०वीं एवं १२वीं के परीक्षा-परिणामों में अरुणाचल में प्रथम स्थान के साथ उत्तर-पूर्व भारत में यह केन्द्र एक विशेष स्थान रखता आ रहा है। इसीलिए यहाँ के ३ शिक्षकों को भी राष्ट्रपति-सम्मान द्वारा पुरस्कृत किया जा चुका है।

अत: भगवान श्रीरामकृष्ण का 'शिव भाव से जीव सेवा' तथा स्वामी विवेकानन्द का दिया मन्त्र 'आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च' का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र नरोत्तम नगर है। ○○○

श्रीमाँ सारदा देवी का युवाओं के प्रति उपदेश

साधन-भजन, तीर्थ-दर्शन, अर्थोपार्जन, चाहे जो बोलो, सब काम कम उम्र में कर लेना चाहिए। बुढ़ापे में कफ-श्लेष से भरे शरीर में शक्ति नहीं होती, मन में बल नहीं होता, तब क्या कोई काम हो सकता है? ये यहाँ के लड़के सब कम उम्र में भगवान में मन लगा रहे हैं, यह ठीक हो रहा है। ठीक समय हो रहा है। बेटा, चाहे साधन कहो या भजन कहो, सब अभी इसी उम्र में कर लेना, बाद में क्या हो पाता है? जो कुछ कर सकते हो, वह अभी ही कर लो।

शक्तिशाली, सन्तुलित और सफल युवक कैसे बनें !

स्वामी गुणदानन्द

रामकृष्ण मठ, नागपुर

युवाशक्ति : एक समग्र दृष्टिकोण

Strong minds discuss ideas,
Average minds discuss events,
Week minds discuss peoples.

- socrate

– ''सबल मस्तिष्क विचारों पर चर्चा करता है,
सामान्य व्यक्ति घटनाओं की चर्चा करता है,
दुर्बल मस्तिष्क लोगों की चर्चा करता है।'' – सुकरात

मनुष्य ने आज तक जितनी भी कठिन एवं चुनौतिपूर्ण परिस्थितियों का सामना किया है, उन सब समस्याओं का निराकरण करने में युवाशक्ति का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। युवाओं में संकटों का सामना करने कऽ सामर्थ्य होता है। फ्रेंक्लिन रुजवेल्ट के अनुसार : 'We cannot build the future for youth, but we can build our youth for the future.' – ''हमलोग युवाओं के लिये भविष्य का निर्माण नहीं कर सकते, किन्तु भविष्य के लिये अपने युवाओं का निर्माण कर सकते हैं।''

आज के युवाओं को कठिन एवं विपरीत परिस्थितियों का सामना करते हुए पीछे नहीं हटना चाहिए, बल्कि डटकर सामना करते हुए डंके की चोट पर समस्या का समाधान करना चाहिए। सूचना और प्रौद्योगिकी के इस युग में मानव ने जो उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं, उससे मनुष्य का विकास अवश्य हुआ है। परन्तु आधुनिक काल में निज स्वार्थ के लिए आतंकवाद, भ्रष्टाचार, हृदयहीनता, उद्देश्यहीन युवाओं का दिशाहीन होना, गरीबी, असाक्षरता, मूल्यों का हनन, क्रूरता, युवाओं में नशे की बुरी आदतें जैसी भू-वैश्विक चुनौतियाँ आज के युवा अपने जीवनकाल में देखते हैं। ये समस्याएँ तीन स्तर पर होती हैं :

१. मानव निर्मित – आधुनिक युग में उद्देश्यहीन युवा अमानवीय गतिविधियों में शामिल होकर पथभ्रष्ट होते हैं। वे अपने अन्तर के विवेक को खो देते हैं तथा बुरी आदतें जैसे नशा, ड्रग्स का उपभोग करने लगते हैं, अपने स्वार्थ में रुपयों के लिए आतंकवादी गतिविधियों में शामिल हो जाते हैं। आत्मघाती बम से नगरों, कस्बों को नष्ट कर देते हैं। ये विध्वंसक हमले लोगों को चोटिल एवं दिव्यांग बनाते हैं। इन हमलों में भोले-भाले लोग पुरुष, स्त्री और बच्चे जिनका कोई दोष नहीं होता है, उन्हें अपनी दमनकारी शक्ति के बलबूते पर भयभीत किया जाता है।

२. प्राकृतिक समस्याएँ – प्राकृतिक आपदाएँ जैसे बाढ़, भूखमरी, दावानल, सूखा, भूकम्प लोगों को विशेषकर बच्चों, युवाओं को गरीब, बेघर तथा निराश्रित बनाती हैं। इन आपदाओं के प्रभाव से युवा शिक्षा प्राप्त करने से वंचित होते हैं तथा उनके जीवन का अस्तित्व भी खतरे में पड़ता है।

३. व्यक्तित्व से सम्बन्धित समस्याएँ – असहमति, लड़ाई, विचारों का टकराव, आत्मविश्वास की कमी, नकारात्मक दृष्टिकोण, अपरिपक्वता, असन्तुलित जीवन आज के युवाओं के लिए एक बड़ी समस्या है।

युवा अवस्था बहुत ही अमूल्य होती है। जिस प्रकार किसी धातु को आकार या रूप देने का सबसे उचित उपाय है कि पहले इसे गर्म करके पिघलाया जाता है और फिर उसे लचीला बनाकर आकार दिया जाता है। हम यह भी देखते हैं कि वर्षा के तुरन्त बाद ही बीज बोने का उचित समय होता है। ठीक इसी प्रकार युवावस्था जीवन का उपयुक्त काल होता है। इस अवस्था में युवा अपने जीवन में परिवर्तन ला सकते हैं। युवावस्था ही वह समय होता है, जब युवा में जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने की लालसा पनपती है। युवावस्था ही जीवन को उपयुक्त आकार देने की अवस्था होती है।

युवा एक शक्ति है, व्यक्तिगत रूप से भी और समग्र रूप से भी, परन्तु इस शक्ति को नियंत्रित करना, विदोहन करना अति आवश्यक है। जिस प्रकार परमाणु ऊर्जा को

नियन्त्रित करके उपयोग में लाया जाता है और वह पूरे राष्ट्र की समृद्धि के लिए ऊर्जा उत्पन्न कर सकती है। उसी प्रकार किसी प्रवाही नदी की जलधारा को सुरंग बनाकर, भूमिगत मार्ग बनाकर जल को प्रणाली द्वारा वितरित किया जाता है, उसके जल के प्रवाह को टरबाइन से प्रवाहित किया जाता है और इस प्रकार टरबाइन के घूमने पर विद्युत् ऊर्जा प्राप्त की जाती है। ठीक उसी प्रकार युवा अवस्था में युवाओं में समग्र व्यक्तित्व का विकास करना आवश्यक है। इसके लिए आवश्यक है :

१. आत्म-एकीकरण

२. आत्म-संतुलन

३. आत्म-यथार्थीकरण

४. आत्मानुभूति

५. परिपक्वता

१. आत्म-एकीकरण – अनुभवों को स्वयं से जोड़ने की प्रक्रिया को आत्म-एकीकरण कहते हैं। नकारात्मक विचारों से मन में प्रतिक्रियाएँ उदित होती हैं और हम अपने अनुभवों को समझ नहीं पाते हैं, जिससे हमारे मन में अस्थिरता आती है। परन्तु आत्म-एकीकरण द्वारा मूल्यांकन करने से हम किसी भी प्रतिक्रिया का निहितार्थ जान सकते हैं, जिससे हमारे भीतर सकारात्मक सोच का विकास होता है।

२. आत्म-संतुलन – आत्म-सन्तुलन की प्रक्रिया में युवा स्वयं ही अपना गुरु, प्रशिक्षक और शिष्य बनता है। इसके द्वारा वह स्वयं को अनुशासित करता है और नकारात्मक तथा लक्ष्य से विचलित करनेवाले विचारों को नियन्त्रित कर सकता है। आत्म-सन्तुलन से हम अपने असन्तुलित मानसिक विचारों को नियोजित कर सकते हैं तथा उन्हें लाभकारी गतिविधियों में प्रवृत्त करा सकते हैं। इससे हमारे भीतर सकारात्मक सोच विकसित होती है, जो हमें जीवन लक्ष्य की ओर केन्द्रित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। आत्म-सन्तुलन से मन किसी भी प्रकार की चुनौतियों का सामना करने में सक्षम बनता है।

आत्म-सन्तुलन के पालन हेतु निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है : -

१. शरीर को सन्तुलित रखने के लिए नियमित व्यायाम और पौष्टिक आहार।

२. श्वास पर सन्तुलन रखने के लिए नियमित रूप से श्वास-प्रश्वास की प्रक्रिया का अभ्यास करना।

३. वाणी पर नियन्त्रण तथा सन्तुलन के लिए अनावश्यक बातें न करना, गपे मारने की आदत छोड़ना, व्यर्थ की बातों में न उलझकर शक्ति का संचयन किया जा सकता है। इससे मन शान्त होता है, एकाग्र रहता है और लक्ष्य की ओर केन्द्रित रहता है।

४. विचारों के सन्तुलन के लिए आत्म-विश्लेषण, आत्म-आकलन, महान् व्यक्तियों के आदर्श जीवन का गहन अध्ययन करना चाहिए, इससे नकारात्मक मानसिक विचार सन्तुलित हो जाते हैं।

५. अन्तर्मन को सन्तुलित करने के लिए प्रार्थना, एकाग्रता तथा ध्यान करना आवश्यक है। इससे हममें विवेक का जागरण होता है।

एक पतला धागा बहुत कमजोर होता है, परन्तु जब उन्हीं बहुत-से धागों को एक साथ मिलाकर और मोड़कर एक रस्सी बनाई जाती है, तब वह रस्सी इतनी शक्तिशाली बन जाती है कि यह एक बलशाली हाथी को भी नियन्त्रित कर सकती है। इसी प्रकार युवाओं को सशक्त, दृढ़ तथा शक्तिशाली बनने के लिए अच्छे तथा उच्च सकारात्मक विचारों (जिन्हें दैवी सम्पद् कहा जाता है) द्वारा मन को ओतप्रोत करना चाहिए।

३. आत्म-यथार्थीकरण – यह रचनात्मक दृष्टिकोण के प्रति व्यक्ति की अन्तर्निहित धारणा पर जोर देता है। स्वयं में स्वच्छ और निर्मल भावना के विकास से अपनी प्रतिभा, क्षमता तथा रचनात्मक दक्षता के द्वारा लक्ष्य को प्राप्त करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। अब्राहम मास्लो ने Self actualization शब्द का उपयोग एक इच्छा का वर्णन करने के लिए किया। उन्होंने यह अनुभव किया कि Self-actualization से व्यक्ति को नवोदित महत्त्वाकांक्षाओं को प्राप्त करने की इच्छा या प्रेरणा मिलती है। जैसे-जैसे कोई व्यक्ति आगे बढ़ता है, वह अन्त में शिखर पर पहुँच जाता है। मास्लो के अनुसार जब कोई व्यक्ति इस अनुभव और विश्वास के साथ आगे बढ़ता है कि उसमें कमी है, तब

वह स्वभाविक रूप से विकसित होने का प्रयास करता है कि वह कौन है? जब व्यक्ति आत्म-सम्मान प्राप्त करता है, तब वह सन्तुष्ट होता है और उसमें आत्मविश्वास पैदा होता है। आत्मविश्वास ही उसमें जीवन के यथार्थ लक्ष्य की इच्छा जगाता है। जब व्यक्ति जीवन का परम अनुभव प्राप्त करता है, तब यही उसके जीवन का महत्त्वपूर्ण लक्ष्य होता है। अत: युवा ऐसे शैक्षिक अनुभव प्राप्त करें, जो आत्म-निर्देशन तथा यथार्थ लक्ष्य को प्राप्त करने के अवसर पैदा करने पर केन्द्रित हो।

४. आत्मानुभूति – आत्मानुभूति का तात्पर्य यहाँ मनोवैज्ञानिक इन्द्रियों से है। मन की परिपक्वता प्राप्त करना ही मनोविज्ञान का उद्देश्य है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने इसे Self Realization नाम दिया है। इसका अर्थ है विकास और मन की परिपक्वता तथा व्यक्ति की सम्भाव्यता (Potentiality) की अभिव्यक्ति। परन्तु कुछ विचारकों के लिए Self Realization का अर्थ ईश्वर-प्राप्ति से नहीं, बल्कि एक ऐसे आदर्श समाज की रचना करने से है, जहाँ हर किसी को अपनी सम्भाव्यता (Potentiality) को अनुभव करने का अवसर हो। मन की परिपक्वता से ही आत्मानुभूति की सम्भाव्यता प्राप्त हो सकती है।

५. परिपक्वता – एक परिपक्व व्यक्तित्व की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं –

१. वह अपने मन की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं को अच्छी तरह से समझता है। वह अपने उत्तरदायित्व के प्रति निष्ठावान् होता है।

२. वह आशावादी, प्रसन्नचित्त रहता है, परन्तु जीवन तथा संसार के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण रखता है। कभी भी श्रेष्ठता (Superiority) और हीन भावना (inferiority) से वह प्रभावित नहीं होता है।

३. वह किसी परिस्थिति में स्वयं को स्वीकार करने की भावना रखता है।

४. वह अपने जीवन के लक्ष्य के प्रति स्पष्ट दृष्टिकोण रखता है, साथ में वह तर्कसंगत सोच रखता है।

५. वह आत्मसंयमी होता है तथा लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अपने निज स्वार्थ को त्याग सकता है।

६. वह बिना किसी निराशा के स्वयं में सुधार लाने का प्रयास करता है। असफलता से वह निराश नहीं होता, बल्कि उससे वह और अधिक दृढ़ निश्चयी बनता है।

७. वह दु:ख और निराशा को जीवन का हिस्सा और उन्नत सोपान मानता है। वह स्वयं में और दूसरों में भी अच्छाई देखने का प्रयास करता है।

जिस प्रकार भौंरा पुष्पपराग के रसपान के लिए पुष्प की सौरभ की ओर आकर्षित होता है और उसके रसपान में रत हो जाता है। उसे कुछ ध्यान नहीं रहता और अन्त में रात हो जाने पर पुष्प की पंखुड़ी बन्द हो जाने से उसमें कैद हो जाता है। उसी प्रकार नकारात्मक सोच की विभिन्न परतें हमारे शरीर, मन और भावनाओं की सम्भाव्यता (Potentiality) को ढँककर कैद कर देती हैं। असफलता से निराशा उत्पन्न

होती है और निराशा से हमारे शरीर, मन और भावनाओं के बीच समन्वय स्थापित नहीं होता, जिससे मन के विचार असन्तुलित हो जाते हैं। अत: मन को सशक्त एवं परिपक्व बनाने के लिए स्वयं (शरीर, मन और भावनाओं) को संयमित करना आवश्यक है।

परिपक्व व्यक्तित्व, आत्म-अनुशासन, आत्म-संयम, आत्म-सन्तुलन, आत्म-एकीकरण नकारात्मक विचारों को दूर करने में सक्षम हैं। आत्मानुशासन, आत्म-सन्तुलन के द्वारा हम अपनी सम्भाव्यताओं को अभिव्यक्त कर सकते हैं और जीवन की दिव्यता को ढक देनेवाली नकारात्मक सोच की विभिन्न परतों को हटा सकते हैं।

युवाओं को अपने विचारों में, शब्दों में, कार्यों में नकारात्मक सोच को दूर करने के लिए सकारात्मक विचारों को लाना होगा तथा सकारात्मक सोच विकसित करनी होगी। ○○○

अबूझमाड़ के अरण्य से आ रहे विवेकानन्द के युवा

स्वामी कृष्णामृतानन्द

प्राचार्य, रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर

अज्ञानता, गरीबी, शोषण, अन्याय और अत्याचार के दानवों से पीड़ित अबूझमाड़ियों के जीवन की पीड़ा से व्यथित परोपकारी यज्ञकर्ता ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज ने ज्ञान, स्नेह, सुख, न्याय जैसी दैवीय शक्तियों का आह्वान कर सन् १९८५ में 'अबूझमाड़ सेवायज्ञ' का शुभारम्भ किया। प्रेम की ऋचाओं का उद्घोष करते हुए ज्ञानाग्नि प्रज्वलित की गयी। त्याग, समर्पण, निष्ठा व कर्मठता की आहुतियों से यह पवित्र अग्नि शनैः-शनैः धधकने लगी। समिधाओं से सुरभित वायु पवित्र आत्माओं को आकर्षित करने लगी। प्रशासनिक सहृदयता की आहुति ने इसके सौरभ को अपूर्वता प्रदान की। यह सुरभित वायु, अबूझमाड़ की पावन धरा पर जहाँ भी प्रवाहित हुई, वहाँ के लोगों को शान्ति और सन्तुष्टि का अनुभव कराती गयी। अभी भी अज्ञानता के अन्धकार को पूर्णरूपेण काटकर अबूझमाड़ को ज्ञान के प्रकाश से परिपूरित करने के लिए अथक, अनवरत, अहर्निश, पूर्णाहुति रहित इस यज्ञ की ज्वाला को पूर्ण तेजस्विता से प्रकट होने की आवश्यकता है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा व स्वास्थ्य के महान संकल्प को लेकर जो ज्ञानाग्नि धधकायी गयी थी, उसका व्यापक प्रभाव सम्पूर्ण अबूझमाड़ में देखा जा सकता है। कमर में लंगोटी लगाए, शराब व सल्फी के नशे में मदहोश, गरीबी की मर्मांतक चोट को छिपाये चेहरों पर जीवन की चमक साफ दृष्टिगोचर होने लगी है। वे नन्हें पुष्प जो निर्जन में विकसित होकर नष्ट हो जाया करते थे, आज अपनी सुषमा से समूचे राष्ट्र को आश्चर्यचकित करने लगे हैं। किसी कवि ने कहा है –

है अमावस से लड़ाई, युद्ध है अँधियार से,
इस युद्ध को जीतें, भला किस हथियार से।
एक नन्हा दीप बोला, मैं उपस्थित हूँ यहाँ,
रोशनी की खोज में, आप जाते हैं कहाँ?

बीहड़ वनांचल में प्रज्वलित शिक्षा के इस जादुई दीपक ने अबूझमाड़ की अज्ञानता के अन्धकार को काटकर ज्ञान के प्रकाश को फैलाने में महती भूमिका निभायी है। इस शिक्षा का उद्देश्य स्वामी विवेकानन्द के अनुसार उस पूर्णता की अभिव्यक्ति का प्रयास है, जिससे अज्ञानवश आदिवासी समुदाय अनभिज्ञ था। आज यह वर्ग तथाकथित सभ्य समाज के कंधे से कंधा मिलाकर चलने को आतुर है। बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ, महँगे मोबाइल तथा अन्यान्य भौतिक सुख-सुविधाओं के साधन इनकी सफलता की कहानी कह रहे हैं। लगन, निष्ठा, समर्पण व अथक प्रयास ने इनमें अद्भुत आत्मविश्वास भर दिया है। इसी आत्मविश्वास और प्रगति की उत्कट इच्छा के कारण ऐसा कोई क्षेत्र नहीं हैं, जहाँ इन्होंने अपना जौहर न दिखाया हो।

सुविधाविहीन, दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों के निवासरत आदिवासियों की प्रथम पीढ़ी का प्रशासनिक सेवाओं के प्रति बढ़ता रूझान प्रशंसनीय है तथा उपलब्धि सुखद आश्चर्य से अभिभूत कर देनेवाली है। लक्ष्मण पोटाई (डीएसपी), संजय पोटाई

(परियोजना अधिकारी), बुटियाराम कोर्राम (राज्यकर अधिकारी), भूपेन्द्र सिंह चनाप (भूजलविद्) जैसे अनेक बालकों ने छत्तीसगढ़ लोकसेवा आयोग की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अपनी योग्यता का लोहा मनवाया है।

रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर से बारहवीं उत्तीर्ण कर निकले १८०० विद्यार्थियों में से ७५० विद्यार्थी केन्द्र तथा राज्य सरकार में इंजीनियर, डॉक्टर, प्रोफेसर, शिक्षक, क्लर्क, पटवारी तथा अन्य पदों पर अपनी सेवाएँ दे रहे हैं तथा ५०० विद्यार्थी विभिन्न कॉलेजों में अध्ययनरत हैं। शैक्षिक उपलब्धियों में रंजिता उइके का नाम सम्मिलित होने से गर्वानुभूति होने लगती है। क्योंकि यह पहली अबूझमाड़िया बालिका है, जो जी.ई.ई. की परीक्षा उत्तीर्ण कर आई.एस.एम. धनबाद में अध्ययनरत है। बिना किसी कोचिंग के इस उच्च स्तरीय परीक्षा में उत्तीर्ण होकर वह उन सभी के लिए प्रेरणास्त्रोत बन गयी है, जो परिस्थितियों का रोना रोते रहते हैं। गंगा पोटाई भी एक ऐसा ही अनुकरणीय व्यक्तित्व है जो लखनऊ नर्सिंग कॉलेज में अध्ययन कर, प्रोफेसर के पद पर पदस्थ है।

गीत-संगीत सदैव ही इनके जीवन का अभिन्न अंग रहा है। मॉदल की ताल पर थिरकते पैर तथा एक सुर में लोकगीतों का गायन कानों में मिश्री घोल देता है। अभावों के बीच आनन्द की अभिव्यक्ति जहाँ संस्कृति के संरक्षण का माध्यम बनती है, वहीं सम्पूर्ण समाज को एकसूत्र में पिरोकर रखती है। यही कारण है कि अनेक बालक-बालिकाएँ इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय से गायन व वादन का विधिवत् प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। जगदेव नेताम तबला वादन में इंदिरा कला विश्वविद्यालय में प्रोफेसर तथा टीवसिंह केन्द्रीय विद्यालय में संगीत शिक्षक के रूप में अपने विद्यार्थियों को प्रशिक्षित कर रहे हैं। संगीत के क्षेत्र में आदिवासी बालक-बालिकाएँ अप्रतिम उपलब्धियाँ अर्जित कर रहे हैं।

खेल बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। उसी प्रवृत्ति को दिशा देकर व्यक्तित्व विकास तथा आजीविका का साधन बनाने की दृष्टि से रामकृष्ण मिशन आश्रम, नारायणपुर में फुटबाल, बॉलीबॉल, बास्केटबाल, खो-खो, बैडमिन्टन, एथेलेटिक्स की विभिन्न विधाओं का बाल्यकाल से ही प्रशिक्षण दिया जाता है। यही कारण है कि प्रतिवर्ष राज्य व राष्ट्रीय स्तर के खेलों में ४००-५०० खिलाड़ी भाग लेकर जिले व राज्य की प्रतिष्ठा में श्रीवृद्धि करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सुब्रतो कप फुटबाल प्रतियोगिता में विगत कई वर्षों से U-१४ व U-१७ की टीम छत्तीसगढ़ का प्रतिनिधित्व करती आ रही है। अबूझमाड़ के 'कसावाही' ग्राम के सुरेश ध्रुव ने U-१८ में भारतीय फुटबाल टीम में सम्मिलित होकर अपना लोहा मानवाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है। उन्होंने ४६वें एशियन फुटबाल चैम्पियनशिप आगरा में भी हिस्सा लिया है। North East United Football Championship तथा Kerala - United Football Championship में सुरेश ध्रुव ने अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया है।

रामकृष्ण मठ-मिशन की अन्य सभी संस्थाएँ यद्यपि बृहद् पैमाने पर कार्य कर रही हैं, किन्तु वे किसी एक निर्धारित दिशा में सम्पूर्णता के लिए प्रयत्नशील हैं। वहीं रामकृष्ण मिशन आश्रम नारायणपुर एकमात्र ऐसी संस्था है, जो शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि और अध्यात्म के माध्यम से समग्रता को समेटने का प्रयास कर रही है। इसकी गरिमा, प्रतिष्ठा, प्रगति व प्रसिद्धि के पीछे हृदय की वही पवित्रता विद्यमान है, जो मनुष्य को आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करती है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि 'शिवज्ञान से जीवसेवा' कर सल्फी व महुए के नशे में शून्य बाल-मन को संस्कारों के अमृत से पोषित कर लड़खड़ाते कदमों को ऐसी सबलता प्रदान की गयी है कि वे विकास की दौड़ में अपनी भागीदारी सुनिश्चत कर सकें तथा मस्तिष्क को अनमोल विचारों का ऐसा खजाना दिया गया कि जीवन के अभावों को दूर किया जा सके। समष्टि रूप में बेमोल पड़े रत्नों को कुशल शिल्पियों के द्वारा इतनी सुन्दरता और कुशलता से तराशा गया कि वे अनमोल हो गये। ○○○

माँ मुझे मनुष्य बना दो

स्वामी अलोकानन्द

रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

मनुष्य सम्पूर्ण प्राणी-जगत में सर्वश्रेष्ठ है। शेष सभी प्राणी प्रकृति के वश में होकर ही चलते हैं, किन्तु स्वतन्त्र रूप से बुद्धि-विचार-विवेक के सहयोग से नहीं। इसीलिए मनुष्य केवल हस्तपादादिविशिष्ट जीवमात्र नहीं है। उसमें थोड़ा विवेक या विचारबोध होना चाहिए। नीतिशास्त्र में कहा गया है –

आहार-निद्रा-भय-मैथुनं च
सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषोः
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः।।

अर्थात् आहार, निद्रा, भय और मैथुन, ये तो मानव और पशु में समान हैं। मानव में विशेष केवल धर्म है, अर्थात् बिना धर्म के लोग पशुतुल्य हैं।

यहाँ धर्म शब्द का अर्थ विवेक-बोध या विचार-शक्ति ही है। इसी विवेक-बोध के प्रयोग से मनुष्य देवता बनता है। तभी तो स्वामीजी ने धर्म को परिभाषित करते हुए कहा है – ''धर्म का वास्तविक कार्य मनुष्य के अन्तर्निहित देवत्व का विकास करना है।'' उन्होंने शिक्षा को परिभाषित करते हुए कहा है – ''शिक्षा मनुष्य के अन्तर्निहित पूर्णता के विकास का साधन है।'' 'देवत्व' व 'पूर्णत्व' में विशेष भेद नहीं है। 'देवत्व' मनुष्य की अन्तर्निहित सत्ता है। क्योंकि स्वामीजी ने अन्यत्र कहा है – 'प्रत्येक जीव ही अव्यक्त ब्रह्म है।' इसीलिए सभी मनुष्यों में देवत्व अथवा ब्रह्मत्व अथवा पूर्णत्व अव्यक्त

रूप से अर्थात् अप्रकाशित रूप से पूर्व से ही विद्यमान है। इसका विकास ही मानव जीवन की समग्र साधना है। इसी साधना के द्वारा यथार्थ मनुष्य हुआ जा सकता है। ऐसे ही मनुष्य होने के लिए प्राथमिक स्तर है – विद्यार्थी जीवन। इसी जीवन-काल में यथार्थ शिक्षा प्राप्त होने से उसी नींव के ऊपर मनुष्य रूपी भवन दीर्घकाल अवस्थान करेगा।

विद्यार्थी जीवन मानव जीवन का एक मूल्यवान अध्याय है। विद्यार्थी एक सद्यः प्रशपात्र जैसा है, जिस पर कोई भी छाप या संस्कार प्रारम्भ में नहीं रहता। उसे जो भी संस्कार दिया जाय, उसी की छाप उसके जीवन में अंकित हो जाती है। नीतिशास्त्र में कहा गया है –

यन्नवे भाजने लग्नः, संस्कारो नान्यथा भवेत्।
कथाच्छलेन बालानां नीतिस्तदिह कथ्यते।।

– अर्थात् जैसे मिट्टी के कच्चे पात्र में बने चित्र, रेखाएँ आदि कलात्मक संस्कार उसके पकाए जाने पर नहीं मिटते, वैसे ही कोमल बुद्धिवाले बालकों के मन से अनेक कथाओं के बहाने सुनाए गए नीतिवचन नहीं मिटते। इसीलिये माता-पिता और शिक्षकों के अनेक दायित्व होते हैं। इस नींव के निर्माण में माता-पिता ही प्रथम अधिकारी हैं एवं इसके बाद ही शिक्षकों की वास्तविक भूमिका आती है। इसी के द्वारा शिक्षा एक विद्यार्थी को आदर्श मनुष्य में परिणत कर सकती है।

वर्तमान जगत सभ्यता में अग्रगति से विकास कर रहा है, शिक्षा सुलभ हो रही है। सीधे तौर पर कहें तो कैरियर बनाने की शिक्षा काफी आगे निकल चुकी है, किन्तु वह हमलोगों की क्षति ही कर रही है। विद्यार्थी अब कैरियर प्रार्थी हो गये हैं, "Man-making" आज "Money-making" हो गयी है तथा "Career-building" ही शिक्षा का मूल उद्देश्य रह गया है। जिसके फलस्वरूप शिक्षा के द्वारा अन्तर्निहित पूर्णत्व या देवत्व का विकास ही नहीं हो पा रहा है। इस प्रकार की

शिक्षा के द्वारा आसुरी प्रवृत्तिसम्पन्न मानव की सृष्टि हो रही है, जहाँ केवल स्वार्थपरता, हिंसा, द्वेष आदि दिखाई देते हैं।

स्वामीजी ने कहा था, ''हमें ऐसी शिक्षा चाहिए, जिससे चरित्र का निर्माण हो, मानसिक-बल में वृद्धि, बुद्धि का विकास हो और व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो सके। शिक्षा केवल कुछ तथ्यों का संग्रह मात्र नहीं है, जिसे तुम्हारे मस्तिष्क में भर दी जाये और वह समग्र जीवन तुम्हारे मध्य गड़बड़ी करती रहे। हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है, जो जीवन-गठन, मनुष्य तथा चरित्र-निर्माण में सहायक हो।''

शिक्षकों का जिस प्रकार दायित्व है, ठीक उसी प्रकार विद्यार्थियों के भी कुछ कर्तव्य हैं। प्राचीन काल में गुरुकुल में विद्यार्थियों के लिए प्रयोजनीय जितने भी सद्गुण हैं, वे हैं **'शान्त दान्त विनीत'** अर्थात् संयत-इन्द्रिय व विनम्र। नीतिशास्त्र में भी कहा गया है – '**विनयाद् याति पात्रताम्**' – जिस व्यक्ति के पास विनय है, वही योग्य अधिकारी है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने कहा है – '**श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्**' अर्थात् श्रद्धावान व्यक्ति ही ज्ञान अर्जन करने में सक्षम है। प्राचीन काल में नचिकेता, महाभारत में एकलव्य, ऐतिहासिक युग में महाराणा प्रताप, शिवाजी, रानी लक्ष्मीबाई, स्वामी विवेकानन्द, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, आधुनिक काल में जमशेदजी टाटा, किरण बेदी, नील आर्मस्ट्रांग, ब्लैक हॉल के आविष्कारक स्टीफन हॉकिंग, डॉ. अब्दुल कलाम जैसे महान व्यक्ति आत्मविश्वास व श्रद्धा के बल पर ही महान बने। तभी तो समस्यापीड़ित युवकों के लिए वे प्रेरणापुरुष हैं। हमारे उपनिषद भी पूर्वाचार्यों का अनुसरण करने को सिखाते हैं। इसलिए इन्हें अपने आदर्शानुसार ग्रहण करने से अनेकों समस्याओं का समाधान मिल जाता है।

नवयुवकों के लिए स्वामी विवेकानन्द एक आदर्श हैं। स्वाधीनता के पूर्व उनकी वाणी से प्रेरित होकर युवकों ने भारत माता की मुक्ति-साधना में सहर्ष आत्मनिवेदन किया था। उनकी वे प्रेरणा थे। आज भी वे हमारे आदर्श बनकर बोल रहे हैं – ''**तुम सब कुछ कर सकते हो। तुम्हारे अन्दर अनन्तशक्ति विद्यमान है। तुम्हारे ऊपर मेरा विश्वास है। तुमलोगों के बीच से ही मेरे कर्मठ युवा आयेंगे। वो लोग सिंह की भाँति सभी समस्याओं का समाधान करेंगे। अपने ऊपर असीम विश्वास रखो। विश्वास, विश्वास, विश्वास, अपने ऊपर विश्वास, ईश्वर के ऊपर विश्वास, यही महानता का रहस्य है।**''

बहु व्यक्तियों की प्रत्याशा के मध्य एक लक्ष्य निरूपण करना होगा। वह लक्ष्य ख्याली पुलाव पकाना नहीं होगा, अपितु अपनी सामर्थ्य के अनुसार होगा। लक्ष्य पूर्ति के लिए एक परिकल्पना की आवश्यकता है। परिकल्पना के बिना कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। केवल लक्ष्य व परिकल्पना करने से भी नहीं होता। उसे कार्यान्वित करने के लिए प्रचेष्टा करनी होती है। इसके लिए कठिन परिश्रम की आवश्यकता है। आर्थिक दरिद्रता हमारे मार्ग की बाधा नहीं, वरन् मानसिक दरिद्रता ही बाधा बन कर खड़ी रहती है। इसीलिए आत्मविश्वास बनाये रखना होगा। महान व्यक्तियों ने भी इन बाधाओं का डटकर सामना किया था और कठोर परिश्रम भी। स्वामीजी ने कहा है – "Struggle is life, Expansion is life." – संघर्ष ही जीवन है, विस्तार ही जीवन है। इसीलिये संघर्ष की आवश्यकता है, मन के प्रसारण की आवश्यकता है। सभी सफलताओं का यही रहस्य है।

स्वामीजी के निजी जीवन में भी कई बाधायें आईं। दरिद्रता एक बार उनके समक्ष कराल रूप लेकर खड़ी थी। पारिवारिक समस्या, सामाजिक प्रतिबन्धता, राष्ट्रीय पतन, देशवासियों की दीनता, किन्तु ये सब भी स्वामीजी को हिला न पाये। ये सभी समस्याएँ और प्रतिबंधता जैसे आयी थीं, वैसे ही उनसे उत्तर लेकर चली गयीं। ठीक उसी समय उन्होंने सामाजिक दृढ़ता का अर्जन किया। सुदूर अमेरिका में अकेले पराधीन भारतवासी निसम्बल संन्यासी ने पैकिंग बॉक्स में रात्रियापन किया था, क्रिश्चियन मिशनरी द्वारा उपेक्षित हुये थे। धर्ममहासभा में प्रवेश हेतु उन्हें अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ा था, किन्तु एक उद्देश्य को रख कर वे वहाँ गये थे। एक मात्र लक्ष्य था भारत की सनातन सभ्यता को विश्व पटल पर उद्भासित कर महिमामंडित करना। वे जानते थे कि कठिनाइयाँ व संघर्ष, सफलता के द्वार खोलतीं हैं। उन्होंने कहा है – ''बन्दूक से निकली गोली जब दीवार पर लगती है, तब अग्नि का विस्फोट होता है।'' इस दृष्टान्त को उन्होंने जीवन में क्रियान्वित किया। दूसरों को नीचा दिखा कर नहीं, अपितु सभी के प्रति प्रेम व आदर के भाव को प्रसारित करते हुए उनके कण्ठ से प्रथम वाक्य – "Sisters and brothers of America" – अमेरिका के बहनो और भाइयो। उनके मुख से ये शब्द निकलते ही विजयमाला उनके गले में पड़

शेष भाग पृष्ठ ११२ पर

युवावर्ग व सोशल मीडिया की आदत

उत्कर्ष चौबे

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

स्वामी विवेकानन्द का मानना था कि युवा देश की नींव होते हैं और वे किसी भी राष्ट्र के लिए एक बड़ी सम्पदा हैं, क्योंकि उनमें ऊर्जा, उत्साह और नवीन विचारों का स्रोत होता है। युवा वर्ग यदि अपनी ऊर्जा को सही दिशा में लगाने का कार्य करे, तो वह देश को प्रगति के पथ पर ले जा सकता है। किन्तु हम सभी जानते हैं कि आज युवाओं की व्याकुलता का मुख्य कारण सेल फोन है। सेल फोन तथा उनमें प्रयुक्त इन्टरनेट पर उपलब्ध विविध सोशल मीडिया ऐप वर्तमान युवा पीढ़ी का ध्यान भटकाने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। यद्यपि कोई इसका सही व सीमित रूप में व्यवहार करेगा, तो साधारणत: समस्या नहीं होगी, किन्तु यदि कोई इसका अत्यधिक व गलत प्रयोग करेगा, तो अन्य समस्याओं के साथ-साथ बहुत अधिक ध्यान भी भटकेगा।

सोशल मीडिया आवश्यक के साथ-साथ बहुत-सा अनावश्यक जानकारी भी देता है, जिससे युवा मन दिग्भ्रमित हो रहा है।

वर्तमान समाज सोशल मीडिया के प्रभाव से अछूता नहीं है। यह सामाजिक होने का एक अच्छा माध्यम है, तेजी से कई प्रकार की जानकारियाँ भी प्राप्त हो रही हैं, किन्तु स्वयं पर अंकुश न होने के कारण इसकी कई हानियाँ भी हैं। यह हमारे मस्तिष्क को भटकाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाता है, जिसके फलस्वरूप हमारी एकाग्रता की शक्ति बाधित होती है। ये न केवल आवश्यक जानकारी प्रदान करते हैं, अपितु अनावश्यक जानकारी भी साथ ही साथ प्रदान करते हैं। वैश्वीकरण व प्रौद्योगिकी ने हमें न केवल आर्थिक रूप से प्रगतिशील व सशक्त बनाया है, बल्कि यह आत्म-संदेह व तुलना जैसे भाव उत्पन्न करने का भी एक बड़ा स्रोत है। फलस्वरूप आज युवा अपनी तुलना अनजान लोगों से करने के पीछे भाग रहे हैं। उनकी ड्रेसिंग सोशल मीडिया के लेटेस्ट ट्रेंड के अनुसार चलती है, सोशल मीडिया के अनुसार उनकी खाने की आदत निश्चित हो रही है। उनका जीवन पूर्णरूपेण सोशल मीडिया के अनुसार चल रहा है। सोशल मीडिया ने उन्हें उनके वास्तविक जीवन से पूरी तरह से काट दिया है और उन्हें उनके आभासी (Virtual) जीवन में डाल दिया है, जिसका सबसे खतरनाक परिणाम यह हो रहा कि युवा आत्मविश्वास को खोकर हीनभावना से ग्रस्त होते जा रहे हैं।

आत्मविश्वास की बात करें, तो स्वामी विवेकानन्द ने इसे मनुष्य के अपने अन्दर निहित विश्वास और उसकी वास्तविक महिमा के रूप में परिभाषित किया है। आत्मविश्वास की कमी, सभी दुखों का मुख्य कारण है। स्वामीजी के शब्दों में मानव जाति के सम्पूर्ण इतिहास में यदि सभी महापुरुषों और महिलाओं के जीवन में कोई प्रेरक शक्ति दूसरे से अधिक शक्तिशाली रही है, तो वह स्वयं में विश्वास की है। आत्मसम्मान की कमी के साथ रहना युवाओं के मानसिक स्वास्थ्य को विशेष रूप से हानि पहुँचा सकता है और अवसाद व चिन्ता जैसी समस्याओं को जन्म दे सकता है, जिसका सीधा दुष्प्रभाव उनके कैरियर-निर्माण पर पड़ता है। वे अक्सर अपने आप को अक्षम, अपर्याप्त अनुभव करने लगते हैं।

स्मार्ट फोन का दुष्प्रयोग अनिद्रा, आलस्य और नकारात्मकता का जनक है।

सैंट पिट्रसबर्ग विश्वविद्यालय के शोधकत्ताओं द्वारा सन् २०१७ में जारी एक अध्ययन के अनुसार सोशल मीडिया के उपयोग का सीधा प्रभाव नींद की गड़बड़ी का मुख्य कारण था। प्रतिदिन सोशल मीडिया के उपयोग की औसत संख्या ६१ मिनट है। युवाओं की तुलना में युवतियों को अधिक नींद की समस्या होती है। आज अधिकांश युवा नींद की कमी से पीड़ित हैं, क्योंकि वे देर रात तक अथवा कभी-कभी तो रात्रि के चतुर्थ प्रहर तक अपने फोन पर समय बिताते हैं और जिसके फलस्वरूप उनकी पढ़ाई पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। दूसरे दिन वे थके हुए होते हैं और स्कूल/कॉलेज

में कक्षा के दौरान पूरे मनोयोग से अपनी पढ़ाई पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते। सन् २०११ के हुए एक अध्ययन में पाया गया कि फेसबुक पर बिताए गए समय का युवाओं के समग्र विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, लेकिन तब यह स्पष्ट नहीं हुआ था कि यह नींद की समस्या से भी सम्बन्धित है। सेलफोन में व्यवहार हो रही नीली बत्ती तेजी से एक समस्या बन गई है, इसलिए स्मार्टफोन डेवलपर्स ने एक नाइट मोड फीचर विगत कुछ सालों में जोड़ा है, जिससे आँखों पर उतना दबाव नहीं पड़ता, जितना कि नीली रोशनी में होता है।

युवा फेसबुक डिप्रेशन से बचें

सोशल मीडिया के भावनात्मक प्रभाव का अध्ययन करने वाला एक अध्ययन 'फेसबुक डिप्रेशन' काफी प्रसिद्ध है। यह एक प्रकार का अवसाद है, जो उन युवाओं को प्रभावित करता है, जो अपना अत्यधिक खाली समय सोशल मीडिया की साइटों पर बिताते हैं। इससे एकान्तवास जैसी समस्याएँ हो सकती हैं, जो युवा लोगों में अकेलेपन और आत्मसम्मान की कमी जैसी भावना उत्पन्न करके उनके मानसिक व शारीरिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। सोने से पहले सोशल मीडिया को देखने के लिए फोन का उपयोग करना आज एक सामान्य प्रवृत्ति बन गई है। जिसके कारण नींद की कमी और स्कूल/कॉलेज में कक्षा के दौरान जागते रहने में असमर्थता की मूल समस्या बन रही है। सोशल मीडिया एप्लिकेशन वहाँ उपलब्ध सामग्री को क्यूरेट करते हैं, जो उपयोगकर्त्ताओं को उस बिन्दु तक स्क्रॉल करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं, जहाँ वे समय की सीमा खो देते हैं।

ऐसे भी अध्ययन हैं, जो दिखाते हैं कि सोशल मीडिया पर सकारात्मक टिप्पणियों से बच्चों का आत्म-सम्मान सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है और नकारात्मक टिप्पणियों से आत्म-सम्मान पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह उनके उस तरीके को प्रभावित करता है जिस प्रकार लोग स्वयं को 'योग्यता' के पैमाने पर देखते हैं। लगभग ६,००० किशोर छात्रों पर सन् २०१७ में हुए एक अध्ययन से पता चला कि जिन युवाओं ने सोशल मीडिया के उपयोग के व्यसन जैसे लक्षणों को स्वयं स्वीकार किया है, उनमें आत्म-सम्मान की कमी और उच्च स्तर के अवसादग्रस्त के लक्षण पाये गये। जनसंख्या आधारित अध्ययन के निष्कर्षों से किशोरों में प्रमुख अवसाद की सम्भावना में लगभग ३७ प्रतिशत की वृद्धि विगत वर्ष में हुई है।

आज किशोरों की सबसे बड़ी व्यस्तताओं में से एक सोशल मीडिया का उपयोग है। सन् २०११ में शोधकर्त्ताओं ने ''फेसबुक डिसऑर्डर'' शब्द का प्रयोग करना शुरू किया, जो इन्टरनेट एडिक्शन डिसऑर्डर का ही एक रूप है। जिसके परिणामस्वरूप आमतौर पर शारीरिक या मनोवैज्ञानिक जटिलताएँ उत्पन्न होती हैं। हालाँकि मानसिक विकारों की नवीनतम नैदानिक और सांख्यिकी मैनुअल (डीएसएम-५) या विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा इसे वर्गीकृत नहीं किया गया है, परन्तु युवाओं के मानस-पटल पर सोशल मीडिया के उपयोग के नकारात्मक प्रभावों पर ध्यान केन्द्रित करनेवाले कई अध्ययनों का यह विषय रहा है। सन् २०१७ में प्रकाशित एक जर्मन अध्ययन ने सोशल नेटवर्किंग साइट के अत्यधिक उपयोग और संकीर्णतावाद के बीच सम्बन्ध की जाँच की, जिसका परिणाम पीएलओएस वन पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। निष्कर्षों के अनुसार एफएडी व्यक्ति विशेष में संकीर्णता और नकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य (अवसाद, चिन्ता और तनाव के लक्षण) से सकारात्मक रूप से सम्बन्धित था। यदि हम स्वयं गौर करें, तो पायेंगे कि विगत कुछ वर्षों तक हम यूट्यूब पर लम्बे-लम्बे वीडियो/फिल्म आदि देखने के अभ्यस्त थे, किन्तु आज हम शॉर्ट वीडियो, रील व फेसबुक पर छोटे-छोटे वीडियो देखना पसन्द करते हैं, क्योंकि उन्हें देखने के लिए भी हमारी एकाग्रता व धैर्य में काफी कमी आयी है। इससे हम स्वयं आकलन कर सकते कि सोशल मीडिया की लत का दुष्परिणाम हम पर कितना पड़ा है? युवाओं के आईकॉन कहे जानेवाले स्वामी विवेकानन्द ने स्पष्ट रूप से कहा था कि मनुष्यों व जानवरों के बीच मुख्य अन्तर उनकी एकाग्रता की शक्ति का है। किसी भी कार्य में सफलता इसी का परिणाम है। उच्च उपलब्धियाँ एकाग्रता का ही परिणाम है। आज सोशल मीडिया के अत्यधिक प्रयोग के कारण हम अपने दिमाग को एक समय में किसी भी चीज पर अधिक समय तक केन्द्रित नहीं कर पा रहे हैं। वस्तुत: कहीं न कहीं सोशल मीडिया का अत्यधिक प्रयोग हममें भी पाशविकता

शेष भाग पृष्ठ ११२ पर

युवकों के प्रश्न और स्वामी सत्यरूपानन्द जी के उत्तर

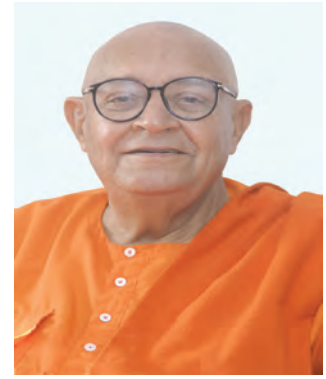

व्यक्तित्व निर्माण कैसे किया जा सकता है? – अंकुर जायसवाल, शिशुमन्दिर, अंबिकापुर

उत्तर – व्यक्ति-निर्माण का मूल आधार है पूर्ण स्वाधीनता। मनुष्य जब पूर्णत: अन्तर एवं बाह्य प्रकृतियों की दासता से मुक्त होकर अपनी उन्नति के लिये उनका सदुपयोग करता है, तभी वह वास्तव में पूर्ण मनुष्यत्व को उपलब्ध होता है। यही व्यक्तित्व का चरम विकास कहा जाता है।

सामाजिक व्यवस्था में स्वामी विवेकानन्द ने क्या सुधार किया, जिसका दूरगामी परिणाम आज दिखाई दे रहा है? – अवधेश शर्मा, अम्बिकापुर

उत्तर – यह प्रश्न ही अपूर्ण एवं उथला है। सामाजिक व्यवस्था बहुआयामी होती है, उसमें अच्छे-बुरे दोनों आयाम सम्मिलित होते हैं, सामान्य स्थिति में समाज के दोषपूर्ण एवं अनुचित आयामों को दूर कर व्यक्तित्व के परम विकास की ओर ले जाने वाले आयामों एवं कार्यों को करने पर ही व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास होता है।

उपरोक्त विचार समाज के चरम विकास के मूल तत्त्व हैं। स्वामी विवेकानन्द ने नैतिकता एवं धर्म को भी समाज के समुचित एवं पूर्ण विकास के लिए आवश्यक तत्त्व माना है।

समाज अपने प्रत्येक सदस्य (स्त्री-पुरुष) की क्षमता के अनुसार अपने व्यक्तिगत जीवन के विकास का ऐसा अवसर प्रदान करे, जो दूसरे व्यक्ति के हित का हनन किसी भी रूप में न करता हो।

व्यक्ति और समाज की व्यवस्था उनके विचारों द्वारा होती है। स्वामीजी ने एक अत्यन्त श्रेष्ठ, सन्तुलित एवं व्यावहारिक विचार हम सबको समाज के सर्वांगीण विकास के लिये दिया है।

विवेक को सक्रिय रखकर दैनिक जीवन में अपने व्यक्तित्व को ऊर्जा से परिपूर्ण कैसे रखें, जिससे आलस्य न हो? दीपेश देवांगन, चाम्पा

उत्तर – विवेक को सक्रिय रखने पर ही हमारा व्यक्तित्व ऊर्जा से परिपूर्ण हो सकता है। विवेक के शिथिल होने पर सर्वांगीण व्यक्तित्व विघटित और ऊर्जाहीन हो जाता है। अत: सदा विवेक को जाग्रत रखें।

हम ऐसा क्या कार्य करें, जिससे हमें लोग याद रखें और आदर से नाम लें? धनेश्वर, चाँपा

उत्तर – शुद्ध, पवित्र और नि:स्वार्थ जीवन के द्वारा सेवा करते हुए हम दीर्घकाल तक स्मरण किए जाएँगे।

भ्रष्टाचार से कैसे बचें? धनेश्वर साहू

उत्तर – भ्रष्टाचार व्यक्ति में होता है। व्यक्तियों का समूह ही समाज कहलाता है। अत: जिस समाज में बड़ी संख्या में शिष्टाचार सम्पन्न तथा नि:स्वार्थ सेवाभावी लोग होंगे, तभी भ्रष्टाचार दूर हो सकेगा। इसका कोई लघु मार्ग - शार्ट-कट नहीं है।

सकारात्मक सोच को कैसे बनाए रखें? राजा साहू, बिलासपुर

उत्तर – अन्धकार को दूर करने के लिए हमें प्रकाश की व्यवस्था करनी चाहिए। उसी प्रकार सकारात्मक सोच को बनाए रखने के लिए नकारात्मक सोच को यथाशीघ्र त्यागना चाहिए। इससे हमारा सकारात्मक भाव सदा बना रहेगा।

मैं पढ़ना चाहता हूँ, लेकिन पढ़ने के बाद भूल जाता हूँ, क्या करूँ। – राजू साहू, ललित देवांगन, हरिशंकर साहू, बिलासपुर, चन्द्रसहायक साहू, चाँपा।

उत्तर – स्मृति शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न होती है। विद्वानों का मत है कि यह शक्ति जन्मजात हर व्यक्ति में भिन्न-भिन्न मात्रा में होती है। कोई व्यक्ति अपनी रुचि के विषय को ध्यानपूर्वक २ या ३ बार पढ़ करके स्मरण कर लेता है। एक दूसरा व्यक्ति उसी विषय को ५ से १० बार ध्यानपूर्वक पढ़कर तब कहीं उसे स्मरण कर पाता है। स्मरणशक्ति का घनिष्ट सम्बन्ध एकाग्रतापूर्वक पढ़ने तथा लिखने पर निर्भर करता है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात है। स्मरणशक्ति का सम्बन्ध अपनी रुचि के विषय से सम्बन्धित है। जिस विषय में हमारी रुचि

है, उस विषय को हम तुलनात्मक दृष्टि से २-४ बार ही पढ़ तथा लिखकर लम्बे समय तक स्मरण रख सकते हैं। इससे भी एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जिस विषय पर हम अधिकार करना चाहते हैं, उसके विषय में हमें पढ़कर सोचना चाहिए तथा उसे विभिन्न बिन्दुओं में विभाजित कर लेना चाहिए एवं अपनी भाषा में लिखकर यह देखना चाहिए कि विषय के मूल तत्त्वों को क्रमानुसार हमने समझ लिया है या नहीं। इस प्रकार का अध्ययन उस विषय पर हमें अधिकृत ज्ञान दे देगा तथा हम उसे लम्बे समय तक स्मरण में रख सकेंगे।

अपने लक्ष्य के प्रति निरन्तर अडिग कैसे रहें? – संजीव जंघेल, रायपुर, अता उल्ला हाशमी, अम्बिकापुर।

उत्तर – तुम्हारे प्रश्न का प्रथम तथा सही उत्तर यह है कि तुम अपने प्रश्न के विषय में स्वयं पहले स्पष्ट हो जाओ तथा यह जानना चाहो कि तुम चाहते क्या हो? जब तक तुम अपने लक्ष्य के विषय में स्पष्ट नहीं हो जाओगे, यथा – 'तुम क्या चाहते हो? क्यों चाहते हो? यह स्पष्ट रूप से नहीं जान पाओगे, तब तक वह विषय एक रटन्त विद्या होकर रह जाएगा तथा आवश्यकता के समय तुम्हारे काम नहीं आएगा।

लक्ष्य को ठीक-ठीक समझे बिना तथा उसके महत्त्व को जाने बिना हम लक्ष्य को रटकर अधिक समय तक स्मृति में नहीं रख पाएगें, इसलिए लक्ष्य के विषय में सविस्तार जान लो, फिर अपनी भाषा में उसे लिख लो और तब वह लक्ष्य तुम्हारी स्मृति में लम्बे समय तक बना रहेगा। ○○○

पृष्ठ ११० का शेष भाग

का उदय कर रहा है। किशोरों में हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ जाग रही हैं।

सोशल मीडिया आज के युग की आवश्यकता है, किन्तु इसका विवेकपूर्ण उपयोग करें

स्वामीजी के अनुसार ''हमारा मन अलग-अलग वस्तुओं में आकर्षण के कारण अस्थिर हो जाता है, जिसका हम विरोध नहीं कर पाते।'' जबकि आदर्श रूप से जो होना चाहिए वह यह है – ''हमें अपना मस्तिष्क वस्तुओं पर लगाना चाहिए, किन्तु वे हमारे मन को अपनी ओर न खीचें।'' यही मन पर अधिकार करने की कुंजी है। वस्तुत: इस संसार में कोई भी वस्तु खराब नहीं होती, खराब तो उन्हें उपभोग करने का तरीका होता है। सोशल मीडिया आज के युग की आवश्यकता है, इसके सकारात्मक पक्ष भी हैं, किन्तु हमें सदैव इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि इसका कैसे सदुपयोग हो। कब और कितना उपयोग करना उचित है, यही विवेक जागृत रखकर यदि हम इसका उपयोग करें, तो हम बड़ी ही सरलता से इस संसार उपवन में लगे सोशल मीडिया रूपी गुलाब के पौधे के काँटों से बचते हुए सफलता रूपी गुलाब के पुष्पों को तोड़ सकते हैं, जो हमारे जीवन को अपनी मन्द सुगन्ध से भर देगी, क्योंकि कहा गया है –

कोई न बिल्कुल अच्छा होता, गुण अवगुण सबमें होता है।
है गुलाब फूलों का राजा, पर काँटा उसमें भी होता है।। ○○○

पृष्ठ १०८ का शेष भाग

गयी और वे अपने सार्थक लक्ष्य तक पहुँच गये।

स्वामीजी का जीवन व वाणी समान था – जैसे मन व मुख एक। वे आदर्श शिक्षक, 'श्रोत्रिय: अवृजिन: अकामहत:' शास्त्रमर्मज्ञ, निष्पाप, निष्काम आचार्य थे। इसलिए स्वामीजी को जीवन का आदर्श बनायें। उनकी वाणी में श्रद्धा रखकर यदि हम मनुष्य होने की साधना करते हैं, तभी हमारा जीवन सार्थक होगा। दैनन्दिन जीवन के लिए अर्थ की आवश्यकता नहीं है, ऐसा नहीं है, किन्तु अर्थ ही सबकुछ है, ऐसा कदापि नहीं है। इन्जीनियर, डॉक्टर, वकील, गवेषक आदि सब कुछ ही हम बन सकते हैं, किन्तु सर्वप्रथम हमें विवेकसम्पन्न मनुष्य बनना होगा। स्वामीजी इसीलिये हम सभी के कल्याणार्थ प्रार्थना करते हैं – ''हे गौरीनाथ, हे जगदम्बे, हमें मनुष्यत्व दो; माँ हमारी दुर्बलता व कापुरुषता दूर कर दो, हमें मनुष्य बना दो। युवाओं को सदैव स्मरण रखना चाहिए स्वामीजी का प्रेरणादायक आह्वान – ''उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्ति तक रुको मत।'' – "Arise, awake and stop not till the goal is achieved". ○○○

अथ युवा-जिज्ञासा

स्वामी निखिलेश्वरानन्द

अध्यक्ष, रामकृष्ण मठ, राजकोट

प्रश्न – जब मन में परम अवसाद आ जाए, तब हम क्या करें? कु. लता मिश्र, एडम्स गर्ल्स इन्टर कॉलेज, अलमोड़ा की छात्रा

उत्तर – ऐसी मानसिक अवस्था में तुम्हें तुरन्त किसी ऐसे व्यक्ति के निकट जाना चाहिए, जिसके लिए तुम्हें परम आदर और प्रेम हो तथा उन्हें अपने अन्तर्मन की भावनाओं और समस्याओं को कहकर अपने को हल्का कर लेना चाहिए। हम लोगों ने कई मामलों में देखा है कि मात्र मन को हल्का कर लेने से आधी समस्या का समाधान हो जाता है। यदि ऐसा कोई व्यक्ति तत्काल उपलब्ध नहीं हो, तो सभी जीवों में निवास करनेवाले प्रभु की तुम गहन प्रार्थना कर सकती हो। अपने मन को सकारात्मक विचारों से भर लो। कभी-कभी किसी प्रेरक ग्रन्थों का अध्ययन भी जादू के समान काम कर जाता है। तुम्हें संशयरहित करने के लिए मैं कुछ उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ।

एक युवक मन-ही-मन बहुत खिन्न और उदास था। भारत-पाकिस्तान युद्ध में उसके सभी साथी मारे जा चुके थे और जिस जीप को वह चला रहा था, उस पर पाकिस्तानी वायुयान ने बम गिरा दिया था। रात में दिल्ली रेलवे स्टेशन पर वह चलती गाड़ी में कूद कर आत्महत्या कर लेने की बात सोच रहा था, क्योंकि अब उसके लिये जीवन का कोई अर्थ नहीं रह गया था। किसी प्रकार उस रात वह नहीं मरा। दूसरे दिन सुबह-सुबह जब वह अखबार लाने गया, अचानक स्वामी विवेकानन्द की किसी पुस्तक पर उसकी दृष्टि पड़ी। उस पुस्तक की कुछ पंक्तियों को ही पढ़ने पर उसे नया जीवन मिल गया। उसने जीवन का अर्थ, जीवन का प्रयोजन – दूसरों को प्रेम करना, दूसरों की सेवा करना – पा लिया। उसने सेना की सेवा से अवकाश ग्रहण कर लिया। वह महाराष्ट्र में स्थित रालेगाँव सिद्धि नामक अपने गाँव में वापस आ गया। अनेक विपरीत परिस्थितियों में कई सेवामूलक कार्यक्रम आरम्भ कर दिया। धीरे-धीरे वह गाँव पूरी तरह बदल गया। उसकी आश्चर्यजनक उपलब्धियों से प्रभावित होकर, उसे अब महाराष्ट्र के १०० गाँवों को विकसित करने का दायित्व प्रदान कर दिया गया है। उस व्यक्ति का नाम है – अन्ना हजारे।

एन.सी.सी का एक मेजर घोर मानसिक उदासी की अवस्था में था, यहाँ तक कि वह बार-बार कहता था – ''मैं अपने आपको गोली मार दूँगा।'' सम्भवत: उसका वैवाहिक जीवन दुखी था। उसके वरिष्ठ पदाधिकारी – एन.सी.सी. के एक कर्नल ने तिरुअनन्तपुरम् (केरल) के रामकृष्ण मिशन के एक साधु से यह बात बतायी। उन्होंने उस अफसर को अपने अधीनस्थ अफसर को 'श्रीरामकृष्ण-वचनामृत' की एक प्रति भेंट में देने का परामर्श दिया और उससे यह संवाद कह देने को कहा कि इस पुस्तक को पढ़ने के बाद उसकी जैसी इच्छा हो, वैसा करे। कुछ महीनों के बाद उस कर्नल ने रामकृष्ण मिशन के साधु को कहा कि 'वचनामृत' ने उसके अधीनस्थ अधिकारी का जीवन बचा लिया है। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद उसके अधीनस्थ पदाधिकारी ने उससे कहा था, 'भगवान के लिये मैं आत्महत्या जैसा महापाप नहीं करने जा रहा हूँ।''

इस तरह अनेक लोगों ने सकारात्मक चिन्तन के द्वारा, प्रेरक पुस्तकों के अध्ययन के द्वारा अपनी खिन्न मानसिक अवस्था और अवसाद पर विजय प्राप्त कर ली है।

प्रश्न – ध्यान करना क्या स्वार्थपरायणता नहीं है? इससे संसार की क्या भलाई होती है?

उत्तर – अरे, तुम तो श्रीरामकृष्ण की भाँति बातें कर रहो हो। जब स्वामी विवेकानन्द ने शुकदेव की भाँति दिन-रात गहन ध्यान में डूबे रहने की इच्छा प्रकट की, तब श्रीरामकृष्ण ने लाखों तापित लोगों के दुखों को भूलकर अपनी स्वयं की मुक्ति और ध्यान के आनन्द की खोज के लिए उन्हें फटकारा। उन्होंने स्वामीजी को पूजा के भाव से

दुखी प्राणियों की सेवा करने तथा प्रत्येक मनुष्य को ईश्वर के प्रकाश के रूप में देखने का परामर्श दिया। श्रीरामकृष्ण ने स्वामीजी को स्मरण दिलाया कि समाधि से भी एक ऊँची अवस्था होती है। उस अवस्था में मनुष्य सम्पूर्ण विश्व को दैवी प्रकाश के रूप में देखता है, जैसाकि सूफी कवि जफर के गीत में सुन्दर ढंग से व्यक्त किया गया है –

तुम से हमने दिल को लगाया, जो कुछ है सो तू ही है।
एक तुझको अपना पाया, जो कुछ है सो तू ही है।।

लेकिन अपना कर्म पूजा भाव से करना आसान नहीं है। इसलिये कर्म के साथ-साथ थोड़ा ध्यान, कम-से-कम दिन में दो बार करना ही चाहिए। अनेक लोग अन्य लोगों की भलाई करने लगते हैं। किन्तु इसमें 'वास्तविक भलाई' की अपेक्षा 'लगे रहने' का भाव ही अधिक रहता है। जो लोग ध्यान करते हैं, वे उनलोगों की अपेक्षा समाज की अधिक भलाई करते हैं, जो अपने अहं को सन्तुष्ट करने, अपना विज्ञापन करने की वास्तविक इच्छा को छिपाते हुए अपने लोकोपकारी कार्यों द्वारा दूसरों की भलाई करने का दावा करते हैं। जो अच्छी तरह ध्यान करते हैं, वे सशक्त आध्यात्मिक स्पन्दनों की सृष्टि करते हैं, जो अनेक लोगों के जीवन को रूपान्तरित करते हैं। ऐसे व्यक्तियों की केवल उपस्थिति ही हमारे मन के लिए वरदान सिद्ध होती है।

इसीलिए हमें उन सत्पुरुषों की निन्दा नहीं करनी चाहिए, जो ऐकान्तिक रूप से ध्यान करते हैं और न ही उन लोगों की निन्दा करनी चाहिए, जो दूसरों की नि:स्वार्थ भाव से सेवा करते हैं। तथापि हम में से अधिकांश लोगों के लिए अपने दैनिक कार्यों में कर्म और ध्यान का सुन्दर समन्वय करना, यही प्रशंसनीय है।

प्रश्न – हमें ध्यान कैसे करना चाहिए? कु. विमला रावगी, कुमाऊँ विश्वविद्यालय, अलमोड़ा

उत्तर – ध्यान की कई प्रणालियाँ हैं। जैसे – विपश्यना, पश्यना, जेन ध्यान, अनुभवातीत ध्यान, वेदान्ती ध्यान आदि। तुम अपने पसन्द के अनुरूप कोई पद्धति अपना सकती हो। लेकिन यह बात महत्त्वपूर्ण है कि तुम्हें किसी सुयोग्य गुरु से स्वयं ध्यान की पद्धति सीखनी चाहिए। तुम लोगों में से जिन लोगों को ऐसे गुरु नहीं मिल पाये हैं, उन्हें मैं ध्यान का सरल तरीका सुझा सकता हूँ।

पहले ध्यान का स्थान चुन लो, चाहे वह स्थान मन्दिर हो या तुम्हारे घर का एक स्वच्छ कोना। किसी भी सुखद आसन में बैठ जाओ, केवल इतना ध्यान रहे कि मेरुदण्ड सीधा तना हो। आँखे बन्द कर लो और पहले विश्व के मंगल के लिये प्रार्थना करो। फिर बुद्ध, ईसा मसीह या श्रीरामकृष्ण जैसे किसी पवित्र सत्पुरुष का, जो तुम्हें प्रिय लगे, अपने हृदय के केन्द्र स्थल में मानस-दर्शन करने की चेष्टा करो। यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो अपनी आँखें मूँदने के पहले थोड़ी देर तक ऐसे पवित्र व्यक्ति के चित्र को अपनी खुली आँखों से देख सकती हो। इस प्रकार नियमित रूप से दिन में दो बार विशेषकर उषाकाल और सन्ध्या काल में १० से १५ मिनटों तक अभ्यास करो। तुम्हें मानसिक शान्ति मिलेगी और चित्त को एकाग्र करने की तुम्हारी शक्ति भी बढ़ेगी। ○○○

कृतज्ञता ज्ञापन

'विवेक ज्योति' के इस 'युवा विशेषांक' में बहुत-से संन्यासियों ने हमलोगों के आग्रह पर अपने आलेख लिखकर प्रेषित किये, इसके लिये हम सभी साधुओं के प्रति प्रणाम सहित कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। इसमें बहुत से प्रोफेसरों, शोध छात्रों ने अपनी परीक्षावधि और अन्य आवश्यक शासकीय कार्यों की बहुलता में भी हमें अपने आलेख प्रेषित किये, कई लेखों के बंगला और अंग्रेजी से अनुवाद करने के लिये हम स्वामी मंगलप्रदानन्द, बेलूड़ मठ, उत्कर्ष चौबे, वाराणसी, बोशोबी शील, आनन्द बत्ता, रायपुर, प्रूफ-रीडींग में डॉ. सत्येन्दु शर्मा, रायपुर, टाइपिंग में हेमचन्द बिसेन और सम्पादकीय कार्यालय के दुर्गेश ताम्रकार जी, मुद्रण में युगबोध डिजिटल प्रिन्ट्स, रायपुर के आत्मबोध अग्रवाल जी, आवरण पृष्ठ निर्माण हेतु विवेकानन्द विद्यापीठ, कोटा, रायपुर के डॉ. ओमप्रकाश वर्माजी और उनके सहयोगी डिजाइनर श्रीकान्त भतरिया जी इन सबके अमूल्य योगदान हेतु धन्यवाद देते हैं।

लेखों के संकलन में स्वामी ओजोमयानन्द, वृन्दावन, स्वामी तन्निष्ठानन्द और स्वामी गुणदानन्द, नागपुर तथा नम्रता वर्मा, बी.एच.यू, का विशेष योगदान रहा। इन सबको विवेक-ज्योति की ओर से हार्दिक धन्यवाद।

– सम्पादक

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के विभिन्न केन्द्रों द्वारा आदर्शोन्मुखी शिक्षा और युवा-कार्यक्रम से सम्बद्ध विविध कार्यक्रम आयोजित किये गये –

रामकृष्ण कुटीर, अलमोड़ा ने ३१ अगस्त, २०२२ को अलमोड़ा के मेडिकल इन्स्टिट्युशन में व्यक्तित्व विकास पर एक कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें १०० एम.बी. बी.एस. के छात्र और चिकित्सकों ने भाग लिया। उसी दिन आश्रम प्रांगण में एक प्रेरक व्याख्यान का आयोजन हुआ, जिसमें ७० स्कूल-शिक्षकों तथा अन्य ने भाग लिया।

श्रीरामकृष्ण मठ, चेन्नई ने २१ सितम्बर को विवेकानन्द कल्चरल सेन्टर में आदर्श-शिक्षा कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें इंजिनीयरिंग कालेज के ५० छात्र उपस्थित थे।

रामकृष्ण मिशन, दिल्ली ने १० अगस्त को राजस्थान के सरकारी विद्यालयों के छात्राओं को २०० एलईडी प्रोजेक्टर्स और लैपटॉप वितरित किये। आश्रम ने २७ अगस्त से २४ सितम्बर, २०२२ तक २१ ऑफलाइन और २ ऑनलाइन कार्यशालायें आयोजित कीं। इन सबमें भारत के विभिन्न भागों से १२९९ प्राचार्यों और शिक्षकों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मिशन आश्रम, कानपुर ने ४ सितम्बर, २०२२ को कानपुर आई.आई.टी. के छात्रों के लिये एक आध्यात्मिक शिविर का आयोजन किया, जिसमें २५ छात्रों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मठ, कोयलांडी ने १८ सितम्बर को शिक्षक सम्मेलन का आयोजन किया, जिसमें ३५ शिक्षक उपस्थित थे।

रामकृष्ण मठ, राजकोट ने २ से २१ सितम्बर तक आदर्श-शिक्षा पर ८ कार्यक्रम आयोजित किये, जिसमे १४४० छात्र उपस्थित थे। ८ सितम्बर को मोर्वी जिले के वानकनेर में ३ विद्यालयों में व्याख्यान आयोजित हुए, जिसमें कुल १०५३ छात्र उपस्थित थे।

रामकृष्ण मिशन आश्रम, सलेम के द्वारा ६ और २३ सितम्बर को सलेम जिले के ५ विद्यालयों में आदर्श-शिक्षा कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें कुल १२७० छात्रों ने भाग लिया।

रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन, तमलुक ने २४ जून से १६ सितम्बर, २०२२ तक पूर्व मेदिनीपुर और पश्चिम मेदिनीपुर जिले के ३४ स्कूलों में सांस्कृतिक प्रतियोगिताएँ आयोजित कीं, जिसमें कुल २५०० छात्रों ने भाग लिया। २४ सितम्बर को आश्रम प्रांगण में अन्तर्विद्यालयीय प्रतियोगिता और व्याख्यान का आयोजन हुआ, जिसमें २९० छात्रों सहित ४५० लोग उपस्थित थे।

श्रीरामकृष्ण मठ, त्रिसुर ने १२ अगस्त, २०२२ को सांस्कृतिक प्रतियोगिता आयोजित की, जिसमें केरल के विद्यालयों और महाविद्यालयों से कुल १००० छात्र उपस्थित थे।

रामकृष्ण मिशन विद्यापीठ, देवघर ने २२ से २४ सितम्बर, २०२२ तक आश्रम के शताब्दी महोत्सव का उद्घाटन कार्यक्रम आयोजित किया। महोत्सव का उद्घाटन रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन के महासचिव स्वामी सुवीरानन्द जी महाराज ने किया। इस त्रिदिवसीय कार्यक्रम में एक सार्वजनिक सभा, स्वामी विवेकानन्द के अनुसार युवकों को शक्तिशाली बनाने पर एक कार्यशाला, शैक्षिक प्रदर्शनी, सांस्कृतिक कार्यक्रम, फुटबाल मैच, प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता और ड्रील कार्यक्रम आयोजित हुये। कार्यक्रम में अनेक गणमान्य व्यक्ति, उच्च अधिकारी, साधु, छात्र, अभिभावक और विद्यापीठ के पूर्व छात्रों ने भाग लिया।